दुग्ध–गंगा

2010-11

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान

मान्य विश्वविद्यालय

(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)

करनाल–132001 (हरियाणा)

भारत सरकार

Government of India

गृह मंत्रालय

Ministry of Home Affairs

राजभाषा विभाग

Department of Official Language

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, करनाल

Town Official Language Implementation Committee, Karnal

प्रशस्ति पत्र

COMMENDATION CERTIFICATE

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल ने वर्ष 2009 - 2010 के दौरान अपने कार्यक्षेत्र में राजभाषा (हिन्दी) के उल्लेखनीय प्रयोग हेतु प्रथम स्थान प्राप्त किया।

कार्यालय के श्री/श्रीमती/सुश्री श्री आर.एस. गौतम सहा.निदेशक (राजभाषा) के योगदान की विशेष प्रशंसा की जाती है।

NATIONAL DAIRY RESEARCH INSTITUTE, KARNAL has been adjudged FIRST for promoting the use of Official Language (Hindi) during the year 2009-2010

The contribution of Sh./Smt./Ms. SH. R.S. GAUTAM Asstt. Director (O.L.) is highly appreciated.

25 नवम्बर, 2010	सचिव, न.रा.का.स.	अध्यक्ष, न.रा.का.स.
25th November, 2010	Secretary, TOLIC	Chairman, TOLIC

RNI: HAR/H-4834/2009

दुग्ध–गंगा

2010–11

द्वितीय अंक

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान
मान्य विश्वविद्यालय
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
करनाल–132001 (हरियाणा)

संरक्षक एवं प्रकाशक

डा. ए.के. श्रीवास्तव
निदेशक

सलाहकार मंडल

डा. एस. एल. गोस्वामी, संयुक्त निदेशक (अनुसंधान)
डा. जी. आर. पाटिल, संयुक्त निदेशक (शैक्षिक)

प्रबंध संपादक

डा. खजान सिंह, प्रधान वैज्ञानिक, डेरी विस्तार प्रभाग

संपादक

श्री आर.एस. गौतम, उपनिदेशक (राजभाषा)

सहा. संपादक

श्रीमती कंचन चौधरी, तकनीकी अधिकारी (राजभाषा)

संपादक मंडल

डा. (श्रीमती) बिमलेश मान, प्रधान वैज्ञानिक, डेरी रसायन प्रभाग
डा. सोहनवीर सिंह, प्रधान वैज्ञानिक, डेरी.पशु शरीर क्रिया विज्ञान प्रभाग
डा. ए.के. पुनिया, प्रधान वैज्ञानिक, डेरी सूक्ष्म जीव विज्ञान प्रभाग
डा. चन्द्र दत्त, वरिष्ठ वैज्ञानिक, डेरी पशु पोषण प्रभाग
डा. एन. एस. सिरोही, पशु चिकित्सक, डेरी विस्तार प्रभाग

आधार टाईपिंग

श्रीमती मीरा रानी, वरिष्ठ लिपिक, राजभाषा एकक

फोटोग्राफी

श्री जी.डी. जोशी, तकनीकी अधिकारी

संपर्क सूत्रः **आर एस. गौतम**, उपनिदेशक (राजभाषा)
राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल.132001
फोनः 0184–2259045/78, फैक्सः 0184–2250042
rsgautam@ndri.res.in

इस अंक में प्रकाशित आलेखों एवं रचनाओं में व्यक्त विचारों/आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है।

इंटेक प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स
353, मुगल कैनाल मार्किट, करनाल–132001
फोनः 0184–4043541, 3292951, Email:jobs.ipp@gmail.com

डा. ए.के. श्रीवास्तव

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान
NATIONAL DAIRY RESEARCH INSTITUTE
(मान्य विश्वविद्यालय)
(Deemed University)
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
(Indian Council of Agricultural Research)
करनाल–132001, (हरियाणा) भारत
KARNAL- 132001, (Haryana) India

प्राक्कथन

मानव अस्तित्व एवं मानव सभ्यता को उन्नत बनाने में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की भूमिका तो प्राचीन समय से रही है, परन्तु आधुनिक युग में यह हमारे दैनिक जीवन का एक अनिवार्य पहलू बन गई है। आज व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीय विकास के संदर्भ में इसकी भूमिका कितनी अहम है, इससे हम सब भली–भांति परिचित हैं। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी जैसेः महत्वपूर्ण विषय की एक लोकप्रिय भाषा होनी चाहिए जो मुख्यतः उस परिवश से जुड़े आम लोगों की अभिव्यक्ति का माध्यम हो, तथा इसके प्रयोग एवं प्रचलन से हम निश्चय ही विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की पहुंच आम लोगों तक ले जा सकेंगें। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी को आम जनता तक ले जाने के लिए यह आवश्यक है कि ऐसे आलेख, शोध–पत्र आदि लिखे जाएं जिनका सीधा संबंध कृषक समुदाय से हो।

कृषि विज्ञान एक व्यापक संकल्पना है और वैज्ञानिक लेखन उस व्यापकता को भाषा में समेटने का गंभीर एवं रचनात्मक प्रयास है। विज्ञान अनंत को बांधने की साधना है, जब दृष्टि अन्वेषी हो, वस्तुपरक हो, पर्यवेक्षण के प्रति ईमानदार निष्ठा और लगनशीलता हो, विचार प्रक्रिया और निष्कर्ष को व्यक्त करने में मानसिक खुलापन और साहस हो तब हमे समझना चाहिए कि हमारी विज्ञान के मूल्यों के प्रति आस्था है, जिस समाज में वैज्ञानिक लेखन पिछड़ा होगा, निश्चय ही वहां वैज्ञानिक चेतना के लिए वातावरण उत्साह विहीन होगा।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात राष्ट्र में कृषि क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हुई है जिससे आज भारत कृषि उत्पादों में विश्व के अग्रणी राष्ट्रों की श्रेणी में शामिल है। हम खाद्य उत्पादन में न केवल आत्मनिर्भर है, वरन अपने कई उत्पादों को निर्यात कर विदेशी मुद्रा भी अर्जित कर रहें है। वर्तमान परिवेश में जमीन पर बढ़ता दबाव, चरागाहों के लिए कम होता क्षेत्रफल तथा वनों की भारी कमी एवं पानी की सीमित उपलब्धता सबसे बड़ी समस्या है। जैविक सम्पदा तथा उसकी विविधता को बनाए रखना आज की प्राथमिकता बनी हुई है। यह प्रगति हमारे वैज्ञानिकों, कृषकों एवं नीति–निर्धारकों के सतत प्रयासों से ही संभव हुई है। इस संस्थान द्वारा किए गए शोधकार्य किसानों तक विभिन्न माध्यमों द्वारा प्रसारित किए जा रहे हैं। यह संस्थान डेरी शोध, शिक्षण तथा विस्तार कार्यकलापों आदि के क्षेत्र में संपूर्ण विश्व में जाना जाता है। इस प्रतिष्ठित संस्थान के वैज्ञानिकों, कार्मिकों तथा छात्रों के अथक प्रयासों से ही संभव हो पाई है।

कृषि क्षेत्र में अर्जित उपलब्धियों, तकनीकियों एवं प्रणालियों को जनसामान्य तक पहुंचाने में हिंदी एक सशक्त माध्यम रही है। हिन्दी में वैज्ञानिक लेखन एवं पठन–पाठन को बढ़ावा देकर हम ज्यादा से ज्यादा लोगों को कृषि एवं डेरी क्षेत्र के नवीनतम आयामों के प्रति जागरूक कर सकते हैं। अनुसंधान के साथ–साथ भारत सरकार की राजभाषा नीति के कार्यान्वयन पर भी जोर देकर वैज्ञानिक विषयों को हिंदी में प्रस्तुत करना निश्चित ही हिन्दी की महत्ता को बढ़ाना है। वैज्ञानिक व तकनीकी शब्दों को अन्य विदेशी एवं भारतीय प्रादेशिक भाषाओं और हिंदी के बीच के शब्दों के आदान–प्रदान को अधिकाधिक प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

राष्ट्रभाषा हिंदी को अपनी वैज्ञानिक कार्यप्रणाली में लागू करने तथा अपने अन्य डेरी संबंधी अनुसंधानों एवं नई तकनीकों को कृषक समुदाय तक पहुंचाने के उद्देश्य से विगत वर्षो से संस्थान द्वारा एक वार्षिक गृह–पत्रिका 'दुग्ध–गंगा' का प्रकाशन किया जा रहा है। यह पत्रिका कृषकों, वैज्ञानिकों एवं छात्रों के लिए अति उपयोगी सिद्ध होगी। मैं उन सभी वैज्ञानिकों, अधिकारियों, तकनीशियनों, छात्रों तथा अन्य कार्मिकों को भी बधाई देना चाहता हूॅ जिन्होंने अपने आलेख/शोधपत्र भेजकर पत्रिका प्रकाशन में अपना भरपूर सहयोग दिया है। मैं इस उपयोगी पत्रिका प्रकाशन के लिए संपादक मंडल, प्रभारी, राजभाषा एकक, उपनिदेशक (राजभाषा) का भी आभारी हूॅ, जिनके संयुक्त प्रयासों से ही यह प्रकाशन संभव हो पाया है।

(डा. ए.के. श्रीवास्तव)

निदेशक

डा. खजान सिंह

ndri

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान
NATIONAL DAIRY RESEARCH INSTITUTE
(मान्य विश्वविद्यालय)
(Deemed University)
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
(Indian Council of Agricultural Research)
करनाल–132001, (हरियाणा) भारत
KARNAL- 132001, (Haryana) India

आमुख

भारत एक कृषि प्रधान देश है जहां की अधिकतर जनसख्या गाँवों में रहती है और अपनी आजीविका कमाने के लिए कृषि और इससे सम्बद्ध क्षेत्रों से जुटी हुई है कृषि में दिन–प्रतिदिन नए–नए अनुसंधान हो रहे हैं। इन अनुसंधानों / निष्कर्षों को आम जनता या किसानों तक केवल हिन्दी या भारत की अन्य क्षेत्रीय भाषाओं के माध्यम से ही पहुंचाया जा सकता है। अंग्रेजी में लिखे गए शोध पत्रों / अनुसंधानों के परिणामों को आम जनता समझ नहीं पाती है। यदि कृषि विज्ञान को किसानों ओर जन–सामान्य तक त्वरित गति से पहुंचाना है तो हमें प्रौद्योगिकी हस्तांतरण के लिए भारतीय भाषाओं विशेषकर राजभाषा हिन्दी को विज्ञान के क्षेत्र में अधिक से अधिक लागू करना होगा। इसे ध्यान में रखते हुए संस्थान में अनेक वैज्ञानिक कार्य भी हिंदी में किए गए जिनमें तकनीकी पत्रिकाओं, तकनीकी बुलेटिनों आदि का प्रकाशन, प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन, किसान मेलों एवं वैज्ञानिक संगोष्ठियों का आयोजन प्रमुख है। हमारा संस्थान राजभाषा (हिन्दी) के कार्यान्वयन के क्षेत्र में अग्रणी रहा है। यह संस्थान सरकारी काम–काज के विभिन्न क्षेत्रों जैसे प्रशासनिक, वैज्ञानिक तथा तकनीकी कामों में हिन्दी को अपनाने में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के सभी संस्थानों में आगे रहा है। संस्थान को भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा आरम्भ किया गया राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार चार बार प्राप्त हो चुका है।

भारत में विज्ञान व वैज्ञानिक प्रतिभाओं का ढांचा विकसित देशों से सर्वथा भिन्न है। विज्ञान और तकनीक को चारदीवारी में बन्द करके नहीं रखा जा सकता। उसे जनमानस तक पहुंचाते रहना होगा। ग्रामीण परिवेश में आज भी लोग वैज्ञानिक उपलब्धियों के महत्व से अपरिचित व विज्ञान के लाभों से वंचित है। यदि हम हिंदी को आत्मसात करते हुए कृषि में वैज्ञानिक उपलब्धियों का प्रचार–प्रसार हिंदी व अन्य भारतीय भाषाओं के माध्यम से करें तो कृषि विज्ञान में नयी–नयी तकनीकों को खेतों तक ले जाने में हमें महत्वपूर्ण सफलता प्राप्त हो सकती है। भूमण्डलीकरण के इस दौर में भारत में हिंदी का जो स्वरूप विकसित होगा उसी के अनुरूप हिंदी को अन्तरराष्ट्रीय मान–सम्मान प्राप्त होगा। वैज्ञानिक क्रांति के इस युग में मनुष्य की आवश्यकताएं व्यक्तिगत से पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय तथा अन्तरराष्ट्रीय स्तर तक फैलती जा रही है। सूचना को जन–जन तक पहुंचाने का यह पुनीत कार्य व्यापक रूप से बोली जाने वाली भाषा ही कर सकती है। लगभग सम्पूर्ण भारतवर्ष राजभाषा हिंदी को अपनी साहित्यिक भाषा मानता है, साहित्यिक भाषा अर्थात् उसके हृदय और मस्तिष्क की भूख मिटाने वाली, करोड़ों की आशा–आकांक्षा,

अनुराग–विराग, रूदन–हास्य की भाषा। उसमें साहित्य लिखने का अर्थ है करोड़ों के मानसिक स्तर को ऊँचा करना, करोड़ों मनुष्यों के सुख–दुख के प्रति संवेदनशील बनाना, करोड़ों को अज्ञान मोह और कुसंस्कार से मुक्त करना। साहित्य वही है जो कि लोकहित के लिए रचा जाए और वैज्ञानिक साहित्य तो आम जनता से सीधे जुड़ा है। इस प्रकार ज्ञान–विज्ञान की प्रगति में सभी का योगदान अपेक्षित है। हिन्दी को अन्य विदेशी भाषाओं के समान विज्ञान तथा तकनीकी लेखन का सशक्त माध्यम बनाने के लिए हिन्दी को तकनीकी रूप से समृद्ध बनाना होगा तथा वैज्ञानिकों एवं तकनीकी विशेषज्ञों द्वारा यथासंभव हिंदी को अपनाने पर ही यह संभव हो सकेगा।

संस्थान द्वारा प्रकाशित गृह पत्रिका 'दुग्ध–गंगा' इसी श्रृखंला की एक महत्वपूर्ण कड़ी है। इसमें डेरी अनुसंधान संबंधी विभिन्न जानकारियों का लोकप्रिय लेखों के रूप में समावेश किया गया है तथा वैज्ञानिकों को अपने शोध से संबंधित लेखों को हिंदी में लिखने का एक प्लेटफार्म उपलब्ध हुआ है।

मैं संस्थान के निदेशक, डा. ए.के.श्रीवास्तव जी का ह्रदय से आभारी हूँ वे सदा ही हमारे पथ प्रदर्शक रहे हैं उनके मार्गदर्शन के बिना संभवतः इस कार्य में हम सफल न हो पाते। मैं इस प्रकाशन में अतुलनीय योगदान के लिए उपनिदेशक (राजभाषा) श्री रामशंकर गौतम एवं राजभाषा एकक के स्टाफ का आभारी हूँ जिनके सम्मिलित प्रयास से इस पत्रिका के द्वितीय अंक का प्रकाशन सफलतापूर्वक हो पाया।

खजान सिंह

(खजान सिंह)

प्रधान वैज्ञानिक, डेरी विस्तार

एवं प्रभारी, राजभाषा एकक

आर.एस. गौतम

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान
NATIONAL DAIRY RESEARCH INSTITUTE
(मान्य विश्वविद्यालय)
(Deemed University)
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
(Indian Council of Agricultural Research)
करनाल–132001, (हरियाणा) भारत
KARNAL- 132001, (Haryana) India

संपादकीय

भारत एक विशाल और बहुभाषी देश है जहां विभिन्न प्रांतों में अलग–अलग भाषाएं बोली जाती है। अखिल भारतीय स्तर पर विचारों के आदान–प्रदान के लिए हमारे देश के संतों, मनीषियों और महापुरूषों ने प्राचीनकाल से ही संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी को अपनाया। यह सर्वविदित है कि देश के स्वतंत्रता संग्राम में हिन्दी की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। सर्वाधिक लोगों द्वारा बोली और समझे जाने के कारण संविधान सभा ने इसे भारतीय संघ की राजभाषा के रूप में स्वीकार किया।

ग्रामीण परिवेश में आज भी लोग वैज्ञानिक उपलब्धियों के महत्व से अपरिचित व विज्ञान के लाभों से वंचित हैं। यदि हम हिन्दी को आत्मसात् करते हुए कृषि में वैज्ञानिक उपलब्धियों का प्रचार–प्रसार हिन्दी व अन्य भारतीय भाषाओं के माध्यम से करें तो कृषि विज्ञान में नयी–नयी तकनीकों को खेतों तक ले जाने में हमें महत्वपूर्ण सफलता प्राप्त हो सकती है। विश्व परिदृश्य में यदि देखा जाए, तो टॉप टेन भाषाओं में हिन्दी विश्व की दूसरी भाषा है जो कि सर्वाधिक लोगों द्वारा बोली और समझी जाती है। न सिर्फ भारतवर्ष वरन् विश्व के 160 देशों में हिन्दी बोलने व जानने वालों की अच्छी–खासी संख्या है तथा हिन्दी का अध्ययन, अध्यापन एवं शोध कार्यो में भी तेजी से प्रसार हो रहा है।

मेरे विचार से कृषि तकनीकों / अनुसंधान के प्रचार व प्रसार को आम जनता तक पहुंचाने में हिन्दी को प्रमुखता देना एक अग्रणी और उल्लेखनीय कदम होगा। यह संस्थान विगत कई वर्षो से अपनी उपलब्धियों को लोगों तक हिन्दी या उनकी मात्भाषाओं में पहुंचाकर देश को डेयरिंग के क्षेत्र में आगे ले जाने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। यह हमारी नैतिक एवं संवैधानिक जिम्मेदारी है कि हम इसका अधिकतम लाभ उठाते हुए कृषि विज्ञान में हो रहे नए–नए प्रयोगों को जनमानस तक हिन्दी के माध्यम से पहुंचाकर एक मिसाल कायम करें तथा हिन्दी में विश्व स्तरीय पाठ्य–पुस्तकों, आलेखों तथा प्रकाशनों के माध्यम से तकनीकी ज्ञान को कृषक समुदाय तक पहुंचाएं।

भारत के प्रधानमंत्री जी ने 15 अगस्त, 2010 को लाल किले की प्राचीर से सम्पूर्ण राष्ट्र को संबोधित करते हुए दूसरी 'हरित क्रांति' का आह्वान किया था, ताकि सारे देश की जनता के लिए खाद्य सुरक्षा

एवं पोषण सुनिश्चित किया जा सके। इस हरित क्रांति को सफल बनाने में हमारे किसानों का योगदान तभी रंग ला सकता है जब वे वैज्ञानिक प्रगति से भली प्रकार अवगत हों और इसमें हिंदी सहित देश की सभी भाषाएं अपना–अपना योगदान दें। भूमंडलीकरण के इस दौर में भारत में हिन्दी का जो स्वरूप विकसित होगा। तदनुरूप हिन्दी को अतरराष्ट्रीय मान–सम्मान प्राप्त होगा। सूचना क्रांति के इस युग में मनुष्य की आवश्यकताएं व्यक्तिगत से पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय तथा अतरराष्ट्रीय स्तर तक फैलती जा रही है। सूचना को जन सामान्य तक पहुंचाने का यह पुनीत कार्य व्यापक रूप से बोली जाने वाली भाषा हिन्दी ही कर सकती है।

अन्त में, संस्थान के सुयोग्य निदेशक महोदय, प्रभारी राजभाषा एकक, संपादन मंडल के सदस्यगण, पत्रिका में प्रकाशनार्थ आलेख भेजने वाले तथा सभी वैज्ञानिक, तकनीशियन, कार्मिक तथा स्टाफ राजभाषा एकक आदि का विशेष योगदान मुझे प्राप्त हुआ है, मैं इन सभी का ह्दय से आभार व्यक्त करता हूँ। इस पत्रिका के पूर्व अंक के लिए प्रतिक्रिया भेजने वाले सभी सुविज्ञ पाठकों के प्रति भी हम कृतज्ञ है। आशा है कि **'दुग्ध–गंगा'** का यह द्वितीय अंक वैज्ञानिकों, तकनीशियनों, कार्मिकों, छात्रों, सुधी पाठकों, कृषकों तथा कृषि प्रसार कार्यकर्ताओं आदि के लिए उपयोगी एवं संग्रहणीय होगा।

(आर.एस. गौतम)
उपनिदेशक (राजभाषा)/ प्रशासन

विषय सूची
वैज्ञानिक/तकनीकि आलेख

1. **डेरी उद्योग में पैकेजिंग के नवीन आयाम** 1
श्री सुमित गोयल व डा. जी.के.गोयल

2. **पौष्टिक आहार में देशी दुग्ध पदार्थो की महत्ता** 5
डा. एन. एस. सिरोही, डा. खजान सिंह एवं डा. आनन्द प्रकाश रूहिल

3. **पशु पालन भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग** 7
श्रीमती मृदुला उपाध्याय एवं श्रीमती ऋतु चक्रवर्ती

4. **दुधारू पशुओं में दूध उत्पादकता वृद्धि के लिए आनुवांशिक प्रजनन नीति एवं योजनाएं** 10
श्री रमेश कुमार सिंह, डा. अवतार सिंह, सुश्री मंजू नेहरा, श्री विलास डोंगरे तथा श्री अश्वनी कुमार

5. **दीमक एवं उनका प्रबंधन** 13
डा. एस. के. पाण्डेय

6. **डेरी दुग्ध पदार्थ बनाने के लिए उपयोगी तकनीकी विकास** 16
डा. सुरेश कनौजिया एवं डा. योगेश खेतरा

7. **स्वास्थ्यवर्धक व्हे प्रोटीन** 21
डा. शिल्पा विज, सुश्री दीपिका यादव, श्री सुब्रोता हती, डा. बिमलेश मान

8. **गर्मी के मौसम में गों पशु पोषण प्रबंधन** 23
डा. सोहनवीर सिंह, डा. एस.एस. कुण्डू, डा. आर.सी. उपाध्याय, डा. आशुतोष,
सुश्री बीनम बालियान एवं श्री मंगेश वैद्य

9. **शिशु दुग्ध आहार** 27
श्री अमरदीप कुमार एवं डा. प्रतीक शर्मा

10. **पशु प्रजनन क्षमता बढ़ाने के विभिन्न घटक** 30
श्री रमेश कुमार सिंह, डा. अवतार सिंह, सुश्री मंजु मेहरा, श्री विलास डोंगरे तथा श्री अश्वनी कुमार

11. **कृषि और ग्रामीण विकास में सूचना एवं संचार तकनीक के नवीन आयाम** 32
डा. आसिफ मोहम्मद, डा. खजान सिंह एवं श्रीमती मृदुला उपाध्याय

12. **मानव जीवन एवं कृषि में पशुओं की भूमिका** 37
श्री सुक्रमपाल सिंह एवं श्री रणवीर सिंह

13. **डेरी व्यवसाय–रोजगार एवं आर्थिक विकास का स्त्रोत** 39
श्री जे.एन. यादव, डा. ए. के. चौहान एवम् डा. बी.एस. चन्देल

14. **गर्भवती एवं नवजात पशु की देखभाल व प्रबंधन** 43
डा. निशान्त कुमार एवं डा. टी. के. मोहन्ती

15. **बरसीम – एक पौष्टिक दलहनी चारा** 46
डा. अखिलेश मिश्रा एवं श्रीमती गीता राय

16. **प्रकृति से प्रतियोगिता कैसी, वह भी तो है मुझ जैसी 'रूमन'
के साथ चलो मेरे, से विरक्तता कैसी।।** 48
श्री करण सिंह

17. **प्राकृतिक रेशों के बहुआयामी उपयोग** 50
डा. चित्रनायक

18. **भेड़, बकरी पालन द्वारा गरीबी व कुपोषण का उन्मूलन** 52
श्री आलोक कुमार सिंह

19. **हरियाणा में पशुधन विकास: एक समीक्षा** 53
डा. प्रमोद कुमार सिंह एवं सुश्री करूणा असीजा

20. **गायों में संकरण की उपयोगिता** 61
श्री रमेश कुमार सिंह, श्री नवीन कुमार, श्री पंकज कुमार, श्री चंदन कुमार एवं श्री सौरभ सुलभ

21. **संकर करन फ्रीज बछड़ियों (प्रोबायोटिक सम्पूरक व असम्पूरक)
में विकास व स्वास्थ के लिए कुछ प्लासिका जैविक संकेतों का मूल्यांकन** 62
डा. आनन्द लक्ष्मी, श्री शशिकांत दांडग, सुश्री नामागिरी लक्ष्मी, तथा डा. जे.पी. सहगल

22. **दूध व्युतपन्न जैवक्रियाशील पेप्टाइड** 65
डा. बिमलेश मान, सुश्री प्रेरणा सैनी, सुश्री निधि यादव व डा. शिल्पा विज

23. **विदेशी सब्जियों की खेती करके लाभ कमाएं** 68
श्री सतीश कुमार एंव डा. ए. एस. हरीका

24. **अनुपयुक्त भूमियों पर चारा उत्पादन की संभावनाएं** 70
डा. ब्रजेन्द्र सिहं मीणा, डा. आनन्द प्रकाश रूहिल एवं श्री ब्रज किशोर मीणा

25. **कृषि उत्पादन में जैव–उर्वरकों की महत्ता एवं उपयोग** 73
डा. उत्तम कुमार एवं डा. ए.एस. हरीका

26. **पशु सुधार में जैव–प्रौद्योगिकी के अनुप्रयोग** 78
श्री राजेश वाकचौरे तथा श्री मंगेश वैद्य

27. **गरमाती धरती: पृथ्वी पर मंडराता संकट** 80
श्री हरी बाबू, शोध–छात्र एवं श्री रश्मि कान्त

28. **दुधारू पशुओं के ब्यांत के महत्वपूर्ण दिनों पर परिचर्चा व समीक्षा एक प्रगतिशील पशुपालक के अनुभवों पर आधारित** 83
श्री महाबीर सिंह रोड़

29. **हिन्दी हमारी आत्मा एवम् संस्कृति है** 88
श्री आर. स्वामीनाथन

30. **राष्ट्रीय ध्वज की विकास गाथा** 90
श्री आर.एस. गौतम

31. **धर्म: परिभाषाएँ, मान्यताएँ और सन्दर्भ** 92
श्री पुष्प नायक

32. **डा. लोहिया बनाम भारतीय भाषाएं** 98
श्री बृजेश यादव

33. **किसान** 100
श्री गिरिजेश सिंह मेहरा

34. **भैंसों की मुख्य नस्लें** 101
श्री रामप्रसाद भारती

35. **बिहू तथा फसल** 102
श्री हरीश चन्द्र जोशी

36. **राजभाषा कार्यकलाप** 104

37. **पाठकों की प्रतिक्रिया** 114

38. **इजराइल के राष्ट्र बनते ही हिब्रू भाषा का प्रयोग** 118
डा. चन्द्र प्रकाश आर्य

वैज्ञानिक/तकनीकी आलेख

डेरी उद्योग में पैकेजि़ंग के नवीन आयाम

सुमित गोयल व जी.के.गोयल
राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

पैकेजिंग उत्पाद का दर्पण होता है। संवेष्टन का मुख्य कार्य दुग्ध व दुग्ध–उत्पादों की पौष्टिकता व इनके संवेदनशील गुणों को निर्माण से लेकर अंतिम उपभोग तक सुरक्षित रखने का होता हैं। इसके अलावा उत्पादों का संवेष्टन इस प्रकार से होना चाहिए कि उनको खरीदना व प्रयोग में लाना सुलभ हो।

पिछले 15 वर्षो में भारतीय डेरी उद्योग में अत्याधिक परिवर्तन आया हैं। वार्षिक दुग्ध उत्पादन जो वर्ष 1970 में 21.36 मिलियन टन था, वह वर्तमान में लगभग 114 मिलियन टन हो गया है। इससे अब भारत दुनियां में दुग्ध उत्पादन में शीर्ष स्थान पर है। लेकिन इसके बावजूद भारत में औसत पशु दूध उत्पादन दर व प्रति व्यक्ति दूध उपभोग दर कम है। दुधारू पशुओं की नस्ल में सुधार से दुग्ध उत्पादन सन् 2015 तक 175 मिलियन टन व सन् 2020 तक 200 मिलियन टन होने की संभावना है।

दूध व दुग्ध–उत्पाद कीटाणु व सूक्ष्म–जीवों द्वारा शीघ्र खराब हो जाते है। इसलिए हमें इनके उत्पादन, संवेष्टन, भंडारण व यातायत में अत्यंत सावधानियां बरतनी चाहिए। इसके लिए सक्षम कोल्ड चेन, संवेष्टन व परिवहन का प्रभावशाली जाल बिछाने की आवश्यकता है ताकि गुणों से भरपूर दुग्ध व दुग्ध पदार्थ अधिक से अधिक उपभोक्ताओं तक पहुँच सके। यह सब तब ही संभव है जब दूध का शीतीकरण, निर्जिवीकरण, संवेष्टन व वितरण प्रणाली सटीक हो। ऐसे में भारतीय डेरी उद्योग का दुग्ध व दुग्ध–पदार्थो की पैकेजि़ग में प्रभावशाली रूप से सुधार लाने का उत्तरदायित्व काफी बढ़ जाता है।

डेरी उद्योग में पैकेजि़ग का योगदान

डेरी पदार्थो के सूक्ष्म जीवाणुओं के संपर्क में आने से शीघ्र ही खराब होने की संभावना प्रबल होती है। दुग्ध व दुग्ध–पदार्थो में सुधार किया जाता है ताकि उनकी निधानी आयु बढ़ाई जा सके। इसके अलावा इनके संवेदनशील गुण व रूप गुणों का सुधार 'स्टेट–आफ–दी–आर्ट' संवेष्टन पदार्थो और पैकेजि़ग तकनीक द्वारा किया जा सकता हैं।

उत्पाद की पैकेजि़ंग ही उपभोक्ता को अपनी ओर आर्कषित करती है। इसलिए पैकेजि़ंग के रूप व गुणों से कोई समझौता नहीं किया जा सकता और इसका विशेष ध्यान रखना चाहिए।

आमतौर पर प्रयोग में लाने वाली संवेष्टन सामग्री खाद्य–पदार्थो को बाहरी मिलावट, वायु, पानी, आर्द्रता व प्रकाश से बचाती है जबकि नई पैकेजि़ंग तकनीक जैसे निर्वात पैकिंग, परिवर्तित वायुमंडलीय पैकेजि़ंग (मैप), नियंत्रित वायुमंडलीय पैकेजि़ंग (कैप), सक्रिय पैकेजि़ंग (एपी), जीवाणुनिरोधक पैकेजि़ंग, रिटार्ट पैकेजि़ंग आदि खाद्य–पदार्थो को बाहरी सुरक्षा के अलावा और अधिक सुरक्षा प्रदान करती है जिससे कि दुग्ध–पदार्थो की निधानी आयु कई गुना बढ़ जाती है।

चयनित संवेष्टन सामग्री के गुण

डेरी उद्योग में विभिन्न प्रकार के पैकेज प्रयोग में लाए जाते हैं जैसे कि धातु के डिब्बे (कैन), कॉच की बोतलें, अर्ध–कठोर व लचीली प्लास्टिक, पेपर व कार्डबोर्ड, धातु की परत, प्लास्टिक कप व थैलियॉ आदि। एक आदर्श पैकेज में संतोषजनक गुण होने चाहिए जैसे कि आर्द्रता से बचाव, आक्सीजन व प्रकाश से बचाव। इसके अलावा संवेष्टित पदार्थ की सुगंध को बाहर जाने से रोकने के गुण तथा संवेष्टन सामग्री को हानिकारक (विषैला) भी नही होना चाहिए। इसमें वितरण के दौरान पदार्थ को संभालकर रखने की क्षमता भी होनी चाहिए। इसे सुविधाजनक, प्रिंट योग्य, आकर्षक व पर्यावरण के अनुकूल भी होना चाहिए।

दुग्ध पैकेज़िंग विपणन

भारत में उत्पादित दूध का अधिकांश हिस्सा देसी दुग्ध–पदार्थो के निर्माण में प्रयोग होता है। जैसेः देसी मक्खन, पनीर, छैना, खोया, दही आदि। जबकि केवल 7 प्रतिशत दूध ही पश्चिमी उत्पादों जैसे शुष्क दुग्ध पाउडर, टेबल बटर, चीज़ आदि में प्रयोग होता है। सुव्यवस्थित क्षेत्रों की डेयरियों में घी, टेबल बटर, चीज़, आईसक्रीम, माल्ट दुग्ध फूड, वसा रहित शुष्क दुग्ध पाउडर, शिशु–आहार आदि का उत्पादन होता है। इसमें अकेले घी का हिस्सा लगभग 85 प्रतिशत है।

आज लगभग 12 प्रतिशत पाश्चुरीकृत दूध पैक करके विक्रय किया जाता है जिसका मूल्य करीब ₹9,000.00 करोड़ है। डेरी उद्योग में दुग्ध को पैक करने के लिए काफी वर्षो से पालीथीन का प्रयोग किया जा रहा है। साठवें दशक में यूरोपियन महाद्वीप में जीवाणु–रहित दूध को पैक करने के लिए गोल बोतलों का प्रयोग किया गया। संयुक्त राज्य अमरीका में अब दूध–कार्टन की जगह अधिकांशतः पॉलीथीन का प्रयोग होता हैं। अठाहरवीं शताब्दी में यूनाइटेड किंग्डम (यू.के) में उच्चघनत्व पॉलीथीन बोतलों को पहली बार प्रयोग में लाया गया। इन बोतलों के सर्वव्यापी गुणों की वजह से इनका प्रयोग पाश्चुरीकृत, अति उच्च तापमानित तथा जीवाणु रहित दुग्ध को पैक करने के लिए किया जाता है।

दूध पैकिंग का विकास

पहले समय में दुधियों द्वारा बिना पैक किया हुआ दूध घर–घर जाकर बेचा जाता था। फिर डेरियों ने कॉच की बोतलों में दूध को पैक करके बेचना शुरू किया। लेकिन वर्ष 1980 के पश्चात् कॉच की बोतलों का स्थान पॉलीथीन थैलियों ने ले ली। भारत में सहकारी क्षेत्रों की डेरियॉ सिर्फ पैकेज़िंग पर ₹5000–6000 मिलियन खर्च करती हैं। पैकेज़िंग का खर्च उपभोक्ता मूल्य का 0.5 प्रतिशत से 30 प्रतिशत तक होता है।

प्लास्टिक थैली का रख–रखाव तथा वितरण सुविधाजनक होता है। इसके अलावा वितरण खर्च भी कम होता है। जो दूध प्लास्टिक थैलियों या बोतलों में पैक होता है उसकी फ्रिज में निधानी आयु 2–3 दिन होती है।

पैकिंग की नई तकनीक

सन् 1996 में हानिकारक जीवाणु रहित सवेंष्टन तकनीक भारत में आई। इस तकनीक में प्रयोग होने वाली संवेष्टन सामग्री में अजर्म पर्ते होती हैं जो कागज के गत्ते, एल्यूमिनियम पर्त और प्लास्टिक के प्रयोग से बनाई जाती है। इस नई तकनीक द्वारा अति उच्च तापमानित दुग्ध लगभग 6 महीनों तक साधारण तापमान पर पीने योग्य रहता है। देश की कई राज्यों की सहकारी डेरियाँ इस नई तकनीक को अपनाकर दूध पैक कर रही हैं।

लेकिन इस प्रकार पैक किया हुआ दूध प्लास्टिक थैलियों के दूध की अपेक्षा काफी मंहगा होता है। निजी क्षेत्रों की कई डेरियाँ भी इस नई तकनीक को अपनाकर अति उच्च तापमानित दूध बाजार में बेच रही हैं।

वसा युक्त डेरी उत्पादों की पैकेज़िंग

टेबल बटर

बटर का उत्पादन लगभग 5 लाख मीट्रिक टन है। इसमें से केवल 4500 मीट्रिक टन सफेद बटर होता है जबकि बाकी बटर पीले रंग का होता है। बटर में सामान्यतः 80–82 प्रतिशत वसा, 16 प्रतिशत आर्द्रता और 0.5–2.5 प्रतिशत नमक होता है। बटर की पैकेज़िंग इसे प्रकाश, आर्द्रता, वाष्पीकरण व संदूषण से बचाती है। बटर को कम तापमान पर रखा जाता है। कोल्ड स्टोर में बटर से आर्द्रता का वाष्पीकरण रोकने के लिए पैकेज़िंग सामग्री में आर्द्रता प्रतिभेदन क्षमता होनी चाहिए। अन्यथा आर्द्रता की कमी से बटर की ऊपरी सतह गाढ़ी पीली हो जाती है तथा बटर के भार में कमी व इसका आक्सीकरण भी हो जाता है। बटर पैकेज़िंग पदार्थ में वसा प्रतिरोधक क्षमता का होना अति आवश्यक है। यदि बटर को पैक करने के लिए सिर्फ एल्युमिनियम पर्त का प्रयोग किया जाये तो नमक व कम पी.एच. इसमें जंग लगा देते हैं। इसलिए एल्युमिनियम परत पर पेंट (लैकर) चढ़ाया जाता है तथा एल्युमिनियम परत और कागज के बीच में आंसजक लगाया जाता है। बटर पैक करने के लिए रैपर सर्वाधिक प्रचलित है। इसके अलावा वनस्पति पार्चमेंट कागज़ और मोम लोपित कागज़ व गत्तों के कार्टन बटर को पैक करने के लिए प्रयोग किए जाते हैं। कार्टन में अन्दर की तरफ पॉलीथीन या पार्चमैंट कागज लगा होता है और इसमें ठोस विरंजित सल्फेट होता है। कार्टन को आसानी से खोलने के लिए इसके कोनों में गोंद के स्थान पर सिलाई होती है।

सामान्यतः बटर दो प्रकार के पैक साइज 'बल्क' व 'रिटेल' में बेचे जाते है। बल्क पैक के लिए डिब्बे व टब का प्रयोग होता है जबकि रिटेल के लिए सामान्यतः वनस्पति पार्चमेन्ट कागज़ का प्रयोग होता है क्योंकि इसमें चिपकने की क्षमता होती है।

घी

भारत में कुल दुग्ध उत्पादन का 35 प्रतिशत से अधिक दूध घी में परिवर्तित किया जाता है। बहुत सी डेरियाँ घी को लैकर कैन में पैक करती हैं क्योंकि जब घी को लम्बी दूरी तक सड़क के रास्ते ट्रकों से भेजा जाता है तो टिन कैन घी को परिवहन के दौरान होने वाले जोखिम से बचाता है।

टिन कैन के अलावा घी की पैकेज़िंग अन्य संवेष्टन पदार्थो में भी की जाती है जैसे उच्च घनत्व पॉलीथीन, "अर्ध–कठोर प्लास्टिक पात्र," पॉलीमर स्तरित सैलोफेन, पॉलीएस्टर, नायलोन–6, खाद्य–योग्य पी.वी.सी., पैट प्लास्टिक बोतल, स्तरित कार्टन, जैरिकैन, गत्ते के बक्से में रखी प्लास्टिक थैली आदि। घी को इनमें पैक करने के अनेक लाभ हैं जैसे आसान उपलब्धता, कम भार व टिन कैन की अपेक्षा कम लागत।

किण्वित डेरी उत्पाद दही की पैकेज़िंग: एक नवप्रवर्तन

दही को पैक करने के लिये डेरियों द्वारा पॉलीस्टाइरिन व पॉलीप्रोपाइलीन प्लास्टिक के कप का प्रयोग किया जाता है। कुछ डेरियॉ दही और मिस्टी दही को मिट्टी की बनी छोटी मटकियों मे भी पैक करती हैं जो इनको अच्छा

रूप व स्थिरता देती हैं, परन्तु यह वजन में भारी, परिवहन में टूटने की संभावना व प्लास्टिक कप की अपेक्षा अधिक मूल्य की होती है। इन उत्पादों का मटकियों में लम्बे समय तक भंडारण करने पर उत्पाद सिकुड़ जाता है क्योंकि मिट्टी के सूक्ष्म छिद्रों से पानी वाष्प बनकर पदार्थो से निकल जाता है जिससे ये खाने व विक्रय के योग्य नहीं रहते। लेकिन हाल में इस समस्या का समाधान डेरी प्रौद्योगिकी प्रभाग, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल के वैज्ञानिकों ने शोध के द्वारा कर दिया हैं जिसमें न केवल मिट्टी की मटकियों का भार प्रभावी रूप से घटाया गया है बल्कि दही का 15 दिनों तक भंडारण करने पर यह स्थिर रहती है तथा इसका पानी वाष्प बनकर छिद्रों से बाहर नहीं जाता। इसके अलावा इनका प्रयोग पर्यावरण की दृष्टि से भी ठीक है।

मिट्टी की मटकियों में दही

पनीर की पैकेज़िंग: एक नव प्रवर्तन

पनीर अम्ल स्कंदित दुग्ध–उत्पाद है। इसमें प्रोटीन प्रचुर मात्रा में होती है। इसलिए पनीर शाकाहारियों का लोकप्रिय पदार्थ है। इसका उपयोग विभिन्न प्रकार से किया जाता है। सामान्यत: पनीर को पॉलीथीन थैलियों में पैक किया जाता है। फ्रिज में यह 4–5 दिनों तक ठीक रहता है। यदि पनीर को निर्वात में पैक करें तो यह करीब 15 दिनों तक फ्रिज में ठीक रहता है।

डेरी प्रौद्योगिकी विभाग, रा.डे.अनु.सं., करनाल के वैज्ञानिकों ने शोध के द्वारा पनीर की निधानी आयु को 300 प्रतिशत तक बढ़ाया है। यह उपलब्धि नई तकनीक ''परिवर्तित वायुमंडल पैकेज़िंग'' को अपनाकर की गई। इस विधि में पनीर को उच्च अवरोधक पैकेज़िंग सामग्री में कार्बन–डाई–आक्साइड के वायुमंडल में पैक किया जाता है। इस पनीर से बनी सब्जियां काफी स्वादिष्ट होती है। यह तकनीक अत्यंत ही प्रभावी है तथा पनीर का निर्यात करने मे बहुत लाभदायक साबित हो सकती है।

पनीर की स्वादिष्ट सब्जी

सारांश

पैकेज़िंग का मुख्य कार्य दुग्ध व दुग्ध–पदार्थो के पौष्टिक तत्वों व रोचक गुणों को इनके उत्पादन से लेकर उपभोक्ताओं के पास पहुंचने तक सुरक्षित रखने का होता है। हमारे देश मे पैकेज़िंग के क्षेत्र में काफी विकास हुआ है। दुग्ध–पदार्थो की पैकेज़िंग उपभोक्ताओं के लिए आर्कषक सुलभ होनी चाहिए। डब्लु.टी.ओ. के आने के बाद भारत में डेरी उत्पादों की मांग काफी तेजी से बढ़ी है। इसके अलावा भारत से दुग्ध–उत्पादों के निर्यात की संभावना भी बढ़ी है। यह तभी संभव है जब दुग्ध–उत्पादों की निधानी आयु विशेष रूप से पैकेज़िंग में आये नवपरिवर्तनों को अपनाकर बढ़ाई जाये।

❁ ❁ ❁ ❁ ❁

पौष्टिक आहार में देशी दुग्ध पदार्थों की महत्ता

एन. एस. सिरोही, खजान सिंह एवं आनन्द प्रकाश रूहिल
राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

पौष्टिक आहार में सभी पौष्टिक तत्व जैसे कार्बोहाईड्रेट, वसा, प्रोटीन, खनिज पदार्थ एवं विटामिन विद्यमान होते हैं यह सभी पौष्टिक तत्व दूध में मिलते है तो हम यह कह सकते है कि दूध अपने आप में पूरक आहार हैं इसलिए दूध एवं दूध से बने दुग्ध पदार्थो का हमारी आहार तालिका में विशेष महत्व है। जहां पर दूध की उपलब्धता अधिक होती है वहां पर दूध से बने दुग्ध पदार्थो का नियमित रूप में सेवन किया जाता है। दूध की पौष्टिकता को देखते हुये, दूध के उत्पादन को बढ़ाने के लिये लगातार कोशिशें की जा रही हैं। कई राज्यों में दूध को अतिरिक्त आहार के रूप मे आंगनवाड़ी एवं स्कूलों में बाटां जाता है।

आम आदमी के औसतन आहार की तालिका में ज्यादातर पौष्टिक तत्वों का आमतौर पर आहार मे दूध एवं दूध से बने दुग्ध पदार्थो को शामिल करने की कोशिश की जा सकती है। दूध को उबालकर पीने की आदत हम सभी लोगों में है दूध उबालने से बिमारी फैलाने वाले जीवाणु नष्ट हो जाते हैं लेकिन उसमें प्रोटीन की गुणवत्ता भी क्षीण हो जाती है और साथ मे विटामिन–सी एवं विटामिन बी–1 भी कम हो जाते है।

आईये अब हम दूध से बने दुग्ध पदार्थो की पौष्टिकता के बारे में जाने कि इसमें कौन–कौन से पौष्टिक तत्व पाये जाते है जो कि एक सन्तुलित आहार के लिए आवश्यक हैं : –

1. दही:– दूध से बनने वाले दुग्ध पदार्थो में दही का हमारे भोजन में विशेष महत्व है इसमें वसा 6–8 प्रतिशत, प्रोटीन 3.5–4.0 प्रतिशत, लैक्ओस 4.6–5.2 प्रतिशत एवं खनिज लवण 0.70–0.72: एवं लैक्टिक एसिड 0.5–1.1 प्रतिशत अनुपात में पाया जाता है। दही एक ऐसा उत्पाद है जो कि दूध की पाचयता की क्षमता को बढ़ा देता है। दही को लैक्टोस–असह्य वाले लोगों के आहार में शामिल किया जा सकता है। दही में कैल्शियम, फास्फोरस, सोडियम एवं पौटाशियम ज्यादा मात्रा में मिलता है। यह खनिज पदार्थ शरीर में होने वाली पाचन क्रियाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। दूध से मिलने वाला कैल्शियम, सब्जियों से मिलने वाले कैल्शियम की अपेक्षा शरीर में अच्छी तरह से घुलता है। दही से लस्सी, कढी एवं श्रीखंड बनाकर हम अपने भोजन की और भी पौष्टिकता को बढ़ा सकते हैं।
2. मक्खन एवं घी:– दूध से बने मक्खन एवं घी उत्पाद हमारे आहार तालिका के वसा की तीसरे हिस्से (1.0–1.5) की पूर्ति को पूरा करते हैं। मक्खन में वसा 78–81 प्रतिशत दही 1–1.5 प्रतिशत, लैक्टिक एसिड 0.2 (99.0–99.5) प्रतिशत के अनुपात में मिलता है। इस तरह भैंस के दूध से बने घी में वसा 99.0–99.5 प्रतिशत, फ्री फैटीएसिड 1–3 प्रतिशत एवं कैराटीन, विटामिन ए, विटामिन ई आदि पाये जाते हैं, लेकिन घी को 125 डिग्री सै0 से ऊपर गर्म करने से उसमें विटामिन ए एवं कैराटीन नष्ट हो जाते है।
3. खोआ, छैना एवं पनीर :– खोआ एवं पनीर दोनों ही उत्पाद मिठाईयां बनाने के लिये आधारित मिश्रण है। खोआ से बर्फी, कलाकन्द, पेड़ा, गुलाबजामुन आदि बनाये जाते हैं और छैना से रसगुल्ला एवं रसमलाई बनाये जाते हैं, पनीर से छैनामुर्की एवं गुलाबजामुन भी बनाये जाते है। खोआ में वसा 37.1 प्रतिशत,

प्रोटीन 17.8 प्रतिशत, लैक्टोस 22.1 प्रतिशत एवं खनिज लवण 3.6 प्रतिशत एवं कुछ मात्रा 20.8 में लोहा भी मिलता है। छैना में वसा 20:, प्रोटीन 18.3 प्रतिशत, लैक्टोस 1.2 प्रतिशत खनिज लवण 2.6 प्रतिशत पाये जाते है। इसी प्रकार पनीर में वसा 28.30:, प्रोटीन 13–15 प्रतिशत, लैक्टोस 2.2–2.4 प्रतिशत एवं खनिज लवण 1.9–2.1 प्रतिशत तक पाये जाते हैं। शोध कार्यो से यह सिद्ध हो गया कि खोआ, छैना, पनीर से प्राप्त वसा, वनस्पति तेल एवं घी की अपेक्षा ज्यादा पाचनशील एवं तैयार ऊर्जा प्रदान करती है। दुग्ध पदार्थो में प्रोटीन के साथ कैल्शियम एवं विटामिन–बी अधिक मात्रा में मिलते है जो कि हड्डियों एवं चमड़ी के लिये अच्छे होते हैं दूध की प्रोटीन में सभी आवश्यक अमीनोएसिड होते है जो कि बच्चों की बढ़ोत्तरी एवं दिमाग की शक्ति को बढ़ाने में मदद करते है।

खोआ में पाया जाने वाला कार्बोहाईड्रेट लैक्टोस के रूप में मिलता है। लैक्टोस, शरीर में कैल्शियम के अवशोषण की क्रिया को मजबूत करता है जो कि हमारी हड्डियों को मजबूत बनाता है। पनीर में लैक्टोस कम होने से इसे मधुमेह के रोगी भी खा सकते हैं। पनीर बनाने के बाद बचे हुए पानी (व्हे) में काफी पौष्टिक तत्व होते है जो कि व्यर्थ जाते हैं पनीर के पानी को सब्जियों, दालों एवं आटा गुथंने के काम में लाना चाहिए। अगर ज्यादा पानी हो तो पशुओं को भी दे सकते है।

खोआ, छैना एवं पनीर में पाये जाने वाले महत्वपूर्ण खनिज पदार्थ कैल्शियम, फास्फोरस, सोडियम एवं पौटाशियम है यह खनिज पदार्थ शरीर में होने वाली क्रियाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। दुग्ध पदार्थो से मिलने वाला कैल्शियम सब्जियों से मिलने वाले कैल्शियम की अपेक्षा शरीर में अच्छी तरह से इस्तेमाल होता है। खोआ, छैना एवं पनीर में पाये जाने महत्वपूर्ण खनिज पदार्थ फास्फोरस, सोडियम एवं पौटाशियम है। यह खनिज पदार्थ शरीर में होने वाली पचायक क्रियाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। दुग्ध पदार्थो से मिलने वाला कैल्शियम सब्जियों से मिलने वाले कैल्शियम की अपेक्षा शरीर में अच्छी तरह से इस्तेमाल होता है।

दूग्ध–पदार्थो से मिलने वाले विटामिनों का बच्चों, युवाओं की बढोत्तरी में महत्वपूर्ण योगदान है। दूध, विटामिन बी–2 एव ंबी–12 का अच्छा स्त्रोत है। इसके साथ दूसरे विटामिन भी पाये जो है। विटामिन ए–आखों के लिए, विटामिन डी–हड्डियों के लिए एवं बी–ग्रुप के विटामिन, बी–2, बी–12 केवल दूग्ध पदार्थो से ही मिलते है। यह विटामिन उन लोगों के लिये उपयोगी है जो शाकाहारी हैं। शोध कार्यो से यह पता चला है कि बच्चों के आहार फोलिक भोजन में 40 प्रतिशत तक विटामिन–ए, बी–2, बी–6 एवं एसिड की कमी पाई जाती है इसलिये बच्चों को स्कूल में मध्याकालीन ओपन में दूध य सोया आधारित पेय पदार्थो के साथ ज्यादा से ज्यादा सब्जियां, फल अनाज से बने, पदार्थ शमिल करने चाहिए। सब्जियों एवं गाजर से मिलने वाली कैराटीन के अवशोषण में दूध का महत्वपूर्ण योगदान हैं इसलिए हम कह सकते हैं कि दुग्ध पदार्थो में सभी पौष्टिक तत्व होते हैं जो कि बच्चों, युवाओं, वृद्ध, गर्भवती एवं दूध पिलाने वाली महिला के लिए लाभदायक है।

❁ ❁ ❁ ❁ ❁

इतने बड़े देश में यहां इतनी भाषाएं हैं, वहाँ देश की एकता के लिए एक कड़ी की आवश्यकता है। कोई भाषा ऐसी हो, जिसे सब बोल सकें, जो एक कड़ी की तरह सबको मिला–जुला कर रख सके। इसलिए हिन्दी को बढ़ावा देना सबका काम है।

श्रीमती इन्दिरा गांधी–पूर्व प्रधानमंत्री

पशुपालन भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग

मृदुला उपाध्याय एवं ऋतु चक्रवर्ती
राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

पशुपालन हमारे भारत की सभ्यता, संस्कृति से आदि काल से जुड़ा है। गो पशु और मानव जाति का अटूट रिश्ता रहा है तथा कृषि प्रधान देश भारत से डेरी पशुओं का वर्चस्व भविष्य में भी कम नही होगा। प्रारम्भ से ही कृषि और पशुपालन हमारी अर्थ व्यवस्था के महत्वपूर्ण आधार स्तम्भ रहें हैं क्योंकि इससे हमारी खाद्य व्यवस्था जुड़ी है। दूध एवं दुग्ध उत्पाद हमारे खाद्य में न केवल विविधता लाने में बल्कि पोषण प्रदान करने में महत्वपूर्ण रहे हैं और खाद्य समस्या को सुलझाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

दूध प्रकृति द्वारा मनुष्य को दिया गया अनमोल उपहार है। यही कारण है कि नवजात शिशु के पृथ्वी के आगमन पर सबसे पहले दूध से ही स्वागत करते हैं और जी हां अगर दुर्भाग्य वश किसी प्राणि को अपनी माँ का दूध न मिले तो उसका दुष्परिणाम उम्र भर भोगना पड़ता है। स्वास्थ्य सम्पदा को सुरक्षित रखने में दूध की महत्ता किसी से छिपी नही है। खाद्य एवं खान–पान के स्वाद में विविधता लाने में दुग्ध उत्पादों का कोई जोड़ नहीं है।

हमारी सभ्यता संस्कृति में दूधो नहाओं और दूध की नदियां बहने की लोकक्तियां ऐसे ही नही बनी थीं बल्कि हमारे पशुधन और दूध की महत्ता को दर्शाती हैं। दूध से जुड़े हैं हमारे गो पशु जो हमें दूध, खाद, ऊर्जा आदि प्रदान करते हैं। भगवान राम और कृष्ण के युग से ही गोपालन और दुग्ध व्यवसाय सम्मान जनक आय का स्त्रोत माना जाता रहा है। गो ग्रास, गोधन गोघृत, गो दान हमारे यहाँ की परम्पराओं में बसे हैं। पंचगव्य की महिमा को तो आज विज्ञान ने भी मान्यता दी है।

यदि वेद, पुराण और इतिहास को टटोलें तो उन्नत नस्ल के पशु हमारे समाज में आपस में ईर्ष्या के कारण बने हैं। राजा महाराजा, ऋषि, मुनियों की कामधेनु, नंदिनी सरीखी गाय अनमोल सम्पदा रही है। राजा दिलीप की गोसेवा का वर्णन कालीदास ने बहुत भावुकता पूर्ण किया है। कृष्ण की गोप्रियता से कौन परिचित नहीं है। गोविंद, गोपाल भगवान के प्रिय नाम है।

स्वतन्त्र भारत में पशुपालन और डेरी व्यवसाय का विकास

जैसे ही हमारा देश आज़ाद हुआ हमारे योजना निर्माताओं ने देश के सर्वागींण विकास के लिए विविध योजना गठित की विशेष रूप से कृषि और डेयंरिग के विकास की ओर हमारे योजना निर्माताओं का ध्यान आर्कषित हुआ। पंचवर्षीय योजनाओं में डेयरिंग के विकास में अनेक नीतियॉ विकसित की गयी और विज्ञान के पंख लगाकर डेरी व्यवसाय सारे भारत में फलफूल रहा है और देश की अर्थव्यवस्था और पोषण सुरक्षा एवं आय की स्त्रोत जुटाने में पशुपालन एक स्वतन्त्र उद्योग के रूप में जाना, माना जा रहा है।

विश्व के मानचित्र पर प्रथम दुग्ध उत्पादक देश में भारत की प्रतिष्ठा और गौरव, गरिमा दिन प्रतिदिन प्रगति की ओर है। दुग्ध की गंगा लाने के इस भगीरथी प्रयास में विविध संस्थानों, डेरी शिक्षण, संस्थाओं, प्रसार कार्यकर्ताओं, वैज्ञानिकों और नयी डेयरी तकनीकी विकास की विशेष भूमिका रही है। सौभाग्य से डेयरिंग से जुड़े विविध अनुसंधान और वैज्ञानिकों के अथक प्रयासों से डेरी विज्ञान एक क्रमबद्ध प्रगतिशील विज्ञान के रूप में विकसित हुआ है और विविध मुखी डेरी आविष्कारों ने डेरी व्यवसाय को अति आधुनिक उन्नत व्यवसाय बना

दिया है। कृषि के मुख्य घटक के साथ डेरी व्यवसाय न केवल ग्रामीण परिवेश बल्कि आधुनिक भारत की छवि को निखारने मे महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

आधुनिक डेरी पशुपालन के महत्वपूर्ण पहलू

डेरी व्यवसाय अधिक दुग्ध उत्पादन से जुड़ा है। सभी अनुसंधान प्रयासों का केन्द्र बिन्दु दुग्ध उत्पादन बढाना है और दुग्ध उत्पाद प्रणाली को सस्ता बनाना हैं जिससे पशुपालकों और कृषकों का हित हो सके।

आधुनिक डेरी पशुप्रबन्धन के निम्न आधार स्तम्भ हैं

1. पशु प्रजनन प्रबन्धन
2. पशु पोषण प्रबन्धन
3. पशु स्वास्थ्य प्रबन्धन
4. दुग्ध संसाधन स्वच्छ दुग्ध उत्पादन एवं दुग्ध उत्पाद निर्माण

आधुनिक डेरी पशु प्रजनन प्रबन्धन

अधिक दुग्ध उत्पादन बढ़ाने में आधुनिक प्रजनन तकनीकियों के विकास ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हमारे वैज्ञानिक प्रयासों के फलस्वरूप डेयरिंग को आगे तक ले जाने में विविध नयी तकनीकियां उपलब्ध हैं जिससे पशु नस्ल संवर्धन तेजी से होता है और दुग्ध उत्पादन बढ़ता है।

उन्नत नस्ल के पशु डेरी व्यवसाय के अभिन्न अंग

आधुनिक तकनीकियों के विकास से देश में उन्नत नस्ल के पशु विकसित हुए है। विशेष रूप से संकर नस्ल के पशु हमारे देश में तेजी से बढे है और दुग्ध उत्पादन बढाने में उपयोगी है। जिन क्षेत्रों में दूध की बिक्री की व्यवस्था अच्छी है और पशुओं के लिये चारा दाना उचित मात्रा में उपलब्ध है वहां ये पशु दुग्ध–उत्पादन में कारगर है। संकरण प्रजनन पद्धति से विकसित पशु सारे देश में लोकप्रिय है। आज के समय के कामधेनु कहे जा सकते हैं क्योंकि इन पशुओं का दुग्ध उत्पादन कई गुना बढ़ जाता है। पहली बार ब्याँने की आयु कम होती है। इसके अतिरिक्त प्रजनन की उन्नयन और प्रजनन तकनीकी भी श्रेष्ठ पशु नस्ल संवर्धन में उपयोगी है। पशुपालकों को श्रेष्ठ नस्ल के पशु पालने चाहिए जो कि सफल डेरी उद्योग का पहला सिद्धांत है कृत्रिम गर्भाधान उन्नत नस्ल संवर्धन के लिए वरदान है। वैज्ञानिक पद्धति में पशुपालन में कृत्रिम गर्भाधान ने महत्वूपर्ण भूमिका निभायी है। क्योकि कृत्रिम गर्भाधान पद्धति श्रेष्ठ गुणवत्ता वाले पशुओं की तेजी से वृद्धि की है। साथ ही श्रेष्ठ दुधारू नस्ल का ही संवर्धन होता है। रोगों की संभावना कम रहती है। उचित समय पर गर्भाधान, प्रशीतित वीर्य का उपयोग आदि बहुत से पहलू हैं जो सफल पशु पालन से जुड़े हैं।

दुग्ध क्रान्ति लाने में डेरी पशु पोषण की उपयोगी तकनीक

अधिक दुग्ध उत्पादन का मूल मंत्र श्रेष्ठ नस्ल के पशुओं का चयन किया जाना है फिर उनको ताजा स्वच्छ पोषण प्रदान किया जाये जिससे पशु अधिक दूध दें। पशु आहार सस्ता हो इसके लिये वैज्ञानिको ने पशु की आवश्यकता, दुग्ध, स्वास्थ्य एवं परिस्थितियों को ध्यान में रखकर विविध तकनीकियां विकसित की हैं। जिनको प्रयोगशाला में जन्म देकर पशुपालकों तक पहुंचाया जा चुका है। अन्य पशु पालक भी इनको अपना कर प्रगतिशील पशु पालक बन सकते हैं जिसमें कुछ तकनीकियॉ जैसे फसल अपशिष्ट का यूरिया उपचार,

सम्पूर्ण पशु आहार, यूरिया शीरा खनिज पिंड, गूदा पल्पसंरक्षण, बाई बास प्रोटीन पद्धति, खनिज प्रौद्योगिकी आदि तकनीकियां विकसित की है, जो कि प्रयोगशाला के विविध स्तर पर परखी गई हैं और पशुपालकों तक पहुंचायी जा रही हैं। दूध की गंगा लाने वाली श्रेष्ठ नस्ल की गाय दुग्ध उत्पादन बढ़ाने के लिए विशेष उपयोगी हैं।

स्वस्थ पशु सफल डेरी उद्योग की नींव

डेरी व्यवसाय को विज्ञान सम्मत और आधुनिक रूप देने में पशु स्वास्थ्य रक्षा प्रबन्धन, पहलू महत्वपूर्ण है और यह सच है कि स्वस्थ पशु ही सफल डेरी उद्योग की नींव है। इसलिए पशु के स्वास्थय और रोग की रोकथाम के लिये टीकाकरण सारिणी विकसित है जिनको अपनाकर पशु के स्वास्थ्य रक्षा की जा सकती है क्योंकि पशु रोग ग्रस्त होने का सीधा प्रभाव दुग्ध उत्पादन पर पड़ता है। अतः पशुपालकों को पशु स्वास्थ्य रक्षा प्रबन्धन के पहलुओं पर विशेष ध्यान देना चाहिए। इसके अतिरिक्त पशु आवास एवं अन्य प्रबन्धन का प्रभाव भी दुग्ध उत्पादन पर पड़ता है।

स्वच्छ दुग्ध उत्पादन जन स्वास्थ्य एवं डेरी उद्योग की सफलता का आधार

हमारे आहार में स्वच्छ दूध के महत्व को देखते हुए स्वच्छ दुग्ध–उत्पादन और श्रेष्ठ गुणवत्ता वाला दुग्ध उत्पाद निर्माण डेरी व्यवसाय का एक महत्वपूर्ण पहलू है जिसका महत्वपूर्ण सम्बन्ध समाज के स्वास्थ्य से है। स्वच्छ दूध जहां अमृत तुल्य है वहीं अस्वच्छ दूध मानवस्वास्थ्य के लिये घातक और बीमारियों को फैलाने वाला है। अतः वैज्ञानिकों का ध्यान इस ओर आर्कर्षित हुआ है और अनेक तकनीकियां एवं पैकेज विकसित किये हैं जिनको अपनाकर पशुपालक स्वच्छ दुग्ध उत्पादन कर सकते हैं। विशेष रूप से जब भारत दुग्ध उत्पाद निर्यात की स्थिति में हैं तो स्वच्छ दुग्ध उत्पादन एवं श्रेष्ठ गुणवत्ता वाले उत्पाद निर्माण की अनिवार्यता भी है।

सुख समृद्धि के प्रतीक दुग्ध एवं दुग्ध उत्पाद

जहां पशुपालन हमारी सभ्यता, संस्कृति के अभिन्न अंग है वहीं दुग्ध और दुग्ध उत्पाद हमारे आहार के महत्वपूर्ण अंग है। दुग्ध पर सबका अधिकार हो और उसको पूरा करना हमारी चुनौती है। पोषण और खाद्य सुरक्षा में दुग्ध उत्पादों की बहुत भूमिका हैं साथ ही दुग्ध एवं दुग्ध उत्पाद सम्पन्नता आर्थिक प्रगति सुख, समृद्धि के प्रतीक माने जाते हैं। यही कारण है कि वैज्ञानिक पद्धति पर दुग्ध उत्पादन के साथ ही वैज्ञानिक तरीके से दुग्ध उत्पादों के निर्माण के उपकरण विकसित है तथा डेरी उत्पाद की तकनीकी विकसित हैं जो डेरी उद्योग जगत को नये आयाम देने वाली है। परम्परागत उत्पादों जैसे गुलाब जामन, रसगुल्ला, कुल्फी, रसमलाई, बासुन्दी, चीज़ को पुर्न तैयार करने के फार्मूले विकसित किये गए है। चीज, पनीर, लस्सी को विविध स्वादों के पेश किया गया है। खोआ और छैना से बनी मिठाईयों की नयी तकनीक विकसित की जा चुकी है साथ ही आरोग्य कारी खाद्य, हर्बल घी, प्रोबायोटिक दही की तकनीक भी अब उपलब्ध है और औद्योगिक स्तर पर अपनाने के लिये तैयार है। निश्चय ही इस क्षेत्र में किये गये प्रयास भविष्य में पोषण एवं खाद्य सुरक्षा की चुनौतियों का समाना करने में सक्षम होगें और डेरी व्यवसाय एक सक्षम सशक्त उद्योग के रूप में गाँव शहर, देश में फलता फूलता रहेगा।

❁ ❁ ❁ ❁ ❁

हम हिन्द के वासी है, हिन्दी में ही बोलेंगे, राष्ट्रीयता के इस महामंत्र को जनमानस में घोलेंगे।

डा. ज्योतिष कुमार झा

दुधारू पशुओं में दूध उत्पादकता वृद्धि के लिए आनुवांशिक प्रजनन नीति एवं योजनाएं

रमेश कुमार सिंह, अवतार सिंह, मंजू नेहरा, विलास डोंगरे एवं अश्वनी कुमार
राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

भारत में विभिन्न पशुधन (18वीं पशुधन गणना 2007 के अनुसार) गौवंश, भैंस, बकरी तथा भेड़ों की संख्या 199.08, 105.34, 190.54 तथा 71.56 मिलियन क्रमशः है। डेरी पशुओं से समस्त दूध उत्पादन कर विश्व में भारत पिछले कुछ दशकों से निरन्तर सर्वोच्च दूध उत्पादक देश की यथास्थिति बनाए हुए है। भारत की वार्षिक दूध उत्पादन दर (4 प्रतिशत) विश्व दूध उत्पादन दर (2.1 प्रतिशत) की तुलना में दोगुनी है। भारत ने सन् 2007–08 में 104.8 मिलियन टन दूध का उत्पादन किया जबकि सन् 2008–09 उत्पादन लक्ष्य 110 मिलियन टन रखा गया था।

योजना आयोग (भारत सरकार) के अनुसार भारत में सन् 2021–22 में दूध की अनुमानित माँग 180 मिलियन टन निर्धारित की गई है। यह अनुमानित माँग, भारत के वर्तमान बढ़ते सकल घरेलू उत्पाद तथा दूध आधारित निर्यात को ध्यान में रखते हुए, 200 मिलियन टन से भी अधिक जाने की सम्भावना है। भारत पिछले 15 वर्षों से प्रतिवर्ष 3 मिलियन टन की दर से दूध उत्पादन में बढ़ोत्तरी कर रहा है, परन्तु भारत को सन् 2021–22 के अनुमानित दूध लक्ष्य की प्राप्ति के लिए, वार्षिक दूध उत्पादन वृद्धि दर 3 मिलियन टन से बढ़ाकर 6 मिलियन टन करने की आवश्यकता है। विश्व के अन्य देशों की तुलना में पशुधनों की संख्या भारत में बहुत अधिक है, परन्तु दूध उत्पादकता प्रति पशुधन बहुत कम है। भारत में दोगुना वार्षिक दूध उत्पादन दर प्राप्ति के लिए, राष्ट्रीय स्तर पर ऐसे कदम उठाने की आवश्यकता है जिसमें वर्तमान प्रति पशुधन की दूध उत्पादकता में वृद्धि हो तथा, दूध संग्रह एवं व्यापार के बुनियादी ढाँचा बढ़ाने में सहायक हो। सन् 2021–22 के अनुमानित दूध लक्ष्य प्राप्ति के लिए, वर्तमान देशी गायों की दूध उत्पादन क्षमता 2.09 लिटर से 2.5 लिटर, संकर नस्ल गायों दूध उत्पादन क्षमता 6.53 लिटर से 8.5 लिटर तथा भैंसों दूध उत्पादन क्षमता 4.4 लिटर से 6.0 लिटर बढ़ाने की आवश्यकता है। इस लक्ष्य की प्राप्ति, पशुधनों की आंनुवांशिक क्षमता में सुधार, सुनियोजित प्रजनन नीति द्वारा लाकर ही अपेक्षित की जा सकती है।

प्रजनन नीतियाँ

भारतीय पशुपालकों को अपने सीमित संसाधनों एवं प्रतिकूल वातावरण में विभिन्न (देशी नस्ली तथा संकर गायें और देशी एवं नस्ली भैंसें) स्वस्थ एवं मजबूत पशुधनों की आवश्यकता होती है जो उनका सभी जरूरतों या आजीविका को लम्बे वक्त तक पूरा करने की क्षमता रखता है। पशुधनों की इन क्षमताओं की प्राप्ति के लिए विभिन्न राज्यों को अपने कृषि–मानसून वातावरण, चारा–दाना उपलब्धता तथा पशुपालको की रूचि को ध्यान में रखते हुए अपने क्षेत्र विशेष के लिए प्रजनन नीतियाँ बनाने की आवश्यकता है। इससे पशुपालक बहुत लाभन्वित होगें।

राष्ट्रीय डेरी विकास बोर्ड ने निम्नलिखित मार्गदर्शिका विकसित की है जो राज्यों को अपने प्रजनन नीति बनाने में सहायक है। यह मार्गदर्शिका राज्यों की मानसूनी वातावरण एवं पशुपालकों की सम्पन्नता पर आधारित है। राज्यों की प्रजनन नीतियाँ सरल एवं लागू करने लायक होनी चाहिए। इन नीतियों को विभिन्न पशुपालकों, सहकारी संस्थाओं, सरकारी एवं गैर–सरकारी संस्थानों, पशुचिकित्सा महाविद्यालयों इत्यादि की सहमति से तैयार करना चाहिए।

पशुधन प्रजनन नीति मार्गदर्शिका

गायों की प्रजनन नीति मार्गदर्शिका

1. विषम वातावरण

क) सीमित संसाधनों वाले पशुपालकों को चाहिए कि अपने देशी गायों की अपग्रेडिंग अपने ही देशी या नस्ली सांडों से ही करायें। अपने देशी नस्ली गायों में प्रजनन उसी नस्ल की सॉँड द्वारा ही करवायें। संकर गायों में विदेशी नस्लों की आनुवाशिकता 50 प्रतिशत तक ही रखें।

ख) संपन्न पशुपालकों को चाहिए कि अपने देशी गायों की अपग्रेड़िंग अपने ही देशी सॉँडों या देशी नस्ली सॉँड़ों या विदेशी नस्ली सॉँडों द्वारा ही करायें विदेशी नस्ली सॉँड़ों की आनुवांशिक स्तर 50–75 प्रतिशत के बीच रखें।

2. अनुकूल वातावरण

क) सीमित संसाधनों वाले पशुपालकों को चाहिए कि अपने देशी गायों कि अपग्रेडिंग अपने ही देशी सांडों या देशी नस्ली सॉँडों या विदेशी नस्ली सॉँडों द्वारा ही करायें। विदेशी नस्ली सॉँडों की आनुवांशिक स्तर 50 प्रतिशत के समकक्ष ही रखें।

ख) सम्पन्न पशुपालक अपने देशी गायों का संकरण विदेशी नस्लों के सॉँडों द्वारा करवाना चाहिए और उसका विदेशी आनुवांशिक स्तर 50–75 प्रतिशत के बीच होना चाहिए।

भैंसों के लिए प्रजनन नीतियाँ

भैंसों में अनुवांशिक सुधारने के लिए

निम्नलिखित दो प्रजनन नीतियाँ लागू करनी चाहिएँ।

(1) अपग्रेडिंग :

गैर–नस्ली भैंसो के अनुवांशिक विकास के लिए उनका प्रजनन नस्ली भैंसों तथा मुर्राह, नीली रावी, मेहसाना आदि के उत्ष्ट सन्तति पीरक्षित सॉँड़ों द्वारा करना चाहिए, इसमें उनकी सन्तति की उत्पादन क्षमता में कम से कम तीन गुणा वृद्धि हो जाएगी।

(2) चयनात्मक प्रजनन :

नस्ली भैंसों तथा मुर्राह, नीली राबी, सुरती, मेहमाना, भदावरी आदि के अुनवांशिक विकास के लिए सॉँड़ों का सन्तति परीक्षण भैंसों के प्रजनकं मान के आघार पर चुनाव करके (चयनात्मक) प्रजनन करना चाहिए, इससे हर वर्ष लगभग 1–1.5 प्रतिशत आनुवंशिक विकास दर प्राप्त हो जाएगी।

पशुओं में उच्च अनुवांशिक क्षमता प्राप्ति की रणनीति एवं योजनाएं

पशुओं में सतत् अनुवांशिक विकास मुख्य रूप से सॉँड एवं सॉँड की माता के सही चयन तथा चयनित सॉँड के अधिकतमक प्रयोग से प्राप्त हुआ है। अधिक दर से पशुओं में आनुवांशिक विकास के लिए निम्नलिखित सुविधाओं की जरूरत है।

1. बुनियादी सुविधा जैसे भवन उपलब्धता, जो सांडों का रख–रखाव, आनुवांशिक परीक्षण, उच्च श्रेणी की वीर्य उत्पादन तथा रखाव, कृत्रिम एवं प्राकृतिक प्रजनन इत्यादि।
2. तरल नाइट्रोजन संग्रह एवं वितरण प्रणाली के बुनियादी सुविधाओं का निर्माण करने की आवश्यकता है।

3. पशुपालक के पशुओं से प्राप्त उत्पादन आँकड़ों का संग्रह तथा आँकड़ों के विश्लेषण से उत्पन्न तथ्यों को उन तक पहुंचाने की बुनियादि सुविधायों को स्थापित करने की आवश्यकता है।

भारत में अपेक्षित आनुवांशिक सुधार की प्राप्ति के लिए वर्तमान में कृत्रिम गर्भाधान का दायरा विभिन्न पशुओं में 20 प्रतिशत से बढ़ाकर 50 प्रतिशत सन् 2021–22 तक करने की नितांत आवश्यकता है। इस लक्ष्य को प्राप्ति के लिए निम्नलिखित कार्य योजना लाकर करने की आवश्यकता है।

1. कृत्रिम गर्भाधान की संख्या 45 मिलियन से बढ़ाकर 150 मिलियन करने की आवश्यकता हैं
2. वीर्य स्ट्रा की उत्पादन संख्या 50 मिलियन से बढ़ाकर 140 मिलियन करने की आवश्यकता है।
3. लगभग संतति परिक्षित साँडों की उत्पादन संख्या 2700 साँड प्रतिवर्ष करने की आवश्यकता है। इसके अलावा एक लाख साँडों की आवश्यकता प्राकृतिक प्रजनन के लिए है।

विभिन्न नस्लों की पशुओं से संतति परीक्षण पश्चात् उल्लेखित साँडों की संख्या (2700 साँड) प्राप्त करने की आवश्यकता है। जिन नस्लों की पशुओं में संतति परीक्षण तत्कालिक सम्भव नहीं है, उनमें वंशावली आधारित चयन करने की आवश्यकता है, जैसे कान्केरेज गुजरात में, राठी राजस्थान में इत्यादि। उच्च श्रेणी के विदेशी साँडो, वीर्य तथा भ्रूणों का आयात विकसित देशों से निरंतर करते रहना चाहिए। भारत में वर्तमान वीर्य उत्पादन केन्द्रों की संख्या 49 से बढ़ाकर 54 उत्पादन केन्द्र करने आवश्यकता है, जो 150 मिलियन वीर्य स्ट्रा उत्पादन लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अनिवार्य है।

इन उत्पादित वीर्य स्ट्रा को पशुपालकों के द्वार तक पहुंचाने की जरूरत है। इसके लिए देश में विभिन्न स्थानों पर 60,000 नये कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र खोलने की जरूरत है जो वर्तमान में मात्र 75,000 केन्द्र ही खुले है। यह भी आवश्यक है कि अधिक संख्या में पेशेवर लोगों को कृत्रिम गर्भाधान से जोड़कर, उन्हें पशुपालकों की आवास तक कृत्रिम गर्भाधान के सेवा प्रदान करने हेतु प्रोत्साहित करना चाहिए। इन कार्यो का ब्योरा सम्पूर्ण रूप से संग्रहित तथा इससे उत्पन्न तथ्यों को आदान–प्रदान करने के लिए केन्द्रीय डेटाबेस की निर्माण करना आवश्यक है। इससे नीति निर्माणकर्ताओं एवं सेवा प्रदानकर्ताओं को सहायता मिलेगी। भारत सरकार द्वारा नयी प्रजनन नीति विधि विधेयक लानी चाहिए जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि पशु पालक अपने पशुओं की प्रजनन मुख्यतः संतति परीक्षित साँड एवं कृत्रिम गर्भाधान द्वारा ही करवा सकने में समर्थ हो।

निष्कर्ष

पशुओं का संतुलित आनुवांशिक विकास के लक्ष्य प्राप्ति के लिए, बुनियादी सुविधाओं का निर्माण, साँड एवं वीर्य उत्पादन के लिए आवश्यक हैं। साडों का अधिकतम प्रयोग कृत्रिम एवं प्राकृतिक गर्भाधान के लिए करना चाहिए। साँड चयन के लिए उत्पादन आँकड़ा संग्रहण की बुनियादी सुविधा निर्माण तथा इस उत्पादन आँकड़ा का साँड चयन में प्रयोग अगली पीढ़ी की प्राप्ति के लिए करना चाहिए।

❁ ❁ ❁ ❁ ❁

ज्ञान–विज्ञान के किसी भी विषय की सक्षम अभिव्यक्ति हिन्दी में सर्वथा संभव है और अंग्रेजी पर आश्रित रहने की धारणा एकदम निरर्थक है।

डा० फादर कामिल बुल्के
(विदेशी प्रख्यात भाषाविद)

दीमक एवं उनका प्रबंधन

एस. के. पाण्डेय

गन्ना प्रजन्न अनुसंधान संस्थान (क्षेत्रीय केंद्र), करनाल

दीमक जमीन में रहने वाले सामाजिक कीट हैं जो स्व निर्मित घोसलों में जमीन के नीचे काफी गहराई में छोटी से बड़ी कालोनियों में लाखों की संख्या में रहते हैं। जिनका अपना परिभाषित कीट समूह है जिसके अंतर्गत अभी तक दो हजार से अधिक प्रजातियों की पहचान हो पाई हैं यद्यपि की और प्रजातियों की पहचान बाकी है। कीट गणों में, आइसोसेरा गण, जिसमें दीमक आतें हैं, आर्थिक रुप से काफी महत्वपूर्ण है। दीमक की क्षति करनें की क्षमता उनकी संख्या पर निर्भर करती है। वे मुख्यरुप से जमीन के नीचे ही रहतें है परन्तु भोजन की तलाश में ऊपर आतें है। दीमक की कुछ प्रजातियाँ जमीन के ऊपर लकड़ियों या अन्य भोज्य पदार्थो में भी रहती हैं। दीमक उन सभी पदार्थों को उपना भोजन बनाते हैं जिनमें सेलूलोज पाया जाता है। दीमक के द्वारा भवनों में लगी लकड़ियों से बने दरवाजों, खिडकियों, अलमारी, छतों में लगी लकड़ियों फूस से बनी छप्परों कागज से बने काफी, किताबों, रजिस्टर एवं कपड़ों के साथ–साथ प्रायः सभी प्रकार की फसलों, जैसे अनाज, गेहूँ, ज्वार, बाजरा, धान, सब्जियों, दलहनी, तिलहनी, मूंगफली, कपास, गन्ना, घासों, बानिकी फसलों, तथा अन्य वनस्पतियों पर अपना जीवन निर्वाह करनें के दौरान बुवाई से लेकर कटाई तक उनकी वृद्धि की विभिन्न अवस्थाओं में उनको क्षतिग्रस्त कर देतें हैं। पशुपालन एवं मुर्गी पालनगृहों में प्रयुक्त लकड़ियों के अलावां भंडार गृहों में भंडारित अनाजों एवं चारों, बीजों आदि को दीमक उन्हें खाकर मिट्टी में बदल देतें हैं जिससे काफी नुकसान होता है। दीमकों का प्रकोप अस्पतालों, पुस्कालयों, कार्यालयों, कचहरी, दुकानों, विद्यालयों यानी की मनुष्यों के हर आवश्यक विभिन्न आयामों पर होता है जिन पर इन्होंने अपना कब्जा जमा लिया है।

दीमक समुदाय

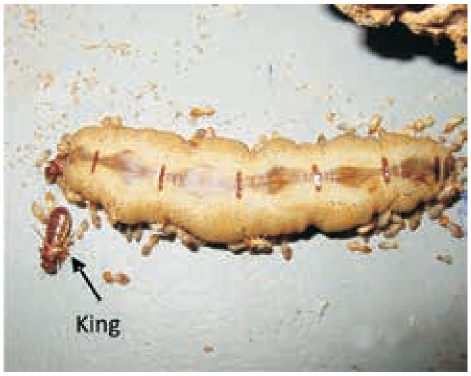

दीमक की कालोनी में रहने वाले सदस्यों में बहुरुपता पाई जाती है। एक कालोनी में एक नर तथा एक मादा जिन्हें क्रमशः राजा एवं रानी कहतें हैं। राजा एवं रानी के साथ–साथ पूरी कालोनी की रक्षा हेतु सैनिकों की एक बड़ी सेना होती है। कालोनी का सारा काम–काज कर्मचारी दीमकों के जिम्मे होता है जो कालोनी के निर्माण, विकास, टूट–फूट की मरम्मत, सफाई, भोजन व्यवस्था से लेकर सभी सदस्यों को अलगा–अलग अपने मुखांग से भोजन भी करातें हैं। राजा एवं रानी का कार्य केवल प्रजन्न का ही होता है। सैनिक एवं कर्मचारी बाँझ होते हैं। दीमक के पूरे समुदाय में केवल रानी ही लगातार अंडे देने की मशीन की तरह लगभग 2000–36000 अंडे प्रति दिन देती है। जिनसे कालोनी के नए सदस्यों की उत्पति होती रहती है। पूर्ण वृद्धि प्राप्त रानी का नाप लगभग 6.0X1.3 सेमी का हाता है जिसमें 10 प्रतिशत उसका उदर ही होता है जिसके चलते वह चलनें फिरनें तथा किसी कार्य को करनें में असमर्थ होती है। एक कालोनी में रानी का जीवन सामान्य अवस्था में 5–15 वर्षों तक का होता है परन्तु कभी–कभी यह पचास वर्षों तक जीवित रहती है। वास्तव में रानी हमेशा कर्मचारियों द्वारा घिरी होती है जो इसकी देखभाल के साथ–साथ इसके द्वारा दिए गए अंडों को अंडा भण्डार गृह में पहुंचाते रहतें हैं। कालोनी में केवल एक ही नर (राजा) होता है जो हमेशा रानी के साथ उसके बगल में रहता है और माप में रानी से काफी छोटा परन्तु अन्य सदस्यों से बड़ा होता है। कर्मचारी दीमक अपने कालोनी में फंगस बगीचा भी लगातें हैं जिन पर मशरुम की खेती करतें हैं। फंगस बगीचा का प्रयोग दीमक अपने बंकर के रुप में भी करतें हैं। फंगस बगीचे में बनीं सुरगों में विभिन्न प्रकार के सैनिक तैनात रहतें हैं जो अपनी कालोनी पर हमला करनें वाले शत्रुओं से कालोनी की

रक्षा करतें हैं। सैनिकों के मुखांग अस्त्र की भांति बने होतें हैं तथा कुछ सैनिकों के मुखांग ऐसे भी होतें है जिनका प्रयोग वे रासायनिक तौर पर कर अपने शत्रुओं का अपनी कालोनी के पास फटकने नहीं देतें हैं। कुछ सैनिक ऐसे भी होतें हैं जो अपने शिर के पिछले हिस्से से बंकर के सुरंगों का प्रवेश द्वार बंद रखतें हैं जिनमें इनके प्राकृतिक शत्रुओं का प्रवेश नहीं हो पाता है। दीमक के छोटे–छोट बंकर पूरी कालोनी में कई जगहों पर बने होते हैं और इन्हीं बंकरों में रानी दीमक द्वारा दिए जाने वाले प्रतिदिन हजारों अण्डों को रानी के राजसी कक्ष से कर्मचारी दीमकों द्वारा एक एक अंडे को ढोकर अनवरत भंडारित किया जाता है। दीमक कालोनी का अस्तित्व जब खतरे में होता हे उस परिस्थिति में कर्मचारी दीमकों द्वारा अपने कुछ सदस्यों को विशेष प्रकार का पौष्टिक आहार दिया जात है जिनको पंख निकल आतें हैं और ये पंखधारी दीमक मानसून की बरसात के दौरान प्रकाश स्त्रोतों पर आकर्षित होतें हैं जहाँ वे अपने पंखों को अपने शरीर से अलग कर एक दुसरे के पीछे रेल के डिब्बे की भांति आसपास जमीनों या दीवारों में बनी दरारों मे प्रवेश कर जातीं हैं और वहीं पर नयी कालोनी का निर्माण शुरु कर देतीं है जो बाद में विशाल कालोनी के रुप में परिणित हो जातीं हैं। एक दरार में केवल एक जोड़ी ही प्रवेश करतें हैं इसलिए प्रकाश पर आकर्षित एक झुण्ड से कई कालोनियों की भुमिगत स्थापना हो जाती है।

क्षति के लक्षण

दीमक जब कभी किसी पदार्थ को अपना खुराक बनातें हैं सर्वप्रथम उसको मिट्टी की परत से ढंक देते हैं और उसके अंदर उसे समाप्त कर मिट्टी में परिवर्तित कर देतें है। सामान्यता खड़ी फसल में दीमक द्वारा क्षति कहीं–कहीं छोटे–छोटे टुकडों में की जाती है। फसल के पौधों की जड़ों को दीमक द्वारा खा लिए जाने के फलस्वरुप पौधे पीले पड़कर मुरझा कर गिर जातें है तथा खीचने पर आसानी से हाथ में आ जाते हैं। दीमक ग्रस्त पौधों की पुरानी पत्तियां पहले तथा क्रमशः बाद में नयी पत्तियां मुरझाती हैं। ग्रस्त पौधों के निचले हिस्से में दीमक के खाने के निशान के साथ साथ उनमें सुरंग सी बनी होती है तथा मिट्टी भी भरी होती है। दीमक का प्रकोप प्रायः दोमट भूमि एवं सूखाग्रस्त क्षेत्रों में जहाँ सिंचाई की समुचित सुविधा नहीं होती है उन क्षेत्रों में सर्वाधिक पाई जाती है। दीमक का प्रकोप मानसून के बाद अस्थाई रुप से कम हो जाता है यद्यपि मानसून के दौरान भी पौधों के नए कल्लों के साथ–साथ परिपक्व पौधे भी क्षतिग्रस्त हो जाते हैं। गंभीर क्षति की अवस्था में पौधों का पूरा निचला हिस्सा इनके द्वारा ख लिया जाता है और फसल सूख जाती है जिसके परिणामस्वरुप उपज में भारी कमी आ जाती है। कभी–कभी 6–7 सप्ताह उम्र की फसल में शत प्रतिशत नुकशान हो जाता है। इनके द्वारा पादप अवशेषों एवं बगीचों तथा जंगलों में गिरे पेड़ों के पत्तियों को खाकर वातावरण की सफाइ का भी कार्य करतें हैं। हालाँकि यह भी दीमक द्वारा एक प्रकार से कार्बनिक पदार्थो की क्षति ही की जाती है।

दीमक की खेतों में पाई जाने वाली संख्या किस कीटनाशी दवाई द्वारा अगर कम भी की जाती है तो भी कोई असर नहीं पड़ता है क्योंकि जब तक रानी जीवित है हर रोज मरने वालों से ज्यादा सदस्यों को पैदा करती है इसलिए दीमक के प्रभावशाली नियंत्रण के लिए रानी की मृत्यु सुनिश्चित की जानी चाहिए। लेखक नें दीमक नियंत्रण के लिए जमीन में बनी इनकी कालोनियों को खोदकर नष्ट करके अच्छा परिणाम प्राप्त किया है जो न की केवल अपनें फार्म पर अपितु भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान दिल्ली में भी सफलतम परिणाम प्राप्त हुए हैं। प्रस्तुत लेख में दिए गए फोटो प्राकृतिक रुप से स्वयं द्वारा लिए गए हैं।

दीमक प्रबंधन

- ★ खेत से फसल अवशेषों को एकत्रित कर उन्हें जला देनी चाहिए जिससे दीमक की खाद्य श्रींखला टूट जाने से संख्या कम हो जाती है।
- ★ खेत में कच्चे गोबर की खाद न डालें।

- दीमक प्रभावित क्षेत्रों में पत्तियों की मल्च न बिछाएं क्योंकि यह उन्हें आकर्षित करती है तथा आश्रय प्रदान कराती है।
- मानसून के दौरान पंखधारी दीमक दल जो नयी कालोनी के निर्माण के दौरान प्रकाश पर आकर्षित होते हैं को प्रकाश स्त्रोत के नीचे केरोसिन तेल मिश्रित पानी रखकर उन्हें मार देना चाहिए जिससे नयी कालोनी का निर्माण नहीं हो पाता है।
- खेत में बनीं दीमक की कालोनी को खोदकर नष्ट कर देने से दीमक द्वारा होने वाला नुकसान काफी हद तक कम हो जाता है।
- समय–समय पर लगातार सिंचाई करते रहनें से दीमक द्वारा की जाने वाली क्षती को कम करनें में सहायक होती है।
- खड़ी फसल में दीमक नियंत्रण हेतु क्लोरपायरीफास मिश्रित सूखी रेत (क्लोरपायरीफास 20 ई सी+रेत 50 किलोग्राम) को खेत में बिखेर कर सिंचाई कर देनें से या क्लोरपायरीफास 20 ई सी की 4 लीटर मात्रा/हेक्टर की दर से सिंचाई जल के साथ प्रयोग करने से कुछ समय के लिए फसल को बचाया जा सकता है। समान रुप से दवा के वितरण हेतु अस्पतालों में व्यवहृत मरीजों को पानी चढ़ाने वाली नली एवं बोतल का प्रयोग किया जा सकता है।
- सामान्यता खड़ी फसल में दीमक द्वारा क्षति कहीं–कहीं छोटे–छोटे टुकड़ों में की जाती है ऐसी दशा में केवल प्रभावित हिस्सों में उपस्थित पौधों की जडीय भाग के आसपास ही मिट्टी को क्लोरपायरीफास 20 ई सी की 5 मिली लीटर मात्रा/लीटर पानी के साथ बने घोल का हजारे की सहायता से तर कर देने से कम खर्च और कम समय में प्रभावित क्षेत्रफल में दीमक का नियंत्रण किया जा सकता है।
- दीमक द्वारा निर्मित घरौंदों के छिद्रों में अल्युमिनियम फोस्फिड की 2 गोली/छिद्र की दर से या क्लोरपायरीफास के उक्त घोल की 20–30 लीटर मात्रा/घरौंदे की दर से प्रयोग कर घरौंदों में उपस्थित दीमक परिवार को समाप्त किया जा सकता है। घोल की मात्रा घरौंदे के आकार के अनुसार बढ़ाई घटाई जा सकती है।

किसी देश में विदेशी भाषा को राजभाषा के रूप में स्वीकार नही करना चाहिए। इससे राष्ट्रीय अस्मिता नष्ट होती है।

डा. अनन्तशयनम् आयंगर

मातृभाषा का अनादर, मॉ के अनादर के समान है, जो देश मातृभाषा का अपमान करता है। वह दश कहलाने लायक नही।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी

डेरी दुग्ध पदार्थ बनाने के लिए उपयोगी तकनीकी विकास

सुरेश कनौजिया एवं योगेश खेतरा
राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

भारत में दूध एवं दूध से बने पदार्थो का इतिहास बहुत पुराना है। हमारे सभी प्राचीन ग्रन्थों में दुग्ध पदार्थो को अमृत तुल्य माना गया है। भारतीय डेरी उद्योग ने पिछले तीन दशक में अति प्रशंसनीय उन्नति की है। दुग्ध उत्पादन 1971–72 में 23.4 मिलियन टन था जो 2010–11 में 114 मिलियन टन हो गया है। इस उत्पादन से भारत विश्व में दुग्ध उत्पादन में प्रथम स्थान रखता है। दुग्ध उत्पादन की वृद्धि दर 4 प्रतिशत प्रतिवर्ष अनुमानित की गई है। जबकि विश्व उत्पादन में 2 प्रतिशत की कमी अनुमानित है। पोषण की दृष्टि से दूध ही एकमात्र ऐसा खाद्य पदार्थ है जिसको लगभग आहार कहा जा सकता है। सभी मानव जाति के लिए दूध एक आदर्श खाद्य पदार्थ है। दूध में अनेक पोषक तत्व मौजूद हैं जो कि किसी अन्य खाद्य पदार्थ में नही मिलते हैं। दूध में हमें प्रोटीन, वसा, कार्बोहाईड्रेट, खनिज तथ सभी विटामिन प्राप्त होते हैं। दूध में पोषक तत्व अनुकूल अनुपात में पाये जाते हैं जिसके फलस्वरूप उनका पाचन एवं अवशोषण ठीक तरह से होता है। दूध से कई तरह के स्वादिष्ट पौष्टिक एवं स्वास्थ्यवर्धक पदार्थ बनाये जाते हैं।

आज हमारे देश के सामने सबसे ज्वलन्त समस्या है कृषि एवं प्रौद्योगिकी उत्पादन को बढ़ाने की। कृषि एवं औद्योगिक उत्पादन की कमी के कारण नव–युवकों को नौकरी नहीं मिलती है जिससे प्रतिदिन तरह–तरह की समस्याएं खड़ी होती जा रही है तथा इसको यदि सही रूप से लागू किया जाये तो यह और भी कारगर सिद्ध हो सकता है। इसलिए सरकार ने डेरी को भी एक महत्वपूर्ण ''टेक्नोलोजी मिशन'' माना है और इसका पंचवर्षीय योजना में महत्वपूर्ण स्थान है। डेरी उद्योग गांव तथा शहर दोनों के रहने वालों का जीवन स्तर ऊँचा उठाने में बहुत सहायक सिद्ध हो सकता है। पशु–पालन कृषि उत्पादन में केवल पूरक का ही काम नहीं करता बल्कि भूमिहीन किसानों के लिए जीवन यापन का एक प्रमुख साधन बन गया है। लेकिन आज भी दुग्ध उत्पादन का पूरा–पूरा लाभ ग्रामवासियों को नहीं मिलता। इसका कारण यह है कि जब दुग्ध उत्पादन बढ़ता है तो साधारणतया दूध का मूल्य गिर जाता है। इसके कारण दुग्ध उत्पादकों को पारिवारिक कीमत भी नहीं मिल पाती। दूसरे दूध इतनी जल्दी खराब होता है कि उसे अधिक समय तक सही रूप में नही रखा जा सकता। इसलिए किसान को विवश होकर दूध को कम मूल्य पर ही बेचने के लिए बाध्य होना पड़ता है। इस प्रकार उनकी मेहनत का फल वे न उठाकर बिचौलिए उठाते हैं।

दुग्ध उद्योग का आर्थिक महत्व इस बात से स्पष्ट हो जाता है कि केवल दूध एवं दुग्ध उत्पादन ही राष्ट्रीय आय में लगभग 1 लाख 17 हजार करोड़ रूपए का योगदान करते हैं। यह योगदान और बढ़ाया जा सकता है यदि दूध एवं दुग्ध पदार्थो को सुरक्षित रखने तथ बनाने में आधुनिक तकनीकी का प्रयोग किया जाए। इस उंद्देश्य की प्राप्ति के लिए राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल लगातार प्रयत्न करता रहता है। यहाँ वैज्ञानिकों ने बहुमूल्य दूध को विभिन्न पदार्थो के रूप में सुरक्षित रखने की तरह–तरह की तकनीकियों का विकास किया है जिससे दूध को लम्बे समय तक केवल सुरिक्षत ही नहीं किया जा सकता बल्कि कीमती पदार्थो को बनाकर उनकी आमदनी भी बढ़ाई जा सकती है।

इस संस्थान में दुग्ध पदार्थो की तकनीकियों में काफी विकास किया गया जिसका संक्षिप्त वर्णन निम्न हैं:

1. देशी दुग्ध पदार्थ

देशी दुग्ध पदार्थो में पनीर, खोआ, छैना, मक्खन तथा घी का विशेष महत्व है। बहुत अधिक मात्रा में दूध इन पदार्थ के लिए प्रयोग किया जाता है।

पनीर: यह हमारे देश का एक प्रमुख दुग्ध पदार्थ है। पहले तो यह देश के पश्चिमोत्तर भाग में अधिक प्रचलित था लेकिन अब यह पूरे देश में लोकप्रिय हो रहा है। पनीर उत्पादन में मुख्य तीन समस्याएं हैं। एक तो इसके उत्पादन के लिए उन्नत तकनीकी का अभाव, दूसरे इसका जल्दी खराब हो जाना तथा तीसरे इसका मंहगा होना। इन कारणों से इस तकनीक का पूरा पूरा फायदा न तो उत्पादक को हो पाता है और न ही उपभोक्ता को। इन समस्याओं

को दूर करने के तरीके राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान के वैज्ञानिकों ने अब ढूंढ निकाले हैं। पनीर का निमार्ण अब व्यापक पैमाने तथा लघु पैमाने पर आसानी से किया जा सकता है। पनीर जो एक सप्ताह में शीत में खराब हो जाता था अब एक माह तक बहुत आसानी से रखा जा सकता है। यदि पनीर को तल कर रखा जाये तो यह लगभग चार माह तक खराब नहीं होता। यदि पनीर को निर्जिवीकृत कर दिया जाए तो यह सामान्य तापक्रम पर लगभग दो माह तक रखा जा सकता है।

पनीर का उत्पादन मूल्य घटाने के लिए तरह–तरह की नई विधियाँ निकाली गई हैं। उदाहरणार्थ पहले गाय का दूध पनीर बनाने के लिए उपयुक्त नहीं समझा जाता था। यह माना जाता था कि अच्छा पनीर केवल भैंस के दूध से ही बनाया जा सकता है। लेकिन अब गाय के दूध से भी अच्छा पनीर बनाया जा सकता है। ऐसी विधि का भी विकास किया गया है जिससे अब पनीर शुष्क दुग्ध चूर्ण, क्रीम या मक्खन मिलाकर भी बनाया जा सकता है।

इसी प्रकार पहले यह माना जाता था कि अच्छा पनीर बनाने के लिए भैंस के दूध में कम से कम छः प्रतिशत वसा का होना आवश्यक है। अधिक वसा के कारण एक तो पनीर मंहगा हो जाता था तथा दूसरे समाज के वह लोग जो अधिक वसा का सेवन नहीं करना चाहते इससे वंचित रह जाते हैं। इसलिए अब पनीर बनाने की ऐसी तकनीकी ढूँढ निकाली गई है जिससे कम वसा वाला पनीर भी बनाया जा सकता है। इसी प्रकार पनीर में अधिक वसा, अथवा कौलेस्ट्रोल के स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव को घटाने के लिए ऐसी विघि का विकास किया गया है जिससे सपरेटा दूध तथा वनस्पति वसा या तेल को मिलाकर अच्छी किस्म का पनीर बनाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त अब पनीर सोयाबीन तथा मूंगफली से भी बनाया जा सकता है जो बहुत सस्ता पड़ता है और अच्छे स्वास्थ्य के लिए बहुत उपयुक्त है। आज का उपभोक्ता अल्प वसा युक्त भोज्य पदार्थ व प्राकृतिक स्वस्थ भोजन के उपयोग के प्रति जागरूक है। पहले के प्रयासों में कम वसा एवं कम ऊर्जा युक्त पनीर स्किम मिल्क से बना पनीर के मानक पहचान की जरूरतों को पूरा करने में असफल रहा। उपयुक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए वर्तमान अध्ययन अच्छे गुणवत्ता वाले कम वसा युक्त पनीर, जिसमें कुछ डायटरी फाइबर तथा सोया फाइवर एवं इनसुलिन का उपयोग करते हुए पनीर में कार्यिक व सेंसरी गुणों का विकास करने की दिशा में एक प्रयास किया गया और फाइबर युक्त अल्प वसा पनीर की तकनीकी विकसित की गई है।

खोयाः यह हमारे देश का एक बहुत ही प्रचलित दुग्ध पदार्थ है। पुराने जमाने से यह दूध को संरक्षित रखने का एक महत्वपूर्ण साधन प्रदान करता है। इससे विभिन्न प्रकार की मिठाईयाँ बनाई जाती हैं जैसे बर्फी,कलाकन्द,गुलाबजामुन आदि। खोआ उद्योग में भी मुख्य रूप से दो सम्स्याएं हैं, एक तो इसकी व्यापक पैमाने पर बनाने की एक समुचित तकनीकी की कमी तथा दूसरे इसके शीध्र खराब होने की प्रवृष्टि। हमारे संस्थान के वैज्ञानिकों ने एक ऐसे संयंत्र का विकास किया जिसमें लगभग 25 कि.ग्राम खोआ प्रति घन्टा बनाया जा सकता है। इसी प्रकार एक संयंत्र राष्ट्रीय डेरी विकास बोर्ड, आनन्द में बनाया गया है इसमें 40 कि.ग्रा. खोया प्रति घन्टा संघनित दूध से बनाया जा सकता है। संस्थान में एक ऐसा खोआ– पाउडर बनाया गया है जो लगभग 6–9 माह तक सामान्य तापमान पर सुरिक्षत रखा जा सकता है जबकि सामान्य खोया शीत में भी केवल एक सप्ताह तक ही ठीक रहता है। इस खोआ पाडडर से लगभग सभी खोये की मिठाईयाँ बनाई जा सकती है।

छैनाः यह एक महत्वपूर्ण दुग्ध पदार्थ है। इससे संदेश तथा रसगुल्ला जैसी मिठाईयाँ बनती हैं। साधारणतया गाय के दूध का छैना अच्छा माना जाता है। भैंस के दूध के छैने की मिठाई अच्छी नहीं बनती। लेकिन इस संस्थान में ऐसी तकनीकी का विकास किया गया जिससे भैंस के दूध से भी अच्छा छैना तथा इसकी मिठाई बनाई जा सकती है।

निम्न वसा युक्त गुलाब जामुन मिश्रणः पारम्परिक गुलाब जामुन की तरह किन्तु लगभग 40 प्रतिशत कम वसा के साथ उतने ही स्वाद से परिपूर्ण है जिसमें मिश्रण से बनी गोलियों को तलने के स्थान पर ओवन विधि से ही पकाया जाता है। इस मिश्रण को चार महीने से अधिक कम तापमान पर रख कर भंडारण किया जा सकता है।

त्वरित पुर्नगठन बासुंदी मिश्रणः बासुंदी पश्चिम भारत की एक परम्परागत दुग्ध निर्मित मिठाई है। नई तकनीक द्वारा बनाई गई बासुंदी को पानी में उबाल कर पाँच से सात मिनट तक पकाया जाता है और पारम्परिक तरीके से बनी बासुंदी जैसा ही क्रीम युक्त, खुशबुदार और मलाई जैसा स्वाद मिलता है। यहाँ सूखा मिश्रण उपभोक्ता की सुविधा के लिए सुलभ है तथा छः महीने तक सामान्य तापमान पर भी रखा जा सकता है।

त्वरित पुर्नगठन रसमलाई मिश्रण: रसमलाई एक पारमपरिक आन्नदायक मिठाई है जिसमें छैने से बनी टिक्की, मलाई और चीनी मिश्रित होती है। नई तकनीक से बने सूखे मिश्रण में सूखी हुई टिक्की, दुग्ध पाऊडर और चीनी का मिश्रण है जिसे दस मिनट में तैयार कर खाया जा सकता है। यह सूखा मिश्रण सामान्य तापमान पर छः महीने से अधिक रखा जा सकता है तथा इस विकसित मिश्रण की निर्यात क्षमता भी पर्याप्त है।

त्वरित पुर्नगठन खीर मिश्रण: नई तकनीक द्वारा बनाई गई खीर के सूखे मिश्रण में आसानी से धुलनशील चावल के दाने, दुग्ध पाऊडर और चीनी सम्मिलित है जिसे गर्म पानी में मिलाकर पाँच मिनट तक पका कर तैयार की जा सकती है। यह खीर मिश्रण परम्परागत सुगंध और स्वाद से पूर्ण है तथा व्यापक पैमाने पर विपणन ओर उपभोक्ता की समय की बचत की सुविधा के ज्यादा अवसर प्रदान करता है।

अर्जुन (जड़ी बूटी) हर्बल घी: घी में अर्जुन के निचोड़ को सम्मिलित करके घी की गुणवत्ता को और बढ़ाया गया है जिससे हृद्‌य रोग के विचारो को दूर किया जा सकता है तथा बड़े स्तर पर उत्पादन के लिए अपनाया जा सकता है।

2. दही–स्वास्थ्यवर्धक किण्वित पदार्थ

किण्वित दुग्ध पदार्थो का हमारे भोजन में विशेष महत्व है। इसकी पोषकता ही अधिक नहीं होती है बल्कि इनके प्रयोग से शरीर में कुछ बीमारियों के रोकथाम के लिए प्रतिरोधक भी पैदा होते है। इसलिये किण्वित दुग्ध पदार्थो को स्वास्थ्यवर्धक माना जाता है। आजकल के अनुसंधानों से यह सिद्ध हो गया है कि किणवित दुग्ध पदार्थो के सेवन से हृद्‌य रोग,उच्च रक्त चाप, कैंसर,दाँत सड़न, अमाशय व आन्त्र सम्बन्धी आदि बीमारियों के लिए शरीर में प्रतिरोधक क्षमता पैदा होती है। देश में खासतौर पर दही,लस्सी, मिस्ठी दही, श्रीखण्ड, योघर्ट एवं चीज जैसे किण्वित पदार्थो की गुणवता बढ़ाने की दशा में निरन्तर शोध कार्य किये जा रहे हैं। अभी हाल में इस संस्थान में शोधकार्य द्वारा फल युक्त दही के उत्पादन की तकनीकी का विकास किया गया है जिसके फलस्वरूप अधिशेष फलों व रस का उपयोग दूध के साथ मिलाकर दही बनाने में किया जा सकता है। ऐसा करने से फलों के दही की एक और किस्म उपलब्ध करायी जा सकती है।

रबड़ी एक परंपरागत अनाज पर आधारित किवित दुग्ध उत्पाद है। इसकी निर्माण कला हरियाणा, पंजाब, राजस्थान के ग्रामीण इलाकों तक ही सीमित है। पांरपरिक राबड़ी, बाजरा आटा और दूध के मिश्रण का प्राकृतिक किण्वन करके और उसमें पानी, नमक, मसाला डालके बनाई जाती है। घरेलू स्तर पर उत्पादन की अक्सर सीमित शोक जीवन के साथ अप्रत्यजीत संवेदी एवं सुक्ष्मजीव विशेषताओं के साथ होती है।

बाजरे की लस्सी

एक व्यावसायिक प्रक्रिया के संयोजन से बाजरे पर आधारित किण्वित दुग्ध पेय का निर्माण राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान में किया गया है। बाजरा लस्सी के लिए विकसित प्रौद्योगिकी में दूध के साथ अंकुरित बाजरे के आटे को मिलाकर गरम करना, ठंडा करना एवं उपयुक्त लव्टीक कल्वर के साथ वांछित स्तर तक किण्वित करना शामिल है। किण्वन प्रक्रिया उपरोक्त पानी और विकसित ॲडीविक्स को मिश्रित करना भी शामिल है। यह उत्पाद ठंडे रूप में सेवन किया जाता है।

3. चीज तकनीकी का विकास

बढ़े हुए दुग्ध उत्पादन और अतिरिक्त दूध की उपलब्धता के कारण प्रसंस्कृत दूध की माँग बाजार में बढ़ी है। इसके फलस्वरूप पैमाने पर विसंक्रमित दूध पेय और परम्परागत भारतीय डेरी उत्पादों के लिये प्रसंस्करण तकनीकी का विकास करने की आवश्यकता हुई। चीज सम्बन्धी अनुसंधान का मुख्य चीज प्रकार जैसे चेड्डार, गोडा, स्विस, मोजरेला ब्रिक का विकसित करना, भैस एवं गाय के दूध के बने चीज के पकने में लगने वाले समय को घटाना तथा उनकी बनावट और सुगन्घ को सुधारना और प्रोसेस्ड चीज तथा चीज स्प्रेड बनाना रहा है। इस सफलता प्राप्ति में चयनित उच्च कोटि के कल्चर्स, सूक्ष्मजीवी रीनेट्स का उपयोग और प्रोटिनेसेस तथा लाइपेसेज का नियंत्रित प्रसंस्करण पैसमीटर्स में उपयोग जैसे कारकों का योगदान रहा। यह दिलचस्प बात है कि भैंस के दूध में 10 प्रतिशत बकरी के दूध मिलाने में चीज की बनावट और गंध में सुधार होने के साथ–साथ परिपक्वता मूल में 25 प्रतिशत की कमी आई। चूंकि भैंस के दूध में उत्कृष्ट कोटि का मोजेरेला चीज बनता है, अतैव रीनेट जामन कगुलेशन और सीधे अम्लीकरण की बड़े पैमाने पर उत्पादन की तकनीकी का मानकीकरण किया गया। यह निर्यात के लिए पैक की गई।

मोजरेला चीज को शून्य से नीचे के तापक्रम पर 90 दिन तक संरक्षित रखने की तकनीक विकसित की गई। यह तकनीक निर्यात बाजारों के लिए उपयोगी है। प्रारम्भिक दौर से सूक्ष्मजीवी रीनेट के कारण तेज हो रही प्रोटियोलाइटिक क्रिया के कारण चीज में कड़वाहट बढ़ रही थी। इस कड़वाहट को कम करने के लिए तकनीकियों में उपयुक्त परिवर्तन किया गया ताकि भैंस के दूध से बनने वाले चीज का स्वाद सुधर सकें।

चीज के विशिष्ट गुण

चीज एक संतुलित आहार है इसमें उच्च कोटीन का प्रोटीन तथा वसा पाया जाता है। यह कैल्शियम, फासफोरस तथा विटामिनों का अच्छा स्त्रोत है। शाकाहारी लोगों के लिये यह विशेष रूप से एक उत्तम भोजन है। चीज स्वास्थ्य के लिये बहुत लाभप्रद है। यह मनुष्य की आंत में हानिकारक बैक्टीरिया की वृद्धि को रोकता है। चीज कैंसर विरोधी और दाँत के सड़न रोकने के लिए लाभदायक हैं। विदेशों में तो चीज नाश्ता, दोपहर के खाने के समय खाया जाता है। हमारे देश में इसका प्रचलन कम है परन्तु इसकी गुणवत्ता को देखते हुए अब इसकी खपत बहुत तेजी से बढ़ रही है। ब्रेड पर लगाने के लिये यह उपयुक्त है। पहले ब्रेड पर प्रायःमक्खन लगाया जाता था लेकिन अब अधिकतर लोग स्वास्थ्य की दृष्टि से मक्खन नहीं खाना चाहते हैं। दूसरे पदार्थ जो ब्रेड पर लगायें जाते थे वे जैम और जैली थे। आजकल इनको जंक फूड कहा जाता है। इस प्रकार ब्रेड का सबसे आदर्श साथी चीज है।

चीज की किस्में

किसी भी खाद्य पदार्थ या दुग्ध में इतनी विविधता नहीं पायी जाती है जितनी चीज में विश्व में लगभग 2000 प्रकार की चीजों का विवरण मिला है। यद्यपि कई में कोई विशष अन्तर नही होता। चूंकि विभिन्न प्रकार की चीज सदियों से बनाई जा रही है। उनके बनाने के बाद परिपक्वन की विधि तथा समय में विविधता पाई जाती है, जिसके फलस्वरूप चीज में तरह–तरह के गंध तथा सरंचना पायी जाती है। कुछ चीज बहुत फीकी होती है तो कुछ बहुत ही तेज गंध वाली होती है। कुछ संरचना में बहुत ही नरम होती है तो कुछ पत्थर के समान कड़ी। कुछ चीज बनाने में तुरन्त बाद खाने योग्य हो जाती है तो कुछ महीनों या सालों का समय परिपक्व के लिए ले सकती है। कुछ चीजों में वसा अधिक होती है तो कुछ में बहुत कम। इस प्रकार चीज में इतनी विविधता पायी जाती है कि वह किसी भी प्रकार की जरूरत को पूरा कर सकती है। उदाहरण के लिये बढ़ते बच्चे खेलकूद में अधिक ऊर्जा खर्च करते हैं। उनके लिये अधिक वसा वाली चीज जैसे चेड्डार,गोडा, इमेनटल, प्रौसेस इत्यादि उपयुक्त होगी तथ बड़े–बूढ़े या जिनको वजन कम करने की जरूरत है उनके लिये कम वसा वाली चीज जैसे काटेज लाभदायक होगी। दुनिया से सबसे अधिक प्रचलित वैरायटी चैड्डार है। इसके बाद क्रमशः गौडा और इमेन्टल का नम्बर आता है। आधुनिक युग में काटेज चीज के उत्पादन में बहुत तेजी से विकास हुआ है। क्योंकि इसमें वसा बहुत कम होती है जिससे वजन के प्रति जागरूक लोग इसका सेवन अधिक करते हैं। काटेज चीज को कम समय में तैयार करने के लिये गुणवत्ता बढ़ाने और लम्बे समय तक सुरक्षित रखने की दृष्टि से इस संस्थान में तकनीक विकसित की गई।

भारत में सबसे अधिक चेड्डार चीज का उत्पादन होता है और इसे मुख्यतः प्रोसेस चीज के रूप में खाया जाता है। जब चैड्डार चीज भैंस के दूध से बनाई जाती है तो यह पकने में अधिक समय लेती है। दूसरे इसकी गुणवत्ता भी उतनी अच्छी नहीं होती जितनी गाय के दूध से । यदि भैंस के दूध से चेड्डार चीज के बजाय गौडा चीज बनाई जाए तो यह अपेक्षाकृत अच्छी गुणवत्ता भी बनेगी तथा इसके पकने में समय लगेगा। आजकल सारे विश्व में फास्ट फूड के सेवन का प्रचलन है। पीजा एक ऐसा खाद्य पदार्थ है जिसका विस्तार इस देश में बहुत तेजी से हो रहा है। पीजा बनाने के लिए मोजरेला चीज का उपयोग होता है। पीजा की गुणवत्ता मोजरेला चीज की गुणवत्ता पर पूर्णतः निर्भर करती है। इस उददेश्य की पूर्ति के लिए भैंस, गाय,बकरी के दूध से व उनके मिश्रण से मोजरेला चीज बनाने की विधि का विकास किया गया है।

मेजरेला चीज एक मुलायम एवं शीध्र तैयार होने वाली चीज है जिसका उपयोग मुख्यतः पीजा बनाने में होता है। इसका उपयोग संसाधित चीज बनाने में एक सलाद के रूप में किया जाता है। यह चीज कम टिकाऊ है इसके शोध जीवन काल को बढ़ाने के लिए आवश्यक शोध कार्य किए गए हैं। जिसके फलस्वरूप इस चीज को प्रशीतन ताप पर तीन महीने तक सुरक्षित रखा जा सकता है। इस विधि मे चीज की संरचना, भौतिक व रसायनिक गुण, सुगन्ध और गुणवत्ता में कोई विशेष परिवर्तन नहीं होता है। मोजरेला चीज की दीर्घ जीवी बनाने के लिये मोजरेला कर्ड को उचित ताप पर इमलसीफायर व कैल्शियम लवणों के साथ पकाया जाता है और गर्म अवस्था में उपयुक्त पैकेज में भर दिया जाता है। मोजरेला चीज को दीर्धजीवी बनाने की यह एक उत्तम विधि है।

भारत में चीज की नई प्रकार जिसे फेटा चीज तकनीकी भैंस के दूध से तैयार करने की विधि विकसित की गयी है जो पहले किसी देश ने विकसित नही की है। यह चीज ग्रीस, मध्यपूर्व के देशों, यूरोपीय देशों में भी काफी लोकप्रिय है जिसको मध्यपूर्व के देशों में इस चीज के निर्यात के अवसर प्राप्त होंगें इसी तरह गाय व भैस के दूध से फाइबर युक्त एवं प्रोबयोटिक कवार्ग चीज का विकास किया गया है जो कि स्वस्थ्य की दृष्टि से उत्तम है।

4. दुग्ध पेय

विभिन्न प्रकार के दुग्ध पेयों की माँग बहुत बढ़ रही है। लस्सी का प्रचलन हमारे देश में बहुत हैं। साधारणतया यह दही से बनाई जाती है। जिससे इनके बनाने में अधिक समय लगता है। साथ ही कभी कभी जोरन के ठीक काम न करने से सारा दूध खराब हो जाता है। इसलिए हमारे संस्थान में ऐसी विधि का विकास किया है जिससे दूध में सीधे अम्ल डालकर लस्सी जैसा पेय बनाया जा सकता है। इसी प्रकार मक्खन बनाने के बाद जो छाछ बचता है इसमें एक विशेष प्रकार के जोरन के प्रयोग से बहुत अच्छा पेय बनाया गया है। पनीर, छैना या चीज बनाने पर जो जलीय भाग बचता है इससे भी एक अच्छा पेय–पदार्थ बनाया गया है। इसमे एल. एसिडोफिलस नामक जीवाणु को डाला जाता है जो हमारे पाचन–तन्त्र के लिए बहुत लाभकारी है।

संस्थान में पनीर व्हे/चीज व्हे में फल के रसा व गूदा को मिलाकर स्वास्थ्यवर्धक पेय विकसित किया है। इसी प्रकार पनीर व्हे जल जीरा की तकनीकी का विकास किया है जिससे काफी लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

प्रगामी अनुसंधान

राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान ने कुछ मूल्य संबर्धित उत्पादों को विकसित किया है जो कि छोटे, मध्यम और बड़े पैमाने पर उत्पादन के लिए तैयार है। इन नवविचारों से लाभ दोहन के लिए किसानों ओर अन्य डेरी प्रोसेसर को चाहिए की वह इन नवविचारों को अपनाएँ जिससे की उनकी लाभप्रदता बढ़े और साथ ही साथ यह नए उत्पाद सभी वर्गो के उपभोक्ताओं तक पहुँच पाए जिनमे स्वास्थ्य के प्रति जागरूक लोग भी शामिल है।

स्वास्थ्यवर्धक व्हे प्रोटीन

शिल्पा विज, दीपिका यादव, सुब्रोता हती, बिमलेश मान
राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

व्हे प्रोटीन दो प्रकार की दुध प्रोटीन में से एक है। व्हे, जो कि एक प्रकार का चीज़ (पनीर) उद्योग का उप उत्पाद है। व्हे प्रोटीन एक ग्लोबुलर प्रोटीन का संयोजन है जिसे व्हे से अलग किया जा सकता है। व्हे प्रोटीन अमीनो एसिडों का एक अति उत्तम स्त्रोत है और इसमें वसा और कोलेस्ट्रोल की कम मात्रा होती है। आरम्भ में व्हे और व्हे प्रोटीन को एक प्रकार का बेकार उत्पाद माना जाता था। लेकिन बाद में इसके पोषक गुणों का पता चला जो कि अत्याधिक उत्तम प्रोटीन से युक्त हैं। यह एक आम धारणा है कि व्हे प्रोटीन केवल खिलाड़ियों के लिए लाभप्रद है परन्तु वास्तव में यह सभी आयु वर्ग के लोगों के लिए स्वास्थ्य कारक है। आइऐ अब हम व्हे प्रोटीन के स्वास्थ्य लाभ के बारे में जाने।

पोषकता लाभ

व्हे प्रोटीन में उच्च स्तर के अमीनों एसिड जैसे कि मौलिक अमीनो एसिड शाखित श्रृंखला अमीनो एसिए जैसे कि लयूसिन और सीसटीन दोनों प्रकार के अमीनों एसिड व्हे प्रोटीन में पाये जाते हैं, वे शरीर में मांस पेशियों और प्रोटीन संशलेषण को बनाये रखते हैं। ल्यूसिन प्रोटीन संशलेषण और मांसपेशियों के विकास का कार्य करते हैं। इसलिए यह अथलीटस और खिलाड़ियों के लिए अत्यंत अनिवार्य माना जाता है। सीस्टीन शरीर में गलुटाथयोन बनाने के लिए अनिवार्य है। गलुटाथायोन एक एंटीऑक्सीडेंट है जो कि कैंसर रोधी गुणों के लिए जाना जाता है और यह प्रतिरक्षा प्रणाली को बढ़ाता है। व्हे प्रोटीन मांस पेशियों को शीघ्र पोषण प्रदान करते हैं। इसलिए इन्हें 'तेज प्रोटीन' कहा जाता है।

स्वास्थ्य लाभ

व्हे प्रोटीन वजन घटाने और वजन प्रबंधन में महत्वपूर्ण कार्य करते हैं। ये प्रोटीन हृदय स्वास्थ्य बनाने में, कैंसर के मरीजों को पोषण प्रदान करने में, याददाशत बढ़ाने में, शिशुओं के पोषण में तथा स्वस्थ उम्र बढ़ने में विशेष कार्य करते हैं।

वजन घटाने और वजन प्रबंधन

व्हे प्रोटीन बहुत कम वसा और कोलेस्ट्रोल युक्त है और यह पूर्व व्यायाम भोजन के रूप में लिया जाता है। यह प्रमाणित किया जा चुका है कि व्हे प्रोटीन शारीरिक संरचना को सुधारते हैं और शरीर से वसा घटाने को बढ़ावा देते है। इसमें सक्रिय घटक होता है जो कि भूख को कम करते हैं और वसा को कम करता हैं

कैंसर के मरीजों का पोषण: व्हे प्रोटीन वह अनिवार्य पोषक प्रदान करता है जो कि एक कैंसर मरीज को चाहिए। यह घुलनशील होते हैं और आसानी से पच जाते हैं और कैंसर रोगियों की प्रतिरक्षा प्रणाली को बढ़ावा देते है।

याददाशत बढ़ाने में विभिन्न अध्ययनों से यह प्रमाणित हो चुका है कि व्हे प्रोटीन याददाशत, संज्ञानात्मक प्रदर्शन और तनाव में प्रदर्शन को बेहतर बनाते है।

हृदय स्वास्थ्य:– प्रतिदिन के भोजन में यदि व्हे प्रोटीन को शामिल किया जाए तो ये हृदय विकार के जोखिम को कम करते हैं। यह उच्चताप और कोलेस्ट्रोल के स्तर को भी नियंत्रित करते है और इस प्रकार से हृदय विकारों से बचाते हैं।

मधुमेह:– व्हे प्रोटीन में जैविक मूल्य अधिक होता है इसलिए यह टाइप–2 मधुमेह से लड़ने का काम करते हैं। टाइप–2 मधुमेह से पीड़ित मनुष्य अपने भोजन में व्हे प्रोटीन को शामिल करके रक्त शर्करा स्तर को नियन्त्रित कर सकते हैं।

शिशु पोषण :– व्हे प्रोटीन शिशु आहार में शामिल किया जाता है क्योंकि यह उनकी स्वस्थ वृद्धि और विकास के लिए अनिवार्य हैं यह उन्हें पर्याप्त पोषण प्रदान करता है ये क्योंकि इसमें माँ के दूध जैसे घटक होते है। यह गर्भवती स्त्रियों के लिए भी लाभकारी हैं क्योंकि यह उन्हें शरीर की मांग के अनुसार प्रोटीन प्रदान करते हैं।

स्वस्थ उम्र बढ़ने में:– व्हे प्रोटीन सारकोपीनीया (Sarcopenia) नामक बीमारी से लड़ने में मदद करते हैं। यह रोग वृद्धावस्था और उसके साथ मांस पेशियों की कमजोरी से जुड़ा हुआ है। यह प्रोटीन क्षति को कम करता है और शरीर में प्रोटीन संशलेषण को बढ़ावा देता है।

इसके अतिरिक्त व्हे प्रोटीन घाव को ठीक करने में, प्रतिरक्षा प्रणाली को बेहतर करने में, खाद्य एलर्जी से लड़ने और शरीर के निर्विषीकरण में मदद करते है। व्हे प्रोटीन के विभिन्न स्वास्थ्य लाभ को देखते हुए इन्हें अपने प्रतिदिन के भोजन में ग्रहण करना आवश्यक है।

व्हे प्रोटीन को विभिन्न प्रकार से अपने भोजन में शामिल कर सकते है जैसे कि व्हे प्रोटीन पेय आजकल ये व्हे प्रोटीन पेय अधिकतर वजन घटाने में प्रयोग किए जा रहे हैं। यहां कुछ व्हे प्रोटीन शेक की विधियां बताई जा रही है। जो कि विशेषकर वजन घटाने में प्रयुक्त की जा सकती है। व्हे प्रोटीन शेक विशेषकर वजन घटाने में प्रयुक्त की जाती है क्योंकि ये पूर्ण प्रोटीन है और वसा रहित हैं। यह भूख को नियंत्रित करती है इसलिए वजन घटाने की प्रक्रिया मे मदद करती है।

- ★ यह प्रोटीन वजन घटाने वाले पेय के रूप में प्रयोग किये जा सकते हैं। यह प्रोटीन शरीर को इन प्रोटीन को पचाने के लिए अधिक कार्य करवाती हैं जिससे कि अधिक कलौरी खर्च होती है और यह वजन घटाने की प्रक्रिया को बढ़ाती है।
- ★ जब वजन घटाने की प्रक्रिया जारी होती है तब व्हे प्रोटीन उपभोग करने से शरीर की पतली मांस पेशियां बनी रहती हैं। अन्यथा शरीर में प्रोटीन और अमीनो एसिड कम होने से शरीर की मांस पेशियों से प्रोटीन कम हो जाता है और वे कमजोर हो जाती है।
- ★ इसके अतिरिक्त शरीर में व्हे प्रोटीन से वजन घटने का कारण यह है कि रक्त में शर्करा अवशोषण की दर कम हो जाती है। इन्सुलिन का स्तर कम हो जाता है जिससे कि शरीर में वसा कम होने लगता है।

व्हे प्रोटीन पेय बनाने की विधियां

1 . यह सबसे साधारण विधि है और वजन घटाने की सर्वोत्तम विधि है।

सामग्री

- ★ 2 चम्मच शर्करा रहित व्हे पाउडर
- ★ 1/2 कप वसा रहित दूध
- ★ 8–9 बर्फ के टुकड़े
- ★ 1 चम्मच शहद या कृत्रिम शर्करा (वैकल्पिक)
- ★ 1 चम्मच वनिला उद्धरण

विधि

- ★ व्हे प्रोटीन पाउडर को बलेंडर में अच्छी तरह से मिलाएं।
- ★ इसके बाद बाकी बची सामग्री डालकर अच्छी तरह से मिलाएं।

चाकलेट स्ट्राबेरी व्हे प्रोटीन पेय विधि

- ★ 2 चम्मच चाकलेट व्हे प्रोटीन पाउडर
- ★ 5–7 बर्फ के टुकड़े
- ★ 8–10 स्ट्राबेरी
- ★ 1/2–3/4 कप पानी

विधि:– सारी सामग्री को तब तक बलेंडर में मिलाएं जब तक यह गाढ़ा नहीं हो जाता और इसके तुरन्त बाद परोसें।

गर्मी के मौसम में गौ पशु पोषण प्रबंधन

सोहनवीर सिंह, एस.एस. कुण्डू, आर.सी. उपाध्याय,
आशुतोष, बीनम बालियान एवं मंगेश वैद्य
राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

गर्मी या थर्मल तनाव के कारण जब गायों का तापमान (गुदा) 101-3°F से 102-8 ° F तक बढ जाता है तब गायों को शरीर का सामान्य तापमान बनाये रखने में मुश्किल पैदा हो जाती है। भैंसों एवं गायों के लिए थर्मोन्यूट्रल जोन 5°c से 25 °c के बीच होता है। थर्मोन्यूट्रल जोन में सामान्य उपापचय क्रियाओं से जितनी गर्मी उत्पन्न होती है, उतनी ही मात्रा में पशु पसीने के रूप में गर्मी को निकालकर, शरीर का सामान्य तापक्रम बनाये रखते है। ऊपरी मध्य पश्चिम क्षेत्रों में साल के अधिकतर दिनों में तापमान सामान्य या थर्मोन्यूट्रल जोन से नीचे होता है। यद्यपि 2 या 3 महीने जहां पर तापमान थर्मोन्यूट्रल जोन को पार कर जाता है। इसी गर्मी तनाव अवधि के दौरान गायों में सामान्य तापक्रम को बनाये रखने हेतु कम खानपान, 10 से 25प्रतिशत कम दुग्ध उत्पादन, दूध मे वसा (प्रतिशत) में कमी, कम प्रजनन क्षमता, प्रतिरक्षा प्रणाली में कमी पायी जाती है, इसलिए अच्छे रखरखाव की आवश्यकता होती है।

पशुओं पर गर्मी का प्रभाव प्रमुखतया दो स्त्रोतों द्वारा होता है

1. पर्यावरण तापमान 2. उपापचय द्वारा उत्पन्न गर्मी

पर्यावरण गर्मी की अपेक्षा पोषक उपापचय द्वारा कम गर्मी उत्पन्न होती है, हालांकि जैसे दुग्ध उत्पादन और खान पान की मात्रा बढ़ती है तो पोषक उपापचय द्वारा जो गर्मी उत्पन्न होती है वह पर्यावरण स्रोत की अपेक्षा अधिक होती है। इसलिए अधिक दुग्ध उत्पादन करने वाले पशुओं में कम दुग्ध तथा दूध न देने वाले पशुओं की अपेक्षा जल्दी गर्मी का अनुभव होता है। गर्मी का प्राथमिक स्त्रोत पर्यावरण से सूर्य विकिरण और वायु तापमान में बढ़ोत्तरी होता है। यह अधिक सापेक्ष आर्द्रता और हवा के बहाव की कमी से प्रभावित होता है। सूर्य विकिरण के प्रभाव से पशुओं को छाया प्रदान करके बचाया जा सकता है।

पशुओं की शारीरिक क्रियाओं पर गर्मी के प्रभाव

पशुओं में एक सामान्य सीमा के भीतर शरीर के तापमान को सामान्य रखने के लिये कुछ शारीरिक क्रियायें देखने को मिलती है।

1. गर्मी के मौसम में पशुओं की श्वसन गति बढ़ जाती है जिससे पशु हांफने लगते है तथा मुँह के द्वारा अधिक पानी (लार) गिराते हैं जिससे पशु अपना शारीरिक तापक्रम कम कर पाते हैं तथा अधिक मात्रा में कार्बनडाइआक्साइड बाहर निकालते है।
2. गर्मी बढ़ने के कारण पशुओं के शरीर में बाई कार्बोनेट आयनों की कमी तथा रक्त के पी.एच. में वृद्धि हो जाती है।
3. गर्मियों में पशुओं के रूमन–रेटिकुलम में भोज्य पदार्थो की गति कम हो जाती है जिससे पाच्य पदार्थो के आगे बढ़ने की दर कम हो जाती है और रूमेन फैटी एसिड़ के साथ–साथ किण्वन में बदलाव आ जाता है तथा एसिटेट की मोलर प्रतिशतता में वृद्धि हो जाती है।

4. गर्मी बढ़ने के कारण त्वचा की ऊपरी सतह का रक्त प्रवाह बढ़ जाता है जिसके कारण आहार नाल तथा दूसरे अन्तः उत्तकों का रक्त प्रवाह कम हो जाता है।
5. गर्मी के समय में शुष्क पदार्थो का ग्रहण 50 प्रतिशत तक कम हो जाता है जिसके कारण गर्मी में दूध उत्पादन कम हो जाता है।
6. वातावरण का तापमान बढ़ने के कारण पशुओं में पानी की आवश्यकता बढ़ जाती है।

शुष्क पदार्थो का सेवन

गर्मी के मौसम में थर्मोन्यूट्रल जोन के मुकाबले 50 प्रतिशत तक शुष्क पदार्थो का सेवन कम हो जाता है जिससे पशुओं के दूध उत्पादन में भी कमी हो जाती है। पशु शुष्क पदार्थो का कम सेवन करके पाचन तथा पोषक उपापचय से उत्पन्न गर्मी को कम करते है। दुधारू पशु अधिक गर्मी के दौरान शरीर का सामान्य तापक्रम बनाये रखने हेतु 3–4 पांउड दुग्ध उत्पादन कम करते है इसलिए गुदा तापक्रम 101-5°F से अधिक बढ़ने पर कुल पाच्य पदार्थो की मात्रा बढ़ा देनी चाहिए।

गर्मियों में शुष्क पदार्थ और पोषक पदार्थो की खुराक कम हो जाती है, जिससे पशुओं के सामान्य तापक्रम को बनाये रखने हेतु पोषक तत्वों की आवश्यकता बढ़ जाती है पशु अधिक हांफने लगता है। साथ ही साथ आन्तरिक अंगों का रक्त प्रवाह कम हो जाता है जिससे उपापचय के लिये इन अंगों तक पोषक तत्व कम मात्रा में पहुंचते हैं। इस प्रकार, गर्मी तनाव के दौरान दूध उत्पादन के लिए कम पोषकतत्व उपलब्ध होते है।

दूध न देने वाली (शुष्क अवधि के दौरान) गायों पर गर्मी प्रभाव के दौरान शुष्क पदार्थो के सेवन के बारे मे कम जाना जाता है। यद्यपि, यह स्पष्ट है कि शुष्क अवधि के दौरान कम्पोजिट फीड़या शुष्क पदार्थो के सेवन में कमी के कारण प्रसव के समय स्वास्थय समस्याओं तथा बाद में स्तनपान के दौरान दुग्ध उत्पादन में कमी आ जाती है। शुष्क गायों में गर्भावस्था के अन्तिम तीन महीनों के समय गर्मी तनाव के प्रभाव के प्रति ज्यादा चौकन्ना रहना चाहिए और स्तनपान कराने वाली गायों के खानपान में बदलाव करना चाहिए।

पानी पोषक तत्व :– पानी, स्तनपान कराने वाले पशुओं तथा विशेष रूप से गर्मी तनाव के दौरान इन पशुओं में सबसे महत्वपूर्ण पोषक तत्व होता है। जैसे ही दुग्ध उत्पादन और शुष्क पदार्थो की मात्रा बढ़ती है, पानी की मात्रा भी बढ़ा देनी चाहिए। एक रिपोर्ट के अनुसार, पानी के सेवन व दुग्ध उत्पादन तथा पानी के सेवन व शुष्क पदार्थो के सेवन में एक गहरा सम्बन्ध होता है। दुग्ध उत्पादन के प्रति किलोग्राम पानी का सेवन उनके शुष्क पदार्थ, नमक और प्रोटीन सामग्री के आधार पर भिन्न–भिन्न हो सकता है। जैसे ही वातावरण के तापमान में वृद्धि होती है शरीर का तापमान भी बढ़ता है यद्यपि शरीर में जैसे ही पानी की कमी होती है, शरीर की निष्क्रियता बढ़ जाती है और शुष्क पदार्थो का सेवन घट जाता है।

दुधारू पशुओं को साफ एवं स्वच्छ ताजा पानी पिलाना चाहिए। पशु को पानी की आवश्यकता वातावरण की दशा एवं उसको दिये गये आहार पर निर्भर करती है। हरे चारे में पानी की मात्रा अधिक होने से पशु कम पानी पीते है, परन्तु दुधारू पशु को गर्मियों में कम से कम तीन बार एवं सर्दी में दो बार ताजा पानी जरूर पिलायें।

प्रोटीन :– गर्मी तनाव के दौरान गायों के खानपान में प्रोटीन की मात्रा को ध्यान में रखकर शुष्क पदार्थ खिलाना चाहिए। आवश्यकता से कम या ज्यादा कच्ची प्रोटीन का पशुओं को खिलाने से उनके शरीर में गर्मी

उत्पन्न होती है। पशुओं में प्रोटीन की कमी चारे की पाचन क्षमता को भी कम करती है, वही पर शरीर से यूरिया के संश्लेषण तथा निष्कासन में प्रोटीन की आवश्यकता होती है। अध्ययन के आकड़े दर्शातें है, कि गर्मी के दौरान कच्ची प्रोटीन की रूमेन में टूटने वाली प्रोटीन की मात्रा 61 प्रतिशत से ज्यादा नहीं होनी चाहिए। उपापचय की आवश्यकता से अधिक रूमेन प्रोटीन शरीर में अधिक उष्मा उत्पन्न करती है तथा यूरिया में परिवर्तित होकर पेशाब के साथ बाहर निकलती है।

रेशेदार :– गर्मी तनाव के दौरान, पशुओं में शुष्क पदार्थो का सेवन कम हो जाता है यद्यपि गर्मियों में वसा और अकार्बोहाइड्रेट पदार्थो की अपेक्षा फाइबर पदार्थो के सेवन से अधिक गर्मी (पोषक उपापचय और रूमन किण्वन द्वारा) उत्पन्न होती है। फाइबर पाचन के अन्तिम उत्पाद एसिटेट से शरीर में कम ऊर्जा मिलती है, वहीं पर अकार्बोहाइड्रेट पदार्थो या कार्बोहाइड्रेट पदार्थो के पाचन के अन्तिम उत्पाद प्रोपेयोनेट से अधिक ऊर्जा मिलती है और वसा से फाइबर, अकार्बोहाइड्रेट व कार्बोहाइड्रेट की अपेक्षा अधिक ऊर्जा मिलती है। इसलिए गर्मी के मौसम में रेशेदार चारों की मात्रा कम रखनी चाहिए। गर्मी के मौसम में चारे को पूर्ण मिश्रित राशन के तौर पर खिलाना अच्छा रहता है क्योंकि इसमें से पशु एकल हिस्से को अलग करके नही खा सकता, इसलिए पशु को सन्तुलित आहार मिलता है तथा दुग्ध उत्पादन नियमित रह सकता है।

वसा :– गर्म मौसम के दौरान, पशुओं की खुराक में वसा की मात्रा को शामिल करना चाहिए, क्योंकि वसा से कार्बोहाइड्रेट की अपेक्षा ढाई गुणा अधिक ऊर्जा प्राप्त होती है। वसा दूसरे फीड्स की अपेक्षा ऊर्जा का सबसे अच्छा स्रोत होता है और यह पाचन और उपापचय के दौरान कम गर्मी उत्पन्न करता है। स्टार्च और फाइबर की तुलना में वसा रूमन में कम गर्मी उत्पन्न करती है।

ग्लूकोस :– अध्ययन के आकड़े दर्शाते हैं कि ग्लूकोस के प्रीकर्सर (प्रोपीयोनेट) रूमेन में अधिकतम उत्पादन बनाये रखने के लिये एक प्रभावकारी रणनीति बनाते हैं। बहरहाल, रूमेन स्वास्थ्य मुद्दे के कारण अच्छी देखभाल के साथ अनाज की मात्रा बढ़ानी चाहिए। मोनेनसिन, रूमेन में अधिक प्रोपेयोनेट के उत्पादन के लिये एक सुरक्षित और कारगार तरीका होता है।

इसके अलावा मोनेनसिन तनाव की स्थिति के दौरान रूमेन की पी.एच. को स्थिर रखने में भी सहायक होता है। आमतौर पर प्रोप्लाईन ग्लाईकोल जल्दी स्तनपान में खिलाया जाता है लेकिन यह गर्मी तनाव के दौरान ज्यादा प्रोपियोनेट उत्पादन करने में भी एक प्रभावी तरीका होता है। जैव ईधन और ग्लिसरॉल आपूर्ति को बढ़ती माँग के साथ गर्मियों के महीनों के दौरान जुगाली करने वाले पशुओं के आहार में ग्लिसरॉल की प्रभावकारिता और सुरक्षा का मूल्यांकन करना होगा।

खनिज और विटामिन :– मनुष्य के विपरीत, पशु (बोवाइन), पौटेशियम को अपनी श्वेत ग्रंथियों से पसीने के स्त्राव के परासण नियंत्रक के रूप में उपयोग करते हैं। परिणामस्वरूप गर्मियों में पौटेशियम आयनों की आवश्यकता बढ़ जाती है और इसे आहार में समायोजित करना चाहिए। इसके अलावा आहार में सोडियम और मैग्नीशियम का स्तर बढ़ाना चाहिए जिससे कि वे पौटेशियम आयन के साथ इनटैसटाइनल अवशोषण में उपयोग कर सके। नियासिन एक प्रसिद्व उपचर्म वैसोडाइलेटर होता है। प्रारंभिक तथ्यों के आधार पर यह प्रदर्शित होता है कि नियासिन खिलाने से दुधारू गायों का शारीरिक तापक्रम कम होता है जिससे कि वे कम गर्मी का अनुभव करती है और इससे गर्मी सहने की क्षमता बढ़ती है।

चारे की उपलब्धता

बफर:– गर्मी के समय में बफर खिलाना पशुओं में निम्न कारणों से लाभकारी होता है:–

1. रेशे युक्त खुराक में रेशों का पाचन बढ़ा देते है या पशु जब चुन कर चारा खाते हैं तो बफर रूमन की पी.एच. अमलता बनाये रखने में सहायक होते है।
2. बफर में साधारणत: सोडियम आयन ज्यादा होते हैं, जो कि गर्मी के समय पशुओं की खुराक बढ़ा देते हैं, जिससे शुष्क पदार्थो का ग्रहण तथा दूध उत्पादन बढ़ जाता है।

कवक संवर्धन:– प्रयोगों के द्वारा ज्ञात हुआ है कि एस्परजिलस ओराइजा नामक कवक खिलाने से पशु का शारीरिक तापक्रम नियमित रहता है, जिससे पशुओं के ऊपर गर्मी का प्रभाव कम होता है तथा कवक संवर्धन रेशे युक्त आहार का पाचन बढ़ा देते है।

गर्मी तनाव के जैविक परिणाम:– जैविक तंत्र जिसके द्वारा गर्मी तनाव की वजह से पशुओं का दुग्ध उत्पादन और प्रजनन क्षमता आंशिक रूप से प्रभावित होती है, साथ ही साथ एडोक्राइन स्थिति, रूमिनेशन में कमी, और पोषक तत्वों की आवश्यकता बढ़ जाती है इससे पशुओं की और अधिक रखरखाव की जरूरत होती है, जिसके फलस्वरूप अधिक उत्पादन के पोषक तत्वों की उपलब्धता में कमी हो जाती है। ऊर्जा संतुलन में कमी के परिणामस्वरूप गर्मी तनाव के दौरान गायों के शरीर का वजन कम हो जाता है।

गर्मी तनाव और रूमन स्वास्थ्य:– लंबे समय तक गर्मी तनाव रूमन स्वास्थय पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। गर्मियों में गायों के मुँह से लार टपकने लगती है तथा उनकी श्वसन दर बढ़ जाती है, जिससे कार्बनडाइआक्साइड ज्यादा मात्रा में फेफड़ों से बाहर निकलती है। एक प्रभावी रक्त तंत्र बफरिंग पी.एच. के क्रम में, शरीर में बाइकार्बोनेट आयन का अनुपात 20:1 रखना आवश्यक होता है। हाइयरवेंटिलेशन के कारण रक्त में कार्बन–डाई–आक्साईड की मात्रा कम हो जाती है जिससे गुर्दे इस अनुपात को बनाये रखने हेतु बाइकार्बोनेट आयन को स्रावित करते हैं। यह बाइकार्बोनेट आयन (लार के माध्यम से) बफर तथा एक स्वस्थ रूमन की पी.एच. बनाये रखने के लिए उपयोग किया जाता है।

❋ ❋ ❋ ❋ ❋

हिंदी को भी कायदे से पढ़ना जरूरी है। हम समझते–हिंदी हमारी भाषा है इसलिए इसका क्या पढ़ना? बस इसी समझदारी में प्रगति नही हो रही है।

डा. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

प्रख्यात विधि विशेषज्ञ एवं पूर्व भारतीय उच्चायुक्त

शिशु दुग्ध आहार

अमरदीप कुमार एवं प्रतीक शर्मा
राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

प्रस्तावनाः– शिशुओं के लिए मां का दूध श्रेष्ठ आहार माना जाता है। शिशुओं के आहार के लिए मॉ के दूध का स्थान कोई और आहार नहीं ले सकता। इससे शिशु की वृद्धि के लिए अपेक्षित पोषक तत्व न सिर्फ सही अनुपात में मिलते हैं बल्कि साथ ही साथ नये परिवेश में पल रहे शिशु को ये संक्रामक जीवाणुओं से भी बचाते हैं।

शिशु दुग्ध आहार की आवश्यकता क्यों है?

1. कुछ माताएं स्तनपान नहीं करा पाती या कराना नहीं चाहती हैं।
2. औद्योगिक वृद्धि एवं शहरीकरण के परिणामस्वरूप आधुनिक जगत में बोतल से दूध पिलाने का चलन शुरू हो गया है।
3. कुछ माताओं को पर्याप्त मात्रा में दुग्ध स्त्रवण नहीं हो पाता है।
4. स्तन कैंसर और संचरित रोगों से ग्रस्त महिलाएं स्तनपान कराने में सक्षम नहीं होती है।

ऐसी ही विकट परिस्थितियों में माँ के दूध के स्थान पर शिशुओं के बहुमूल्य जीवन को बचाने के लिए माँ के दूध के विकल्प के रूप में शिशु दुग्ध आहार का उपयोग किया जाता है।

परिभाषा (PFA): खाद्य वस्तुओं के अपमिश्रण निवारण कानून (1976) के अनुसार शिशु दुग्ध आहार गाय के दूध या भैंस के दूध या दोनों के मिश्रण से बना वह दुग्ध उत्पाद है जिसका मानकीकरण कुछ विशेष कार्बोहाइड्रेट (शक्कर), डेक्सट्रोज, मालटोज, लैक्टोज, आइरन साल्ट और विटामिन मिलाकर किया जाता है। इसमें स्टार्च और एंटी ऑक्सीडेन्ट की मात्रा नगण्य होनी चाहिए। इसमें आर्द्रता अधिकतम 5% वसा 18% और 28% के बीच, कार्बोहाइड्रेट न्यूनतम 35% प्रोटीन न्यूनतम 20% अधिकतम 8-5% आइरन न्यूनम 4 मिली.ग्रा. प्रति 100 ग्राम, विटामिन न्यूनतम 15 अ.ई. प्रति ग्राम, विलेयता सुची स्प्रे ड्राइ और रौलर ड्राइ के लिए 2 और 15 क्रमशः होना चाहिए। उत्पाद में एस.पी.सी. 50000 और कौलीफार्म 10 प्रति ग्राम से कम होनी चाहिए। उत्पाद डब्बा बंद कंटेनर में पैक होना चाहिए और डब्बे में उपर उत्पादन की तिथि अंकित होनी चाहिए।

शिशु दुग्ध आहार के लिए भारतीय मानक (15:1547,1968)

विशिष्टता	आवश्यकता
आर्द्रता (अधिकतम)	9.5%
दुग्ध प्रोटीन (न्यूनतम)	20%
दुग्ध वसा (अधिकतम)	18 से 28%
कार्बोहाइड्रेट (न्यूनतम)	35%
भस्म (अधिकतम)	8.5%
अम्ल अघुलनशील भस्म (अधिकतम)	0.01%
विटामिन ए (IU/100 ग्राम)	1500
विटामिन डी (IU@100ग्राम)	400 से 800
आइरन (न्यूनतम)	4 मि. ग्राम/100 ग्राम
एस.पी.सी. (अधिकतम)	50000/ग्राम
कौलीफार्म (अधिकतम)	10/ग्राम

★ शिशुओं को 30 mg/दिन विटामिन सी की आवश्यकता होती है।

★ गाय और भैंस के दूध के साथ माँ के दूध की तुलना

विवरण	गायं	भैंस	माँ का दूध
आर्द्रता	86.6 %	84.2 %	87.7 %
वसा	4.6 %	6.6 %	3.6 %
प्रोटीन	3.4 %	3.9 %	1.8 %
लैक्टोज	4.9 %	5.2 %	6.8 %
भस्म	0.6 %	0.8 %	0.1 %

1. व्हे प्रोटीन के उच्च अनुपात (अनिवार्य अमीनो अम्ल से परिपूर्ण) की होने से मानव दुग्ध प्रोटीन का पोषणिक मान काफी उच्च होता है।
2. मानव दुग्ध में टौरिन विद्यमान होता है जो सिर्फ मानव दुग्ध में ही पाया जाता है। टौरिन कैल्सियम को अवशोषित करने में सहायक होता है।
3. गाय या भैंस के दूध की तुलना में मानव दूध की वसा गोलिकाएं बहुत ही छोटी होती हैं जिससे नर्म स्कंद बनने से शिशु का इसे पचाने में सहायक होती है।
4. मानव दुग्ध वसा में पॉलिअ संतृप्त वसा अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में होते है।
5. लैक्टोज अधिक मात्रा में होने के कारण इससे मस्तिष्क अवयवों का विकास सही ढंग से होता है और कुल ऊर्जा की 40% से अधिक ऊर्जा लैक्टोज द्वारा प्राप्त होती है जो कि ऊर्जा का सरलतम रूप है।
6. चूंकि मानव दूध में कैल्सियम, सोडियम, पोटाशियम एवं क्लोराइड निम्न मात्रा में होते हैं इससे शिशु के गुर्दो पर कम बोझ पड़ता है।
7. मानव दूध में 300 गुणा अधिक लाइसोजाइम है जो एक प्रति जीवाणुवीय घटक भी है।
8. मानव दूध के अन्य प्रति संक्रामक गुणाधर्म ; Ig.A, बीफीडस कारक एवं लैक्टोफेरिन के कारण से निर्मित है।
9. मानव दूध में लैक्टोज के अधिक मात्रा में होने के कारण आंत में पी एच काफी कम होकर रोगाणुओं की वृद्धि में रोकथाम करता है।

भारत में शिशु दुग्ध उत्पाद के प्रमुख उत्पादन

1. अमूल
2. ग्लैक्सो
3. नेस्ले
4. विजयस्प्रे
5. पराग

बनाने की विधि

कच्चा दूध

↓

दूध का मानकीकरण (फैट 0.609)
एस.एन.एफ.

↓

विटामिन और खनिज लवण का संयोजन

↓

शक्कर का संयोजन

↓

वाष्पीकरण

↓

शुष्कीकरण (स्प्रे ड्रायर)

↓

भंडारण

निष्कर्ष :–

माँ का दूध शिशु के लिए एक सर्वोत्तम आहार है। शिशु को सर्वप्रथम 06 महीने तक मॉ का दूध देना ही आवश्यक है। आज के औद्योगिक युग मे कामकाजी माताएं सही समय पर अपने बच्चों को स्तनपान नहीं करवा पाती है। इस समस्या के समाधान के लिए विश्व भर के वैज्ञानिकों ने मॉ के दूध के समान ही शिशु दुग्ध आहार बनाने का प्रयास किया है।

स्वस्थ माँ, स्वस्थ बालक

❁ ❁ ❁ ❁ ❁

हिन्दी वह भाषा है, जो भारत में सर्वत्र समझी जाती है, क्योंकि इसका व्याकरण भारत की अधिकांश भाषाओं के समान है और इसका शब्दकोश मिली–जुली संपत्ति है।

डा0 गिर्यसन (विदेशी प्रख्यात भाषाविद्)

पशु प्रजनन क्षमता बढ़ाने के विभिन्न घटक

रमेश कुमार सिंह, अवतार सिंह, मंजु मेहरा, विलास डोंगरे एवं अश्वनी कुमार

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

किसी भी कृत्रिम गर्भाधान योजना की सफलता विभिन्न घटकों या कारकों पर निर्भर करता है। ये घटक सॉड चयन से ही शुरूआत होकर, गायों की निषेचन क्षमता, कृत्रिम गर्भाधानकर्ता की योग्यता तथा स्वच्छ वातावरण तक है। पशुओं से उच्च प्रजनन क्षमता प्राप्ती कि परिकल्पना ये सभी घटकों को उच्च स्तर पर रखकर तथा अमल में लाकर ही की जा सकती है। कृत्रिम गर्भाधान की सफलता के लिए सामान्यतः 60 से 80 विभिन्न घटकों को सुचीब) किये जा सकते है जो कृत्रिम गर्भाधान तिथि की कुछ महीनों पूर्व से प्रारम्भ होकर ब्यॉंत के पश्चात् कुछ महीनों तक पाये जाते हैं। अतः सफल पशुाला प्रबंधक हर एक आने वाले दिनों का समुचित उपयोग अपने पशुओं की निषेचनता बढ़ाने के लिए करता है। अतः पशुपालक निम्नलिखित घटकों का उचित प्रबंधनन कर, पशुओं में उच्च प्रजनन या निषेचन क्षमता प्राप्त कर सकेंगें।

साँड

साँड को वीर्य उत्पादन करने योग्य होने के लिए उसे स्वस्थ्य, बिमारी रहित तथा प्रर्याप्त मात्रा में उच्च कोटि वीर्य प्रदान करने की क्षमता इत्यादि होने की आवश्यकता है। बहुत पहले से समझा आ रहा है कि कृत्रिम गर्भाधान द्वारा बीमारीयों का प्रसार घटना की आंशका कम रहती है। अगर सॉड स्वास्थ्य पर प्रर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया तो, बीमारी का प्रसार व्यापक हो सकता है। प्रत्येक वीर्य उत्पादन केन्द्र प्रमाणित वीर्य सेवा (सी०सी०एस०) संस्था के सदस्य ही होने चाहिए जो साँडों द्वारा वीर्य उत्पादन से कृत्रिम गर्भाधान तक सुरक्षित तथा बीमारी रहित होने का समुचित प्रबन्ध करती है। औसतन प्रत्येक सॉड को तीस (30) या अधिक रोगीय जाँचों से (बारह या अधिक बीमारियों के बचाव वास्ते) गुजरना चाहिए।

साँड स्वास्थ्य का निर्धारित मानक स्तर प्राप्त करने के बाद, उस से उच्च श्रेणी की वीर्य प्राप्त करने की आवश्यकता होती है। वीर्यो का उत्पादन पश्चात्, सुक्ष्मीक परीक्षण विभिन्न तकनीकों द्वारा किया जाता है। उसी साँड का वीर्य आगे कृत्रिम गर्भाधान के लिए उपयोग किया जाता है, जो इन परीक्षणों पर खड़े उतरते हैं, अन्यथा इसे (वीर्य) को प्रयोग में नहीं लाया जाता है। साँड़ जो आकस्मिक बीमारी से ग्रसित होते है उसे अस्थायी तौर पे कुछ दिनों के लिए वीर्य उत्पादन कार्य से वंचित कर दिया जाता है। इन सभी तीव्रमानकों के कारण, गायों में निषेचन तथा गर्भावस्था विभिन्नता में कमी आती है।

साँड़ों का स्वास्थ्य एवं वीर्य दक्षता क्षणिक होता है। जिस कारण कृत्रिम गर्भाधान हमेशा प्राकृतिक प्रजनन से ज्यादा लाभकारी होता है। प्राकृतिक प्रजनन में अगर स्वस्थ सॉड अस्वस्थ गायों के सम्पर्क में चला आता है तो साँडों का स्वास्थ्य हमेशा के लिए खराब हो जाता है। प्राकृतिक प्रजनन में एक बार ही प्रजनक शारीरिक क्षमता की पहचान की जाती है जहां कि कृत्रिम गर्भाधान में प्रतिदिन वीर्य उत्पादन के लिए प्रजनक शारीरिक क्षमता की पहचान की जाती है।

गाय

वीर्य जितना भी उच्च कोटि एवं दक्षता की हो, परन्तु इसका कोई प्रभाव गायों की त्रुटिपूर्ण निषेचन क्षमता पर नहीं पड़ता है। गाय, अगर एक बिमारी से ग्रसित होती है तो अनेक और बिमारियां एक के बाद एक उत्पन्न हो जाती है। ये सभी एक या अनेक बिमारीयां पशु प्रजनन क्षमता पर हानिकारक प्रभाव डालते है। पशुपालक अगर अपने गायों में स्वास्थ्य तथा प्रजनन सम्बन्धी समस्या पाते हैं तो उसी समय समस्याओं को ठीक या

आगे बढ़ने से रोकने के प्रबन्ध करते है। परन्तु वर्तमान पशु निषेचन क्षमता पिछले दो से तीन महीने की उत्तम प्रबंधनन के प्रतिबिंब होते है। अतः उसी प्रकार वर्तमान में गायों कि उत्तम प्रबंधनन अगले दो से तीन महीनों की पशुनिषेचन क्षमता को निर्धारित करता है।

पशुनिषेचन क्षमता को सबसे ज्यादा प्रभावित पशुपोषण करता है। पशुपोषण की अनदेखी सबसे ज्यादा पशुओं की उसके दीर्घकालीन दुग्ध उत्पादन क्षमता को प्रभावित करता है। गायों की शरीरिक क्षमता गणना 3.25 से 3.75 के बीच में होना निर्धारित किया गया है। जब गायों की शुष्क अवधि में जाने से लेकर निकलने तक के क्रम में, गायों कि शारीरिक गणना क्षमता 3.25 से 3.75 के बीच में होनी चाहिए, अगर गाय इस गणना के परीधि में नहीं हो तो तदनुसार उसे कम या ज्यादा पोषण देकर निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति करनी चाहिए।

कृत्रिम गर्भाधान–कर्ता

कृत्रिम गर्भाधान–कर्ता की योग्यता, दक्षता एवं निपुणता पशु निषेचनता के लिए आवश्यक होता है। कृत्रिम गर्भाधानकर्ता की ये सभी विशेषतायें निम्नलिखित कार्यो का सही निष्पादन करने के लिए आवश्यक है। कृत्रिम गर्भाधानकर्ता पशुओं की सही उष्णता एवं समय पहचाने में सफल है कि नहीं। ये नाइट्रोजन टैंक से वीर्य स्ट्रा निकालने, थयाउईग, कृत्रिम गर्भाधान गन में वीर्य स्ट्रा रखने, पशु के सर्विक्स में जीवित शुक्राणु की उच्च प्रतिशत मात्रा उपलब्धता, कराने में सक्षम है या नहीं। इनके अलावा, कृत्रिम गर्भाधानकर्ता को गन द्वारा सर्विक्स से होते हुए गर्भाश्य मे वीर्य रखने की निपुणता महत्वपूर्ण है। इन्हें पहली खंडी मादकता के लक्षण (फस्ट स्टैंडिग माउंट) से पहले देखी गई मादकता के लक्षण की पहचान करने में क्षमता होनी चाहिए। फर्स्ट के अन्तराल कृत्रिम गर्भाधान का सही समय 4–14 घंटा फर्स्ट स्टैंडिग माउंट के बाद होता है।

कृत्रिम गर्भाधान–कर्ता की अपनी स्वास्थ्य एवं स्वच्छता भी महत्वपूर्ण होता है।

वातावरण

पशु निषेचन के लिए बाहरी वातावरण एक प्रमुख घटक है। इनमें उष्ण मौसम तनाव सबसे प्रमुख घटक है। उष्ण या गर्म मौसम में गायों को ठंडा पानी एवं पंखा, फव्वारा इत्यादि की व्यवस्था करनी चाहिए। जानवरों की विभिन्न बीमारियों से बचाव हेतु, इनका सही अन्तराल पर स्वास्थ्य जांच सक्षम पशुचिकित्सक द्वारा होनी चाहिए।

पशु आहार में विभिन्न टॉक्सिन पाये जाते हैं, जो पशुओं की आहार लेने की मात्रा को घटा देते हैं। इससे पशुओं की प्रजनन क्षमता में कमी आती है।

पशुओं के आराम के लिए समुचित उपलब्ध सभी व्यवस्था करनी चाहिए। अगर पशु आरामरहित है तो उसका प्रजनन क्षमता घट जाता है।

पशुओं की थनैला बिमारी भी प्रजनन क्षमता को घटाता है। अतः इस बिमारी से बचाव के भी उचित प्रबन्ध करने आवश्यक है।

निष्कर्ष

अतः पशुपालक पशुओं से अधिकतम लाभ प्राप्त करने की कोशिश न्यूनतम व्यय कर करना चाहते है। इसके लिए आवश्यक है कि पशु अपेक्षित अंतराल पर बछड़ों को जन्म एवं दूध दें। यह अपेक्षा पशुओं की उच्च प्रजनन क्षमता से प्राप्त होता है। पशुओं का उच्च प्रजनन क्षमता सॉड़, कृत्रिम गर्भाधानकर्ता एवं बाहरी वातावरण जैसे घटकों पर निर्भर करता है। अतः इसका समुचित प्रबंधन नितांत आवश्यक है तभी पशुपालक अपने पशुपालन व्यवसाय को लाभकारी बना सकेंगें।

❃ ❃ ❃ ❃ ❃

कृषि और ग्रामीण विकास में सूचना एवं संचार तकनीक के नवीन आयाम

आसिफ मोहम्मद, खजान सिंह एवं मृदुला उपाध्याय
राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

भूमिका

कृषि उत्पादन पद्धति को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिये उत्पादन से बाजार तक के विविध चरणों में कृषि उत्पादन पद्धति की आवश्यक सूचना और ज्ञान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले सभी लोग एक नायक की भूमिका निभाते हैं। किसी भी डेरी उद्योग में निर्णय लेने के लिए सम्बन्धित सूचना, ज्ञान पूर्ण, सही एवं संक्षिप्त हो और समय पर प्रसारित होना चाहिए। प्रणाली द्वारा प्रदान की गई सूचना प्रयोग कर्ता के अनुकूल, पहुंच में आसान, कीमत प्रभावी और अनधिकृत पहुंच से सुरक्षित होनी चाहिए। सूचना संचार तकनीकी उपर्युक्त सूचना की विशेषताओं को बनाये रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। डब्लू टी ओ समझौते के अस्तित्व में आने से सम्पूर्ण विश्व में कृषि में से तेजी से परिवर्तन आ रहा हैं। बदलते विश्व कृषि परिदृश्य का पूर्ण लाभ लेने के लिये कीमत बाजार, व्यापार से सम्बन्धित नीतियों का भी मूल्यांकन किया जाना है। इसके साथ ही बदलते वातावरण के अन्तर्गत तकनीकियों के हस्तांतरण की पद्धति का पुर्ननिरीक्षण और सशक्त किया जाना चाहिये। प्रसार प्रणाली बदलाव का सामना कर रही है। अतः इस स्थिति में एक मान्यता जन्म ले रही है कि कृषक और ग्रामीण परिवार को सूचना और समुचित सीखने की पद्धतियों की आवश्यकता है जो अभी उपलब्ध नहीं हुई है। (ग्रीन रिज, 2003, लाइटफुट, 2003)। यद्यपि अधिकांश कृषकों और कृषि सूचना प्रदान करने वालों के बीच सूचना प्रसार सम्पर्क कमजोर अनुभव किया गया है जो कि कृषि सूचना के संचार के प्रभावित कर चुका है। साथ ही बाद में राष्ट्रीय कृषि तकनीकी पद्धति में मार्ग अवरोध उत्पन्न करते हैं और कृषि विकास के प्रभाव को सीमित करते है। यह बात स्वीकृत की जा चुकी है कि बढ़ी हुई सूचना प्रवाह का कृषि सैक्टर और निजी फर्मो पर सकारात्मक प्रभाव हुआ है। यद्यपि संग्रहित की गई और प्रसारित की जा रही सूचनाएं अक्सर मुश्किल और महंगी होती है। सूचना और संचार तकनीकी (आई सी टी) कृषि सैक्टर में भागीदारों को सूचना प्रदान करने के परिणाम को बढ़ाने की योग्यता प्रदान करती है और सूचना प्रसारण की कीमत को कम करती है।

कृषि उत्पादन और बाजार (विपणन) के लिए आई सी टी का प्रयोग

कृषि अध्ययन के क्षेत्र में और बाजार में आई सी टी बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं। आई सी टी कृषकों को सूचना प्राप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है और ये सूचना को उचित समय पर और सही स्थान पर इकट्ठा करने में भी सहायक होगी इसके लिये निम्न बिन्दुओं पर ध्यान रखना चाहिए।

आंकड़े आधारित प्रबन्धनः– कृषक फसल डाटा बेस तैयार करने चाहिए और उचित रूप में उनका प्रबन्ध करना चाहिए। देश के लिए आकड़ों (डटाबेस) में फसल की किस्म, फसल का क्षेत्र, फसल बोने का समय सम्मिलित किया जाना चाहिए। इसके पश्चात कृषकों द्वारा या प्रसार कार्यकर्ता ये डाटा (आकड़े) इन्टरनैट के द्वारा बेस सर्वर पर आवश्यकता अनुभव करने वाले कृषकों को भेज सकते हैं। ये प्रयोग किसानों को निर्णय लेने में सहायता और आवश्यकता अनुसार उपयुक्त कार्यवाही परिवर्तन करने में सहायता कर सकता है।

फसल सूचना सेवा की रचना :– फसल सूचना सेवा को अच्छी प्रकार से तैयार करनी चाहिए। यह पद्धति कुछ सांख्यिकी सारिणी बनाने के लिए फसल आकड़ा विश्लेषण करती है। कृषक प्रसार कार्यकर्ताओं की सहायता से इस सूचना को सुगम बना सकते हैं और इसके अनुसार कार्य कर सकते है। विविध फसलों के लिये विशेषज्ञ पद्धति इस दिशा में सहायता कर रही है।

- ★ उचित पूछताछ पद्धति तैयार की जानी चाहिए। इस प्रयोग से किसान अपने प्रश्न रख सकते हैं और विविध कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा तैयार किये गये उपयुक्त उत्तर उन तक पहुँचाये जाने चाहिए। उपकरण से सम्बन्धित सूचना इस पद्धति द्वारा स्थानान्तरित की जानी चाहिए। सरकार ने उपयोग कर्ताओं तक तकनीकी हस्तान्तरण के लिये आई सी टी के महत्व को समझा है। इस दिशा में राष्ट्रीय कृषि नीति भारत में कृषि विकास को तेजी से विकास के लिये सूचना तकनीकी के उपयोग पर जोर दे रही है।
- ★ कृषि विभाग और सहकारिता ने सूचना तकनीकी परिदृश्य 2020 सूत्रीकृत किया है। इस परिदृश्य में निम्न पहलुओं पर विचार किया है।
- ★ कृषि खंड से सम्बन्धित सूचना मुख्य उपयोग कर्ता– कृषकों के लिये उत्पादकता और आय स्त्रोत अनुकूल बनाने के लिये उपलब्ध हो।
- ★ विस्तार और सलाह सेवा सूचना तकनीकी का उपयोग कृषकों को हर घड़ी उपलब्ध कराया जायेगा।
- ★ सूचना तकनीकी के लिये साधन कृषि सैक्टर की नैटवर्किंग प्रदान करेगी जो कि न केवल देश में बल्कि विश्व स्तर पर और संघ और प्रान्त सरकार के आकड़े आधार का खजाना होगी।
- ★ कृषि सैक्टर में सूचना तकनीकी एवं दीर्घ अवधि परिदृश्य कृषि का आन लाइन स्थापित कर कृषकों, अनुसंधान कर्ताओं, वैज्ञानिकों और प्रशासन को एक साथ लाना है।

कृषि के सतत विकास के लिये आई सी टी का प्रयोग

सूचना संचार तकनीकी किसानों को भूमि तैयार करने, कीटनाशक प्रबन्धन, सिंचाई सारिणी, खाद प्रयोग, अर्न्त फसल कार्यकलाप, मौसम सूचना निर्णय लेने में सहायक है और अन्त में विपणन के लिए उन्नत रिकार्ड रखने, अधिक कीमत विश्लेषण, अधिक बाजार नीति से कृषक अच्छे निर्णय ले रहे हैं जो कि उनकी अधिक आय लेने में सहायक है।

इन्टरनैट का प्रयोग कृषि समाज में संचार और बाजार सुअवसरों को बढ़ाने में सहायक है जब कि पहले अपेक्षाकृत ग्रामीण क्षेत्रों के अलगाव था। कृषि उत्पादन कर्ता और विपणन पद्धति जैसे कृषक, कृषि अनुसंधान कर्ता सहकारिता, निवेश आपूर्ति कर्ता और खरीददार इन्टर नैट का उपयोग ज्ञान और सूचना आदान प्रदान के लिये करते हैं साथ ही व्यापार चलाने के लिये करते हैं। इन्टरनैट के होने से कृषक कृषि निवेश केवल एक बार माउस दबा कर प्राप्त कर सकते हैं। लेंकिन आई सी टी साधनों का कृषकों द्वारा हमेशा प्रयोग निम्न विभिन्न कारणों से संभव नहीं है।

- ★ शिक्षा का स्तर
- ★ भाषा की रूकावट
- ★ कंप्यूटर की कीमत
- ★ ग्रामीण क्षेत्रों में खराब संचार व्यवस्था
- ★ कृषकों की कम जमीन होना

इस प्रकार किसानों को सूचना प्रदान करने के लिये संगठनात्मक ओर संस्थानीय प्रयासों की आवश्यकता है। सीमान्त किसानों की समस्याओं को सहकारिता फार्मिगं सिद्धांत द्वारा समाधान किया जा सकता है। कृषक सहकारिता फार्मिगं पद्धति को स्वीकार कर सकते है जिसमें कि कई किसान अपनी भूमि को समाहित कर सकते हैं और एक कंपूयटर खरीद सकते हैं। एक शिक्षित कृषक को वैब ब्राउसिंग से सम्बन्धित प्रशिक्षण लेना चाहिए। वह कृषक कृषि उत्पादों की मौजूदा कीमतों से सम्बन्धित सूचना को प्रसारित कर सकता है। आई सी टी आने वाले वर्गो में उपयोगी वस्तु की कीमत वितरण संभावना पर सूचना प्रदान करने में सहायक बन सकता है। इस प्रकार सूचना कृषकों और व्यापारियों को कब और किस तरीके से अपने उत्पाद को बाजार में बेचने में सहायता करती हैं। क्या फसल पर बेचे या फार्म पर अधिक लाभ की आशा में स्टोर करें । इन सब का निर्णय ले सकता है। जब उद्योग बजट डेटा के साथ संयोजित किया जाता है तो सूचना आने वाले मौसम में कौन सी फसल को पैदा करना है, का निश्चय करने में उपयोगी होगी। कृषकों को संभावित श्रेष्ठ कीमत प्राप्त करने के लिये विविध कृषि निवेश बाजार पर सूचना भी प्रदान की जा रही है। इस कार्यकलाप का उद्देश्य विभिन्न बाजारों की कीमत कृषकों को प्रदान करना है ताकि वे अपने उत्पाद को ऐसे बाजार में ले जा सकें जहां उनको अच्छी कीमत मिल सके। ये सम्पूर्ण प्रयास तब तक उपयोगी नहीं होगें जब तक यह सुनिश्चित न हो कि कृषक इन सुविधाओं का उपयोग कर रहें हैं। खाद मार्केटिंग संदर्भ में आई सी टी सक्षम बिक्री कार्य निरीक्षण, बाजार कीमत, सुरक्षित मार्केटशेयर और सक्षम उपभोक्ता सेवा में महत्व पूर्ण भूमिका निभा सकता है।

एक सुविचारित सूचना तकनीकी सैट निर्णय निर्माता को हर स्तर पर बाजार स्थिति को प्रभावशाली प्रतिक्रिया के लिए उपयोगी है। आई सी टी उत्पादों के मोनीटर करने और दिन प्रतिदिन आधार पर मौसम की विविधता की प्रतिक्रिया की जानने में सहायता प्रदान करता है। फील्ड में सोलर–पावर, मौसम स्टेशन को कृषकों के कम्पयूटर से मिला सकते हैं जिससे कि मौजूदा हवा, मिट्टी तापमान, अवक्षेपण, सामानुपातिक आर्द्रता, पत्तियों का गीलापन, मिट्टी की आर्द्रता, दिन की लम्बाई, हवा गति और सौर विकिरण की जानकारी दी जा सके। उत्पादक इन्टरनैट का उपयोग कीमत के मानीटर करने के लिये करते है और जब तब उन्हें कुछ पंसद हो उसको देखने के लिए करते हैं। समपूर्ण विश्व के किसान अपने विचारों का आदान प्रदान कर प्रश्न भेज सकते है और विशेष विषय पर उत्तर प्राप्त कर सकते हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि कृषि के क्षेत्र में सूचना संचार तकनीकी उभर कर सामने आई हैं सघन कीमत की चुनौती उच्च तकनीकी, कृषि तकनीकियाँ कृषकों का दरवाजा खटखटा रहीं हैं जो कि वैश्वीकरण द्वारा तेजी से बढ़ रही है। नयी अभरती परिवर्तनशील आर्थिक नीति में मॉग से आपूर्ति में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ है। ऐसा देखा गया है कि भविष्य में कृषि विकास सूचना प्रेरित होगा। नयी सूचनाऐं मुख्य उपयोग कर्ता तक तेजी से पहुंचनी चाहिए ताकि इसका अधिक से अधिक लाभ हो। सफल खेती के लिये सूचनाएं जैसे बीज, पानी, पोषण, पौधा संरक्षण कुछ मुख्य निवेश है। कृषि में सतत विकास के लिये गहन ज्ञान और सुस्पष्ट फार्मिगं तकनीक मुख्य दिशा निर्देश होगी।

आई सी टी की मुख्य शक्ति

परम्परागत और समुचित मिडिया के मिश्रण विकास के अतिरिक्त मिडिया के नये क्षेत्र संचार का महत्वपूर्ण हिस्सा हो सकता है।

- ★ विकास संसाधनों के प्रयोग को बढ़ा सकता है क्योंकि सूचना विस्तृत रूप से पहुंच सकती है।
- ★ कार्यकलापों के दो बार होने में कमी हो सकती है क्योंकि सूचना विस्तृत रूप से पहुंचना संभव है।
- ★ अन्य उपलब्ध संचार चयन की अपेक्षा संचार कीमतें (अक्सर नॉटकीय तौर पर) कमी की ओर होती है।

- सूचना और मानव संसाधन की विश्व स्तरीय पहुंच प्रदान की जाती है।
- स्थानीय, राष्ट्रीय ओर विश्व स्तरीय–संचार की तीव्र गति।
- प्रान्त और राष्ट्रीय सीमाओं के अलावा सूचना साधनों की सम्पूर्ण विश्व में पहुँच महत्वपूर्ण संसाधनों का, लोगों और साहित्य, विस्तार जनरल, न्यूज लैटर का लगातार कम समय में पहुंचना।
- दो तरह से संचार सरल–इमेल चैट ग्रुप विचार विमर्श फोरम।
- सूचना किसी भी समय उपलब्ध।
- सूचना नष्ट होने का कोई कारण नहीं क्योंकि संचार उपयोगकर्ता और संचारकर्ता के साथ सीधे ही होता है।
- दस्तावेज करना आसान क्योंकि संचार डिजिटल फार्म में होता है। ईमेल,आडियो और विडियो आदान–प्रदान सम्मिलित है।

आई. सी. टी. की मुख्य कमजोरियां

- तकनीकी निर्भरता बढ़ती है।
- तकनीकी की पूंजी कीमत बढ़ती है।
- क्षमता निर्माण के लिये अर्न्तनिहित आवश्यकता।
- बहुत से ग्रामीण क्षेत्रों में और दूरदराज क्षेत्रों में टैली संचार संरचना की पहुंच की कमी है। नयी आई सी टी के चयन उपलब्धता की अनेक सीमाएं है। बहुत से आई सी प्रोजेक्ट गैर मांगकर्ताओं द्वारा विशिष्टिकृत कर दिये जाते हैं।
- वित्तीय एजेन्सी अक्सर प्रदर्शन सुनिश्चित पूंजी परियोजना पंसद करते है अपेक्षाकृत कम सुनिश्चित परियोजना के।
- आई सी परियोजना अक्सर मौजूदा मिडिया स्थानीय पद्धति और परम्परा के समन्वयन का कम प्रयास करते हैं।
- आई सी परियोजना में अक्सर प्लानिंग में स्टेक होल्डर की कम भूमिका होती है। विशेष रूप से महिलाओं, युवकों की।

ग्रामीण विकास में आई. सी. टी. प्रयोग की भावी रणनीति

- आई सी टी के प्रयोग से कृषि/ग्राम विकास तथा नीति सामंजस्य को मान्यता।
- निरन्तर आजीविका प्रस्ताव जो कि स्टैक होल्डर की आवाज और नीति निर्माण कार्यक्रम बनाने में जोर देते है पर केन्द्रीकरण।
- सूचना और ज्ञान साझा करने के लिये रूककर शौपिंग के लिये इन्टरनैट की विकास समिति और टेलीफोन सेवा के बीच उपयोग।
- सूचना को आसान और अधिक सुगम बनाने के लिये आकड़े आधारित वैब साइट का प्रयोग।
- गैर लिखित (वीडिओ और ऑडियो) सूचना की विस्तृत रूप में श्रोताओं को जो शिक्षित नहीं है को उपलब्ध कराने के लिए प्रवाह मीडिया का प्रयोग।
- एक मार्गीय संचार साधन परस्पर प्रभावी प्रयोगों का उपयोग।

- ★ टेलीफोन आधारित सेवा (आवाज सूचना सेवा और सन्देश विषय)।
- ★ कृषि और ग्रामीण विकास के लिये जिम्मेदार स्टाफ को आई सी टी प्रशिक्षण पर ध्यान देना।
- ★ सूचना पहुंचाने के लिये प्रोपराइटरी साइड विपरीत प्राइवेट सेक्टर के साइबर कैफे और प्राइवेट सैक्टर टैलिफोन पद्धति का उपयोग।
- ★ सहायक अनौपचारिक शिक्षा के लिये इन्टर नैट की एक साधन के रूप में मान्यता।
- ★ आई सी टी परियोजना के लिये विविध स्टेक होल्डर योजना के लिये आवश्यकता को मान्यता।

ग्रामीण आजीविका निर्वाह में सुधार के लिये सात महत्वपूर्ण उपयुक्त आई. सी. टी. परियोजना विषय

- ★ ग्रामीण और कृषि संगठन को सशक्त करके सतत सर्वव्यापक पहुँच टैलीसंचार नीति और कार्यक्रमों का सुधार करना जिससे कि वे ग्रामीण लोगों की ओर से समर्पित प्रयास में भागीदारी कर सकें।

ग्रामीण ऋृण और वित्तीय सेवाएं

- ★ सुगमता, पहुँच और लचीले पन में सुधार।
- ★ ग्रामीण और कृषि स्टाक होल्डर की आवाज को प्रभावी बनाना ताकि नीति निर्माता तक पहुँच हो जो नीतियों नियमों प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं और उनका सीधा प्रभाव ग्रामीण आजीविका पर पड़ता है।
- ★ अधिक सूचना की जानकारी रखने वाले लोग और कृषक जो कि आजीविका निर्वाह के नीति, सम्बन्धित निर्णय लेने में सूचना का उपयोग कर सके ताकि आपातकालीन बाढ़, बीमारी, सूखा चेतावनी और मन्दी आदि आपात कालीन स्थितियों को कम करने और आप के विविधता बढ़ाने में उपयोग कर सके।
- ★ स्वास्थ्य, शिक्षा, कृषि प्रसार, प्रशिक्षण, ज्ञान संसाधन के क्षेत्र में ग्रामीण सेवा की सक्षमता और प्रभावशीलता में सुधार।
- ★ नागरिक समाज संगठन में नियोजन, कार्यान्वयन और सम्पूर्ण सेवाकाल में आई सी टी के समन्वयन के मध्य से आई सी टी प्लानिंग सक्षमता को उन्नत करना।
- ★ अधिक सक्षमता से भूमि की रिर्कार्डिगं और रजिस्ट्रेशन और हस्तान्तरण के लिये आई सी टी का प्रयोग।

निष्कर्ष:– यह कहा जा सकता है कि कृषि में सूचना संचार तकनीकी भारतीय परिपेक्ष्य की दृष्टि से विकास की स्थिति में है परन्तु यह बहुत सक्षम है। इसका आरम्भ में प्रसार के लिये उपयोग किया गया था परन्तु इस तकनीकी में कृषि प्रक्रिया को नियमित करने और समस्याओं के समाधान की विशेष क्षमता है। यह बात सुनिश्चित ही है कि आने वाले भविष्य में कृषि विकास के लिये यह एक महत्वपूर्ण क्षेत्र होगा। निश्चय ही सूचना संचार तकनीकी उच्च्व विकसित कृषि लेकर आयेगी और इसके द्वारा सम्पूर्ण समाज में महत्वपूर्ण योगदान होगा क्योंकि सूचना तकनीकी द्वारा आने वाले दशकों, अनुसंधान कर्ताओं और किसानों के बीच की दूरी कम होगी।

❋ ❋ ❋ ❋ ❋

राष्ट्रीय सम्मान के लिए हम सबको राजभाषा हिंदी का सरकारी काम–काज में उपयोग करना चाहिए।

डा. शंकर दयाल शर्मा (भारत के पूर्व राष्ट्रपति)

मानव जीवन एवं कृषि में पशुओं की भूमिका

सुक्रमपाल सिंह[1] एवं रणवीर सिंह[2]

[1] पं.दीन दयाल उपाध्याय,पशु चिकित्सा वि.वि. एवं गौ अनु. संस्थान, मथुरा

[2] कृषि इंजीनियरी प्रभाग, भा.कृ.अनु.प., पूसा, नई दिल्ली

देश की लगभग 70% जनसंख्या गांवों में रहती है एवं 60% जनसंख्या प्रत्यक्ष रूप से अपनी जीविका के लिए कृषि पर आश्रित हैं। आदिकाल से ही मानव अपने जीवन–यापन के लिए जन्तुओं पर निर्भर रहा है। भोजन व खाल आदि के लिए मनुष्यों को जन्तुओं का शिकार करना पड़ता था। प्रायः दिन भर की मेहनत के बाद भी शिकार हाथ नही लगता था। इसी समय में शायद मानव को पशुपालन का विचार तथा जन्तुओं को पालतु बनाकर रखा जाए ताकि अपनी आवश्यकतानुसार उनसे अण्डे, माँस, ऊन, दुग्ध व अन्य सेवाएं (जैसे बोझा ढोने, हल जोतने आदि) ली जा सके।

भारत वर्ष में पशुओं को पशुधन कहा गया है जिसके पास जितना ही अधिक पशुधन होता था वह उतना ही अधिक समृद्धि–शाली माना जाता था। इस प्रकार प्राचीन भारत में पशु सुदृढ़ आर्थिक व्यवस्था का आधार था राजा के पास गाय के अतिरिक्त हाथी, घोड़े और रथ खीचनें वाले बैल भी होते थे ये उसकी शक्ति और समृद्धि के सूचक थे। वर्तमान में गाय भैंस, भेड़, बकरी, घोड़ा, बैल, भैंसा, खच्चर, गधा, बन्दर, सुअर आदि पालतू पशुओं से भी अधिक घर–घर में कुत्ते का पाला जाना न केवल स्टेट्स और स्टैण्डर्ड का प्रतीक बन गया है अपितु उसकी प्राणि विशिष्ट विशेषताओं को समझते हुए उसका लाभ उठाने के विचार से उसे पूलिस के इंटेलीजेन्स विभाग में भी प्रवेश मिल गया हैं आज कुत्ता सिर्फ कुत्ता बनकर ही नही रह गया है बल्कि वह पुलिस इंस्पेक्टर बनकर चोरी–चकोरी से लेकर घातक मर्डर्ल के केस खुलवाने और विस्फोटक पदार्थो को पकड़वाने में भी सहायक सिद्ध हो रहा है।

देश के कृषि उत्पादन में पशुपालन का 30% योगदान है। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण के अनुसार पशुपालन क्षेत्र में 11.44 मि0 व्यक्ति मुख्य रोजगार के रूप में तथा 10.11 मि0 व्यक्ति पूरक रोजगार के रूप में कार्यरत है जो कि कुल राष्ट्रीय रोजगार का 5-50% है। ग्रामीण क्षेत्र में पशुपालन से विभिन्न रूप में रोजगार मिलता है जैसे पशुओं के बच्चों का लालन पालन करके बेचना, कृषि के लिए बैल तैयार करके, विभिन्न प्रकार के दुधारू पशुओं को पालकर दुग्ध तथा दुग्ध उत्पाद प्राप्त करके, जीवित पशुओं के मरने से चमड़ा, पशु हड्डियां उद्योगों के लिए प्राप्त होती है। पशुओं से प्राप्त गोबर को फसल अवशेषों के साथ मिलाकर कम्पोस्ट खाद बनाकर कृषि में प्रयोग कर सकते है। इसके अलावा पशुओं से डेयरी उद्योग चर्म उद्योग सीगों से बनने वाले वाद्य यंत्र, कंधे, शोपीस आदि प्राप्त होते है आज पशुओं से दुग्ध उत्पादों के अतिरिक्त गाय से प्राप्त गोमूत्र एवं गाय गोबर दवाइयों के रूप में प्रयोग हो रहे है। पशुओं से प्राप्त ताजे गोबर से गोबर गैस प्लान्ट पद्धति के प्रयोग करके अच्छी सड़ी गोबर खाद तथा रसोई गैस प्राप्त की जा सकती है। प्रयोगों में यह पाया गया है कि बायोगैस संयंत्र 35 डिग्री पर सबसे अच्छे ढंग से कार्य करता है। बायोगैस में 60-65% मीथेन, 35-40% कार्बनडाईआक्साइड और थोड़ी मात्रा में हाइड्रोजन सल्फाइड होता है। 30–35 कि.ग्रा. गोबर की मात्रा से 1 घन मी. गैस पैदा होती है जो 5–6 सदस्यों की परिवार के लिए खान पकाने के ईधन को आवश्यकता की पूर्ति करता है। पशुओं के गोबर से घर लीपने और उपले जलाने से रोग–कीटाणुओं का नाश होता है। पमविपण प्रदूषण को रोकने में पशुओं की भूमिका है क्योंकि सड़ी–गली सब्जियों, फलों, खाद्यान्नों आदि को हम बिना समझे खिला सकते है अन्धविश्वासों के कारण हमारे

नदियों और जलाशयों में बहाई जाने वाली लाशों को मगर–मच्छ, घड़ियाल, एलिगेटर, कायमन, कछुओं द्वारा खा लिये जाते है। पर्यावरण ओर उसकी सुरक्षा का चक्र पशुओं की सुरक्षा के बिना पूरा नहीं होता, अगर किसी भी पशु की जाति या प्रजाति नष्ट होती है तो पर्यावरण का संतुलन ही बिगड़ जाता है। इसका प्रभाव मनुष्य सहित समस्त जीव–जन्तु और वनस्पति जगत पर पड़ता है। अतः हमारा कर्तव्य है कि हम पशुओं की सुरक्षा करें।

कुछ पशुओं सम्बन्धित दिये गये विचार

1. भारतीय अर्थशास्त्र में गाय का स्थान सर्वोपरि ग्रामीण अर्थरचना का बड़ा केन्द्र बिन्दु है भारत की 08 करोड़ जनता को पोषण देने की शक्ति कृषि गौ–पालन में ही है। अन्न खेती से मिलता है खेती बैलों पर निर्भर है गाय–बैल की माता है गोबर की से द्वीप खाद मिलता है जो हमारी भूमि के लिए अव्यस्त आवश्यक है ऊर्जा के लिए गोबर जैसेः प्लान्ट उत्कृष्ट साधन है। गाय बिना किसी भेदभाव के सारे मानव की सेवा करती है – **विनोबा भावे**
2. गाय हमारे दुग्ध भुवन की देवी है वह भूखों को खिलाती है नंगों को पहनाती है और बीमारों को अच्छी करती है उसकी ज्योति चिरंतन है – **सम्पादक अमेरिका के होडिस डेयरी मेन**
3. गाय और उसकी संतान, उसका मल–मूत्र तथा मरने के बाद उसका क्लेवर हमारे कृषि संबंधी तथा ग्रामीण अर्थशास्त्र का अविभाज्य अंग है जो लोग मंत्रीकृत फार्मो के ओर तथा कथित वैज्ञानिक पद्धतियां के सपने देखते है वे एक अवास्तविक संसार में रहते है जिसका भारत की परिस्थिति से कोई संबंध नही है हमारी कृषि सम्बन्धी और ग्रामीण अर्थ संरचना का भविष्य गाय तथा बैल निर्भर है – **जय प्रकाश जी**
4. गाय और बैल दोनों पशु हमारे कृषि प्रधान देश में मनुष्य हितार्थ अत्यन्त उपकारी है इतना ही सिद्ध करते हमारे राष्ट्र के लिए उससे पशु का उपयोग जिस मा में ओर जिस तरह से होगा उस मा में ओर उसी प्रकार से ही उस पशु का पालन–पोषण से ही इस तरह का गौ–रक्षण राष्ट्र के निर्मल हित के लिए होगा – **वीर सावरकर**

प्रान्तीय ईर्ष्या–द्वेष दूर करने में जितनी सहायता हिन्दी प्रचार–प्रसार से मिलेगी, उतनी किसी दूसरी भाषा से नहीं।

सुभाष चन्द्र बोस

अंग्रेजी भाषा ज्ञान की खिड़की हो सकती है, परन्तु ज्ञान का मुख्य द्वार कभी नहीं बन सकती है।

डा. पी.के. सुब्रमणियम

राष्ट्रीय सम्मान के लिए हम सबको राजभाषा हिंदी का सरकारी काम–काज में उपयोग करना चाहिए।

डा. शंकर दयाल शर्मा
(भारत के पूर्व राष्ट्रपति)

डेरी व्यवसाय-रोजगार एवं आर्थिक विकास का स्त्रोत

जे.एन. यादव, ए. के. चौहान एवं बी.एस. चन्देल

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

भारत एक कृषि प्रधान देश है जहां पर कृषि के साथ पशु पालन एक व्यवसाय के तौर पर अपनाया जाता है। भारत में विश्व की पशु संख्या का पाचवां भाग पाया जाता है और दुग्ध उत्पादन में प्रथम स्थान रखता है इसका प्रथम स्थान पशु संख्या अधिक होने के कारण है न कि दुग्ध उत्पादकता के कारण। यहां पर प्रति पशु दुग्ध उत्पादन अन्य देशों की अपेक्षा बहुत कम है। सन् 2009–10 में देश में दुग्ध उत्पादन 1126 मिलियन टन हो गया है। (DAHD, 2010)भारत में दुग्ध उत्पादन की वृद्धि) दर 3.5 प्रतिशत से 4 प्रतिशत के करीब है। भारत में पशुधन क्षेत्र की विकास दर कृषि क्षेत्र से काफी अधिक है। भारत के पशुधन में उत्तर प्रदेश की भागीदारी 6.33 करोड पशुओं की है जिसमें संकर गाय 2.78 प्रतिशत, देशी गायें 27.19 प्रतिशत भैंसें 41.79 प्रतिशत, एवं अन्य 28.74 प्रतिशत पशु है। उत्तर प्रदेश के पशुधन मे वर्ष 2007 मे फैजाबाद जिले का योगदान लगभग 8.20 लाख पशुओं का है। उत्तर प्रदेश में दुग्ध उत्पादन 201.71 लाख मीट्रिक टन (2009–10) है। भारत में डेरी व्यवसाय किसानों का एक सहायक व्यवसाय है जिसको भारत के करीब 63 प्रतिशत किसानों द्वारा किया जाता है। इस व्यवसाय द्वारा किसानों को वर्ष भर निरन्तर रोजगार मिलता रहता है। इसमें पुरूष, महिला एवं बच्चों की भागीदारी होती है। जिसमें महिलाओं का अहम योगदान है। एक आकलन के अनुसार इस व्यवसाय में महिलाओं का योगदान 50 प्रतिशत से अधिक आका गया है। डेरी व्यवसाय द्वारा किसानों को ईधन, गोबर की खाद, पोषक तत्व, बुलक पावर इत्यादि मिलता है। गोबर की खाद खेतों की उर्वरा शक्ति को बढ़ाने में सहायक सिद्ध होता है जिससे किसानों की जमीन उपजाऊ बनी रहती है। डेरी व्यवसाय अपनाने से किसानों को निरन्तर आय का स्त्रोत बना रहता है, और इस दिशा में एक आर्थिक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

शोध विधि :– इस शोध पत्र में पूर्वी उत्तर प्रदेश से फैजाबाद जिले का चयन किया गया। फैजाबाद जिले से बीकापुर ब्लाक का चयन किया गया। बीकापुर ब्लाक से तीन गाँवों का चयन लिया गया। प्रत्येक गाँव से 20 दुग्ध उत्पादकों से आकड़ों का संग्रह किया और इसे तीन समूहों में पशु आधार पर विभक्त किया गया। (1) छोटे दुग्ध उत्पादक (एक दूध देने वाले पशु रखने वाले) (2) मध्यम दुग्ध उत्पादक (दो दूध देने वाले पशु रखने वाले) एवं (3) बड़े दुग्ध उत्पादन (तीन या इससे अधिक दूध देने वाले पशु रखने वाले) को रखा गया। इस प्रकार इन तीनों समूहों को अलग–अलग भारॅकन औसत द्वारा गणना किया गया।

परिणाम :–

पशु के रख–रखाव पर खर्च

तालिका–1 से यह स्पष्ट हो रहा है कि चारे व दाने पर प्रतिदिन छोटे दुग्ध उत्पादको द्वारा औसतन व्यय ₹ 62.25 , ₹ 52.35 मध्यम दुग्ध उत्पादक द्वारा एवं ₹ 53.85 बड़े दुग्ध उत्पादक द्वारा खर्च किया जा रहा है। तालिका में दिखाया गया है कि अन्य मदो पर भी इसी प्रकार खर्च किया जा रहा है। इस प्रकार प्रति पशु रख रखाव की लागत छोटे दुग्ध उत्पादक पर ₹ 77.51 मध्यम दुग्ध उत्पादक पर ₹ 70.86 एवं बड़े दुग्ध उत्पादक पर ₹ 65.54 का खर्च प्रतिदिन प्रति पशु आंका गया।

तालिका–1 पशु के रख रखाव पर खर्च। (प्रतिदिन प्रति पशु ₹. में)

लागत के अंश	छोटे दुग्ध उत्पादक	मध्यम दुग्ध उत्पादक	बड़े दुग्ध उत्पादक
चारे एवं दाने पर खर्च	62.25	57.35	53.85
मजदूरी पर खर्च	10.46	9.86	8.76
अन्य पर व्यय	2.75	2.15	1.65
टूट फूट एवं ब्याज पर व्यय	3.95	3.25	2.80
कुल लागत	79.41	72.61	67.06
गोबर से आय	1.90	1.75	1.60
शुद्ध लागत	77.51	70.80	65.46

भैंस के दुग्ध उत्पादन का आर्थिक विश्लेषण

तालिका–2 में यह स्पष्ट किया गया है कि छोटे दुग्ध उत्पादक द्वारा 6.10 लीटर प्रतिदिन दुग्ध उत्पादन, मध्यम दुग्ध उत्पादक द्वारा 5.85 लीटर एवं बड़े दुग्ध उत्पादक द्वारा 5.60 लीटर दुग्ध उत्पादन प्रतिदिन प्रतिपशु किया गया। इस प्रकार छोटे दुग्ध उत्पादक को सकल आय ₹104, मध्यम दुग्ध उत्पादक को ₹103 एवं बड़े दुग्ध उत्पादक को लगभग ₹101 आय प्राप्त हुई। इस क्रम में इन दुग्ध उत्पादकों को ₹26.50, 32.39 एवं ₹35.06 क्रमशः छोटे, मध्यम एवं बड़े दुग्ध उत्पादकों को शुद्ध लाभ प्राप्त हुआ। इस प्रकार शुद्ध लागत प्रति लीटर ₹12.71, 12.11 एवं ₹11.69 क्रमशः छोटे, मध्यम एवं बड़े दुग्ध उत्पादकों द्वारा व्यय किया गया। इस प्रकार दुग्ध उत्पादकों को शुद्धआय ₹26–35 प्रति पशु प्रति दिन प्राप्त हुई। अगर हम इसके लाभ एवं व्यय अनुपात को देखे तो 1.34 से 1.54 के अनुपात में प्राप्त हो रहा है। अर्थात एक ₹ खर्च करने से दुग्ध उत्पादक को ₹1.54 तक प्राप्त हो रहा है। इस प्रकार डेरी व्यवसाय किसानों को फसल के अतिरिक्त आर्थिक लाभ देता है और उसकी आर्थिक स्थिति संतुलन में बनाये रखने में सहयोग करता है।

तालिका–2 भैंस के दुग्ध उत्पादन का आर्थिक विश्लेषण। (प्रतिदिन प्रति पशु)

मद	छोटे दुग्ध उत्पादक	मध्यम दुग्ध उत्पादक	बड़े दुग्ध उत्पादक
प्रतिदिन शुद्ध लागत	77.51	70.86	65.46
प्रतिदिन दुग्ध उत्पादन	6.10	5.85	5.60
दुग्ध मूल्य प्रति लीटर	17.05	17.65	17.95
प्रतिदिन सकल आय	104.01	103.25	100.52
प्रतिदिन शुद्ध आय	26.50	32.39	35.06
शुद्ध लागत प्रति लीटर दुग्ध	12.71	12.11	11.69
लाभ एवं लागत अनुपात	1.34	1.46	1.54

दुग्ध व्यवसाय से रोजगार

तालिका– 3 से यह स्पष्ट हो रहा है कि डेरी व्यवसाय किसानों को अतिरिक्त रोजगार का अवसर प्रदान करता है जब किसानों के पास फसल सीजन के समय रोजगार एवं वित्तीय साधन सिमट जाते है तो डेरी व्यवसाय उनको रोजगार एवं वित्तीय स्थिति को संभाले रखने का काम करता है और उनके प्रतिदिन व्यय का भार उठाने में अहम भूमिका निभाता है। तालिका से स्पष्ट है कि एक वर्ष में लगभग 2981 घंटों का रोजगार प्रति परिवार प्राप्त होता है। इसमें 943 घंटें पुरूष को 1430 घंटे महिला को एवं 608 घंटे बच्चों को रोजगार मिलता है। अगर इस घंटे को प्रतिदिन में परिवर्तन किया जाए तो प्रति परिवार 1.02 दिन का प्रति व्यक्ति रोजगार मिलता है। इससे यह स्पष्ट हो रहा है कि एक वर्ष से अधिक का रोजगार एक आदमी को डेरी व्यवसाय से मिलता है।

तालिका–3 दुग्ध व्यवसाय द्वारा रोजगार के अवसर

मद	घंटें प्रतिवर्ष प्रति परिवार
पुरूष	943
महिला	1430
बच्चे	608
कुल	2981

आकृति–1 यह दर्शाती है कि सीमान्त दुग्ध उत्पादक द्वारा प्रतिदिन चारे एवं दाने की लागत 78.39% रही है। जबकि मजदूरी पर (13.17%), टूट–फूट एवं ब्याज पर (4.97%) एवं अन्य मदों पर (3.46%) प्रतिशत व्यय किया गया है।

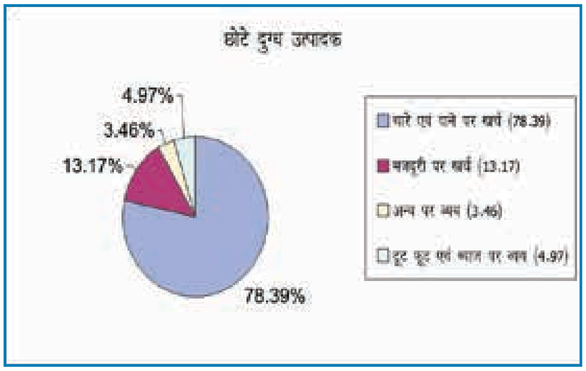

आकृति 2– से स्पष्ट हो रहा है कि छोटे दुग्ध उत्पादक द्वारा प्रतिदिन चारे एवं दाने पर व्यय 78.98% किया गया जो अन्य मदों से काफी अधिक है। अन्य पर व्यय क्रमशः इस प्रकार रहा मजदूरी पर (13.58%), टूटफूट एवं व्यय पर (4.48%) एवं अन्य मदों पर (3.96%) व्यय किया गया है।

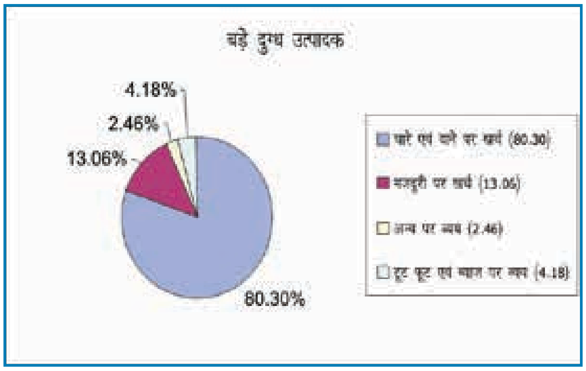

आकृति 3– से स्पष्ट हो रहा है कि मध्यम दुग्ध उत्पादक द्वारा सबसे अधिक व्यय प्रतिदिन चारे एवं दाने पर किया गया जो 80.30% है। अन्य पर व्यय क्रमशः मजदूरी पर (13.06%), टूट–फूट एवं ब्याज पर (4.18%) एवं अन्य मदों पर (2.46%) व्यय किया गया है।

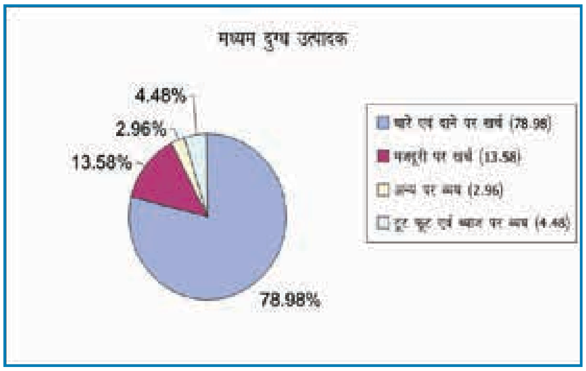

निष्कर्ष:– उपरोक्त तालिकाओं से स्पष्ट हो रहा है कि किसान डेरी व्यवसाय अपना कर अपने परिवार की आर्थिक स्थिति सुधारने में अहम भूमिका अदा कर सकता है। साथ ही साथ वर्ष भर रोजगार उपलब्ध होता रहेगा। इस पर अगर दूरगामी दृष्टि डाली जाए तो किसानों को डेरी व्यवसाय से गोबर की खाद प्राप्त होती रहेगी जिसके द्वारा किसान अपने खेतों की उपज बढ़ाने में सहायता ले सकता है और भूमि की कम होती हुई उर्वरा शक्ति को रोकने का काम भी कर सकता है जो आज की माँग है।

संदर्भ:

1. ग्रोवर, डी. के. संख्यायन, पी. एल. एवम् मेहता, एस. के. (1992) पंजाब के भटिंडा जिले के दुग्ध उत्पादन का आर्थिक विश्लेषण, इंडियन जरनल आफ डेरी साइंस, **45 (8)**: 402–415
2. स्वीस, आर. ढाका, जे. पी. एवम् कैरन, आर. एस. (1992) रोहतक जिले के ग्रामीण क्षेत्र मे भैंस के दुग्ध उत्पादन का आर्थिक विश्लेषण। जनरल आफ डेयरिंग, फूडस एवम् होम साइंस। **11 (1)** : 8–12
3. पशुपालन, डेयरिंग एवं मत्स्य विभाग (2010) बेसिक पशुपालन, सांख्यिकी, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

❁ ❁ ❁ ❁ ❁

> प्रान्तीय ईर्ष्या–द्वेष दूर करने में जितनी सहायता हिन्दी प्रचार–प्रसार से मिलेगी, उतनी किसी दूसरी भाषा से नहीं।
>
> **सुभाष चन्द्र बोस**

गर्भवती एवं नवजात पशु की देखभाल व प्रबंधन

निशान्त कुमार एवं टी. के. मोहन्ती

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

भारत एक कृषि एवं पशु प्रधान देश है। भारत की अर्थव्यवस्था के निर्माण में पशुओं का उत्पादन एवं पुनरुत्पादन महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हरेक पशुपालक को अपने पशुओं विशेषकर गर्भवती एवं नवजात पशुओं की विशेष प्रबन्धन एवं देखभाल करनी चाहिए।

गर्भवती पशु की देखभाल

गर्भवती पशुओं पर विशेष ध्यान देने की जरूरत होती है। उनके स्वास्थ्य के अलावा उनके गर्भ में पलने वाले बच्चे का विकास तथा भविष्य में उनसे प्राप्त होने वाले दूध के लिए उनके खान–पान एवं रहन–सहन का विशेष प्रबन्ध होना चाहिए।

गर्भावस्था के दौरान पशुपालकों को जिन सारी बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिए वो निम्नलिखित हैं :–

(क) गर्भवती पशु के प्रबंधन का सबसे महत्वपूर्ण पहलू है उसका आहार एवं खानपान।

- ★ गाभिन पशुओं का आहार संतुलित, सुपाच्य एवं पौष्टिक होना चाहिए।
- ★ उनके आहार में हरे चारे के साथ दाने में प्रोटीन, कैल्शियम, फॉसफोरस, मैग्नेशियम एवं विटामिन होना चाहिए।
- ★ एक गाभिन गाय/भैंस को सामान्यत: 30–35 किलोग्राम हरा चारा, 3–4 किलोग्राम सूखा चारा, 2–3 किलोग्राम दाना, 75–100 ग्राम खनिज तथा 50 ग्राम नमक प्रतिदिन दिया जाना चाहिए।
- ★ यदि पशु को मुख्य रूप से सूखे चारे पर रखना है तो उसे 5–8 किलोग्राम भूसा और 5–10 किलोग्राम हरा चारा देना चाहिए।
- ★ वर्षा ऋतु में लोबिया एवं मक्का का हरा चारा अथवा लोबिया और ज्वार की कुट्‌टी का मिश्रण उत्तम रहता है।

(ख) गाभिन पशु को हमेशा एक साफ सुथरे, स्वच्छ एवं शांत वातावरण में रखना चाहिए।

(ग) गाभिन पशु को केवल साधारण व्यायाम देना चाहिए।

(घ) पशु को डराना, धमकाना या परेशान नहीं करना चाहिए।

(ङ) पशु को दौड़ाना नहीं चाहिए। उन्हें गर्मी, सर्दी एवं बरसात से बचाना चाहिए।

(च) ब्याने की अनुमानित तिथि के दो माह पूर्व से पशु का दूध लेना बन्द कर देना चाहिए एवं उसके दाने में वृद्धि कर देनी चाहिए। यह वृद्धि दूध देते समय की आधी होनी चाहिए।

(छ) जिन पशु के ब्याने से पूर्व दूध उतर आता है, उसे ब्याने से पहले नहीं दुहना चाहिए।

(ज) पशु के ब्याहने के 15 दिन पूर्व उसे अन्य पशुओं से अलग कर देना चाहिए।

(झ) प्रसव का दिन निकट आने पर विशेषकर दो–तीन दिन पहले से लेकर प्रसव के दिन तक पशुपालक को सावधान रहना चाहिए क्योंकि प्रसव दिन या रात किसी भी समय हो सकता है।

प्रसव की देखभाल

(क) प्रसव पीड़ित पशु को अन्य पशुओं से अलग शान्त स्थिति में रखना चाहिए।

(ख) प्रसव की अवस्था में पशु पालक को उपस्थित रहकर दूर से निगरानी करनी चाहिए क्योंकि नजदीक होने से पशु का ध्यान बंट सकता है तथा प्रसव में देरी अथवा बाधा उत्पन्न हो सकती है।

(ग) यदि प्रसव में किसी प्रकार की बाधा दिखाई पड़े तो विशेषज्ञ से तुरन्त सहायता लेनी चाहिए।

(घ) प्रसव के बाद नवजात पशु का मुंह–नाक, आंख–कान साफ कर देना चाहिए।

(ड) प्रसव के बाद गर्भपोष यानी जेर को 4–6 घंटे के अन्दर निकल जाना चाहिए। यदि उसके निकलने में विलम्ब हो तो विशेषज्ञ से सहायता लेनी चाहिए।

(च) पशु पालक को सावधान रहना चाहिए कि जैसे ही जेर निकल कर गिरे उसे तुरंत हटाकर कहीं दूर गड्ढे में गाड देना चाहिए अन्यथा कुछ पशु जेर को खा लेते हैं जिसका प्रभाव पशु के स्वास्थ्य एवं दुग्ध उत्पादन पर पड़ता है।

(छ) प्रसव के स्थान को फिनाइल घोल से अच्छी तरह साफ कर देना चाहिए।

(ज) नवजात पशु को मां का पहला दूध जिसे खीस कहते हैं, तीन–चार दिनों तक अवश्य पिलाना चाहिए।

(झ) नवजात पशु स्वयं खड़ा होकर मां की थन की ओर जाकर दूध पीने का प्रयास करता है। यदि नवजात को दूध पीने में असमर्थता हो तो दूध पीने में पशु पालक को मदद करनी चाहिए।

(ण) नवजात शिशु की नाल को ऊपर से 4–5 सेन्टीमीटर नीचे में धागा से बांध कर काट देना चाहिए तथा टिंचर बेन्जवायन या बेटाडीन घोल लगाकर पट्टी बांध देनी चाहिए।

प्रसव के तुरंत बाद पशु को क्या खिलायें

(क) प्रसव के तुरंत बाद धान, गुड़, बांस की पत्तियां आदि खिलायी जा सकती है।

(ख) पशु की ताजगी और स्फूर्ति के लिए हल्दी 30 ग्राम, सौंठ 15 ग्राम, अजवाइन 15 ग्राम और गुड़ 250 ग्राम को एक लीटर पानी में उबाल कर 2–3 दिनों तक सुबह–शाम पिलाना चाहिए।

(ग) पशु को 5–7 दिनों तक दाना तथा तेल खली नहीं देना चाहिए। यदि पशु बिना दाना के न खाये तो उसे थोड़ा सा सुपाच्य दाना दिया जा सकता है।

(घ) तीन दिनों तक पशु को सूखी मुलायम घास, पुआल, भूसा आदि शीघ्र पचने वाला सूखा चारा देना चाहिए। तीन दिनों के बाद सूखे चारे के साथ गेहूं, जौ या बाजरा की दलिया गुड़ में मिलाकर सुबह–शाम 5–7 दिनों तक देना चाहिए।

(ड) एक सप्ताह के बाद दाना थोड़ा–थोड़ा देना चाहिए। दाना की मात्रा धीरे–धीरे बढ़ानी चाहिए।

(च) दो सप्ताह के बाद दूध के उत्पादन के अनुसार दाना की पूरी खुराक में अनाज, खली, घास या हरा चारा आदि देना चाहिए।

(छ) प्रसव के तुरन्त बाद पशु को ठंडा पानी नहीं पिलाना चाहिए विशेषकर जाड़े के मौसम में। गर्मी के दिनों में ताजा–स्वच्छ जल पिलाया जा सकता है।

(ज) प्रसव के बाद पशु को गुनगुना स्वच्छ पानी पिलाना चाहिए।

नवजात पशु की देख–भाल

बच्चा जन्म लेते ही सांस लेना आरम्भ कर देता है। यदि बच्चे को मां से अलग नहीं किया गया तो वह अपने बच्चे को तुरंत चाटने लगती है। इस चाटने की क्रिया से बच्चे के सांस और रक्त संचालन में सहायता मिलती है। यदि बच्चे का मुँह झिल्ली से ढंका हो तो उसे हटाकर साफ कर देना चाहिए और यदि सांस नहीं चल रहा हो तो जीभ को आगे–पीछे खींचकर कृत्रिम सांस का प्रयोग अपनाना चाहिए। हल्के हाथ से बच्चे की छाती का मसाज करना भी सांस चलने में सहायक होता है।

नये जन्मे बच्चे स्वभावतः चन्द मिनटों में स्वतः खड़े हो जाते हैं और दूध पीने का प्रयास करते हैं। बच्चा पैदा होने के आधे घंटे के अन्दर वे पहला दूध पीना आरम्भ कर देते हैं। यदि उनके प्रयास में कोई कठिनाई उत्पन्न हो तो पशु पालक को उसके दूध पीने में सहायता करनी चाहिए। कुछ बच्चे कमजोर पैदा होते हैं और खड़े नहीं हो पाते। वैसे बच्चों को पकड़कर खड़ा कर दूध पीने देना चाहिए तथा दूध पीने में असमर्थ होने पर उसकी मां का दूध निकाल कर बोतल से या निप्पल द्वारा दूध पिलाना चाहिए। पहले 2–4 दिनों का दूध जो खीस कहलाता है उसे बच्चे को पिलाना आवश्यक है क्योंकि इससे बच्चे का पेट साफ होता है, पाचन क्रिया में सरलता मिलती है, संक्रामक रोगों से बचने की शक्ति उत्पन्न होती है तथा मिनरल्स और विटामिन्स की पूर्ति होती है। इसमें अन्य पौष्टिक तत्व आवश्यकतानुसार मिले रहते हैं। इसमें प्रोटीन अधिक होता है जो शारीरिक विकास में सहायक है।

यदि किसी कारणवश प्रसव के बाद पशु की मृत्यु हो जाए तो दूसरे पशु का दूध बच्चे को पिलाना चाहिए और ऐसे दूध में दो चाय चम्मच अरण्डी का तेल या मछली का तेल मिला देना चाहिए। मां से अलग किए गए बच्चे को मां का दूध किसी चौड़े बरतन में निकालकर या रखकर हाथ के अंगूली को दूध में डूबाकर उस अंगूली के सहारे दूध चटाने से बच्चा दूध पीना सीख लेता है।

नवजात बच्चे का नाभि कई अनेक रोग संक्रमण का कारण बन सकता है। इसलिए इसका समुचित उपचार तुरंत करना चाहिए। अंगूठे और पहली अंगुली से नाभि को पकड़कर नम्रता से निचोड़ कर खाली कर देना चाहिए। नाभि के जड़ से 4–5 सेंटीमीटर छोड़कर धागे से बांधकर जीवाणु रहित कैंची या ब्लेड से काट देना चाहिए तथा उस पर टिन्चर आयोडीन या बीटाडीन घोल लगाकर जीवाणु रहित रूई रखकर पट्टी बांध देनी चाहिए। इससे कौए या अन्य पक्षी चौंच मारकर नोंच नहीं सकेंगे। एक हफते के अन्दर नाभि सूख जाती है।

गाय–भैंस के बच्चे कृमि रोग से अधिक प्रभावित होते हैं। इसलिए 10–15 दिनों की उम्र पर उन्हें कृमि रोग की दवा अवश्य पिला देनी चाहिए। पुनः एक माह के अन्तराल पर 6 माह की उम्र तक कृमि रोग की दवा पिलाते रहना चाहिए।

अतः हरेक पशु पालकों को चाहिए कि अपने गर्भवती एवं नवजात पशुओं के प्रबंधन एवं देखभाल में ऊपर बताए गए हरेक नियम एवं सावधानियों का पालन करे ताकि उसके पशु स्वस्थ रहें और उसके उत्पादन और पुनरुत्पादन क्षमता में बढ़ोतरी होती रहे।

❋ ❋ ❋ ❋ ❋

बरसीम - एक पौष्टिक दलहनी चारा

अखिलेश मिश्रा एवं गीता राय

चन्द्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर

बरसीम रबी मौसम में चारे की एक महत्वपूर्ण फसल है। बरसीम दलहनी फसल होने के कारण मृदा की उर्वरता में वृद्धि करती है तथा इसका चारा अत्यन्त पौष्टिक, मुलायम, सुपाच्य तथा पशुओं को स्वाद में अच्छा लगने वाला होता है। अतः इसे दुधारू पशुओं को खिलाने से दूध में वृद्धि तथा शारीरिक स्वास्थ्य के प्रति अच्छे परिणाम मिलते है। इन्हीं गुणों के कारण शहर के निकटस्थ क्षेत्रों में बरसीम की खेती से अच्छी आय प्राप्त की जा सकती है तथा इसका प्रयोग हरी खाद के रूप में करना भी लाभ दायक होता है, ठण्डे मौसम में लगातार हरा चारा प्राप्त करने के लिए यह सबसे उपयुक्त फसल है। रासायनिक संगठन की दृष्टि से बरसीम में 20–21% प्रोटीन, 28–30% रेशा तथा शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अन्य खनिज लवण जैसे कैल्सियम, मैग्नीशियम, फास्फोरस, सोडियम तथा पोटेशियम आदि पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं।

जलवायु : बरसीम शीतोष्ण जलवायु वाले भागों में उगाई जाने वाली फसल है। अधिक ठण्ड व पाले में उत्पादन में कमी हो जाती है। बुवाई के समय 25–30° सेंटीग्रेड तथा वानस्पतिक वृद्धि के लिये 15–25° सेंटीग्रेड तापमान उपयुक्त होता है। तापमान 40° सें. से अधिक होने पर पौधों की कटाई के बाद दुबारा वृद्धि नहीं होती परन्तु फसल से यदि बीज का उत्पादन लेना होता है तो फसल पकने के समय कुछ अधिक तापक्रम की आवश्यकता होती है। अतः इस दृष्टि से उत्तर प्रदेश की जलवायु बरसीम की खेती के लिये उपयुक्त है।

भूमि : बरसीम एक दलहनी फसल है अतः इसकी जड़ो में सूक्ष्म जीवाणु पाए जाते हैं प्रत्येक अवस्था में इन जड़ ग्रन्थियों में रह रहे जीवाणुओं का क्रियाशील रहना फसल की अच्छी वृद्धि के लिए अत्यन्त आवश्यक है। अतः बरसीम की खेती के लिए भूमि में उचित जल निकास का प्रबन्ध तथा अच्छा मृदा वायु संचार होना चाहिए। इसकी खेती सभी प्रकार की भूमियों में सफलता पूर्वक की जा सकती है। परन्तु भारी दोमट मिट्टी वाली भूमि जिसमें कि जल धारण क्षमता अधिक होती है, में अच्छी उपज प्राप्त होती है। बरसीम की खेती सामान्य से क्षारीय प्रकृति की भूमि में अच्छी प्रकार से उगाई जाती है किन्तु अम्लीय भूमि इसकी खेती के लिये अनुकूल नहीं है।

उन्नतशील प्रजातियाँ : बरसीम में गुणसूत्र के आधार पर दो प्रकार की प्रजातियाँ द्विगुणित तथा चतुर्गुणिक पायी जाती है।

(1) द्विगुणित – मिसकावी, वरदान, बरसीम लुधियाना–1

(2) चतुर्गुर्णित – पूसा जायन्ट, टाइप–526, 678, 780

खेत की तैयारी : एक जुताई पलट हल से करने के बाद 4–5 बार हैरो तथा देशी हल लगाकर पाटा से खेत समतल कर लेना चाहिये। आवश्यकतानुसार समान सिंचाई हेतु क्यारियां भी बना लेनी चाहिये।

बुवाई की विधि : बरसीम की बुवाई की दो प्रमुख विधियाँ निम्न प्रकार से हैं:–

(1) पानी भरे खेत में बुवाई

पानी भरे खेत में पटेला चलाकर पानी गंदला करने के पश्चात छिटकवां विधि से बुवाई की जाती है। इस विधि में खेत की तैयारी धान में (पौध) रोपण करने की भाँति की जाती है। गंदले पानी में बुवाई करने से मिट्टी की एक हल्की पर्त बीजों के ऊपर चढ़ जाती है जिससे वे ढक जाते है तथा उन्हें चिड़िया या दूसरे पक्षी नहीं खा पाते तथा पर्याप्त नमी होने के कारण बीज का अंकुरण व जमाव बहुत अच्छा होता है।

(2) सूखे खेत में बुवाई

इस विधि में अच्छी प्रकार की भुरभुरी मिट्टी तैयार कर समतल किये गये खेत में पहले ही सिंचाई की क्यारियां बनाकर बुवाई छिटकवां विधि द्वारा या लाइन में देशी हल की सहायता से की जाती है। लाइन की बुवाई करने पर लाइन से लाइन की

दूरी 15–20 सेमी. रखनी चाहिये तथा बीज की गहराई 15–20 सेमी. से ज्यादा गहरी नहीं होनी चाहिये तथा अंकुरण हेतु पर्याप्त नमी बनाये रखने के लिये बुवाई के तुरन्त बाद खेत में पानी लगा दिया जाता है।

बीजदर : द्विगुणित किस्मों की बीजदर 25 किग्रा./हे. तथा चतुर्गुणित किस्मों का बीज आकार में बड़ा होने के कारण 30–40 किग्रा./हे. होती है।

बीज उपचार : बीज का उपचार दलहनी फसल होने के कारण राइजोबियम कल्चर से होना अति आवश्यक है। बरसीम में राइजोबियम ट्राईफोली नामक बैक्टीरिया का कल्चर प्रयोग में लाया जाता है जिसके प्रयोग से पौधों में अच्छी प्रकार से जड़ गाँठ का निर्माण होता है। जड़ की गाँठो में उपस्थित बैक्टीरिया वायुमण्डल से नाइट्रोजन प्राप्त करते हैं कल्चर प्रयोग हेतु सर्वप्रथम 100 ग्राम गुड़ को 1 लीटर पानी में उबालकर, ठण्डा कर लेते हैं, तत्पश्चात इसमें राइजोबियम कल्चर को घोल लेते हैं तथा बीज के बराबर मात्रा में भुरभुरी मिट्‌टी लेकर धीरे–धीरे छिड़ककर इस प्रकार मिलाते है कि मिट्‌टी ढेले ना बने। तैयार संवर्धित घोल इस प्रकार से तैयार की गई कल्चर युक्त मिट्‌टी को 24 घण्टे भिगोये गये बीज के साथ मिलाकर बुवाई हेतु प्रयोग कर लेते हैं। ध्यान रखने योग्य बात यह है कि कल्चर बीज को 24 घण्टे से अधिक नहीं रखना चाहिये अन्यथा बैक्टीरिया नष्ट होने लगते हैं।

उर्वरक : बरसीम दलहनी फसल होने के कारण इसकी जड़ो में राइजोबियम बैक्टीरिया होते हैं जो स्वयं वायुमण्डल से नत्रजन फिक्स करते है। अतः फसल को बाहर से कम नाइट्रोजन देने की आवश्यकता पड़ती है उन्नत फसल के उत्पादन हेतु 25–30 किग्रा. नत्रजन तथा 50–60 किग्रा. फास्फोरस प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता पड़ती है। अधिक उपज लेने के लिये प्रत्येक कटाई के बाद पानी लगाकर 5–6 किग्रा./हेक्टेयर की दर से यूरिया का छिड़काव करना चाहिये। लक्षण दिखाई पड़ने पर सूक्ष्म तत्वों का प्रयोग करना लाभकारी है।

सिंचाई : बरसीम में ठण्डे मौसम में (मार्च माह तक) 15–20 दिन के अन्तर पर तथा मार्च के बाद 10–15 दिन के अन्तर पर सिंचाई की आवश्यकता होती है तथा प्रत्येक कटाई के बाद हल्का पानी लगा देने से उत्पादन में वृद्धि होती है।

फसल चक्र : खरीफ की फसल के बाद रबी मौसम में बरसीम की खेती सुगमता पूर्वक की जा सकती है। बरसीम की खेती से अधिकतम लाभ प्राप्त करने हेतु निम्न प्रकार से फसल चक्र अपनाने पर मृदा की गुणवत्ता में वृद्धि के साथ–साथ अधिकतम आय प्राप्त की जा सकती है।

(1) धान – बरसीम

(2) मक्का – बरसीम, कपास – बरसीम

(3) ज्वार या मक्का (चारे के लिये) – बरसीम

(4) मक्का (दाना) – बरसीम – मक्का (चारा)

(5) मक्का (दाना) – बरसीम

(6) सूडान घास – बरसीम

(7) ज्वार या बाजरा – बरसीम – मक्का + लोबिया

फसल सुरक्षा : चारे की फसल होने के कारण चूंकि बार–बार कटाई की जाती है। अतः रोग तथा कीड़ो का प्रकोप प्रायः नहीं दिखाई पड़ता है अतः फसल सुरक्षा के उपायो की आवश्यकता पड़ती है परन्तु रोग प्रतिरोधी किस्म की प्रजातियां बोने से जड़ गलन, सुलझा तथा गेरूई जैसे रोगो को संभावना भी नहीं रहती है। इसलिये बुवाई के लिये उन्नतशील रोगरोधी प्रजातियां का चयन करना चाहिये।

कटाई : पहली कटाई बुवाई के 50–60 दिन बाद करनी चाहिये तथा इसके बाद 30–35 दिन के अन्तराल पर 5–6 कटाई की जाती है। कटाई सदैव जमीन से 6–10 सेमी. की ऊँचाई से काटे जाने चाहिये जिससे पौधे की पुर्नवृद्धि में भाग लेने वाली कलिकाओं को हानि न पहुंचे।

उपज : बरसीम से चारे की कुल उपज 1000–1200 कु./हे. तक प्राप्त होती है।

❋ ❋ ❋ ❋ ❋

प्रकृति से प्रतियोगिता कैसी, वह भी तो है मुझ जैसी। 'रूमन' के साथ चलो मेरे, से विरक्तता कैसी।।

करण सिंह

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

कल जो घास खड़ी थी वन में, वही दूध बनी है आज गाय के थन में।

कवि की उपरोक्त पक्तियां जितने सरल एवं मधुर रूप से जिस प्रक्रिया को प्रकट करती है वह उतनी ही कठिन एवं कठोर है। हम आप लोगों के लिए कठिन है मगर पशु पालकों के लिए यह कितनी कठोर है वह स्वयं इसको जानते है।

मनुष्य निरन्तर प्रकृति से सीखता आया हैं उसका इतना विस्तृत ज्ञान भंडार सब प्रकृति का ही दिया हुआ है। लेकिन वह हमेशा से एक गलती करता आ रहा है, वह भूल जाता है कि वह भी प्रकृति का एक हिस्सा है, उससे अलग नहीं है। जैसे चोरों के द्वारा रात को नाव से नदी पार करते हुए होती है, हर चोर गिनती करते हुए अपने आप को नहीं गिनता और अधिक बोझ से नाव डूब जाती हैं।

वास्तव में जितने भी पशु जो घास को दूध में बदल देते हैं, उनको प्रकृति ने एक विशेष पेट भेंट किया होता है। जिसके अन्दर विभिन्न प्रकार के जीव रहते है, जिनकों विज्ञान की भाषा में बैक्टीरिया फंगस एवं प्रोटोजोवा कहते है। बिल्कुल उसी तरह जैसे भारत में रहने वाले लोगों को सामाजिक विज्ञान की भाषा में हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई आदि कहते हैं। जैसे लोगों को अपने क्षेत्र में अधिकार दिये है ऐसे ही उनको अपने क्षेत्र में अधिकार हैं। अगर मनुष्य को सब अधिकार दिये होते तो वह भगवान या अल्लाह की कल्पना कभी न करता। वैसे भी जब हम जीव विज्ञान पढ़ते है और एक–एक गुण को लेकर जीवों को उनके गुणवर्ग में रखते है तो मनुष्य कहीं पर भी किसी गुणवर्ग में सर्वोत्तम नहीं होता। अच्छा है उसने इस बात को बहुत पहले ही स्वीकार कर लिया है और जीवों से सीखता आया है।

पढ़ते हुए आगे बढ़ते हैं पशुओं के उस विशेष पेट को 'रूमन' कहते हैं, जहां घास, दूबघास जो मनुष्य के लिए बिल्कुल जरूरी नहीं है, को दूध बनाने वाले तत्वों में बदला जाता है, हमारे लिए घास/ दूब घास की कीमत शून्य है अगर 'रूमन' ना हो। घास को मूल्यवान रूमन ने बनाया है वो प्रकृति ने हमें दिया है। शून्य कीमत की वस्तु को मूल्यवान वस्तु में बदलने की मशीन का उपयोग अगर हम नहीं करते है तो यह हमारी भूल हैं। थोड़ा और भ्रमण करते है। रूमन वासी दूबघास को वसाओं और प्रोटीन में बदल देते हैं, जिनका उपयोग पशु शरीर निर्माण में होता है। पशु शरीर मनुष्य के कितने काम आता है। यह सब आप जानते हैं। पशु शरीर को बनाने के लिए अगर रूमन की अनदेखी करके पशु को वसा व प्रोटीन खिलाए जो कि घास की तुलना में कहीं अधिक मंहगी है, तो प्रथम दृष्टि में ही यह तरीका टिकाऊ नहीं है। अगर हम उसके आन्तरिक वातावरण को छोड़ ही दें तो।

आइऐ, थोड़ा और नजदीक पहुंचते हैं। पहली दुनिया की बात करते हैं आप समझदार व्यक्ति है जानते होगें, इस दुनिया को पहली दुनिया, दूसरी दुनिया व तीसरी दुनिया में विभाजित किया हुआ हैं। पहली दुनिया के लोग ज्यादातर पशु शरीर को अपना भोजन बनाते है। वे पशु शरीर को और अच्छा और भारी बनाने के लिए उसे सूखा हुआ मछली का माँस खिलाने लगे। वो जो चाहते थे वह तो हुआ लेकिन उसके साथ एक दूसरी घटना और हो

गयी जो वह नहीं चाहते थे। पशु पागल हो गये और मरने लगे, उनको खाकर कहीं वह ना पागल हो जाँए और मर जाए, उन्होंने उनको खाना बंद कर दिया। बन्द ही नही किया बल्कि जो पागल नहीं हुए थे और जिनको सूखा माँस खिलाया जा रहा था, उनको भी मार दिया गया। पशुओं का आकार तो बढ़ा लेकिन इसके साथ–साथ उनके मस्तिष्क की कोशिकाओं का आकार भी बढ़ गया जिससे वह पागल हो गये।

समस्याओं का समाधान पाने के लिए हम रास्ते तलाशते रहते है कुछ रास्ते जारी रहते है, कुछ बन्द हो जाते हैं, कुछ नई समस्याओं की तरफ जाते हैं। जो समस्याओं की तरफ जाते है उन पर नहीं बढ़ना चाहिए जब तक समस्यों से निपटने की सामर्थ्य न हो। वो रास्ता जो हमने ढूढ़ां है और जो समस्याआों की तरफ के जाता है, इसका तात्पर्य यह नही है कि हमने कुछ नही किया या गलत किया है। इसका अर्थ केवल भावी पीढ़ी को यह बताना है कि इस रास्ते पर नही चलना है, जो अपने आप में एक उपलब्धि है।

पशु पोषण का मार्ग 'रूमन' से होकर जाता है, उसकी उपेक्षा नहीं हो सकती। अगर रूमन की उपेक्षा होती है या उसका उपयोग नहीं होता है तो हम पशु पोषण नहीं कर रहे है। कोई दूसरा रास्ता ढूंढ रहे है जो समस्याओं की तरफ जाता है। पशु पोषण विशेषज्ञ जानते है कि ''रूमन बाई पास फैट'' व ''रूमन बाईपास प्रोटीन' का कौन सा रास्ता है, कहां वो जाता है और कहां वो ले जायेगा।

❁ ❁ ❁ ❁ ❁

रासायनिक खेती का दुष्प्रभाव

रासायनिक खेती जलवायु परिवर्तन का बड़ा कारण है, जबकि जैविक खेती से जलवायु तो बेहतर होती ही है, साथ ही इससे जमीन की उत्पादन क्षमता भी बढ़ती है। डॉ. वन्दना शिवा ने नवधान्य की ओर से हुए शोध के हवाले से बताया है कि रासायनिक खेती की तुलना में जैविक खेती से कार्बन पृथककरण में 25 फीसदी बढ़ोत्तरी होती है। मिट्टी में पानी रोकने की क्षमता भी 17 फीसदी बढ़ जाती है। जैविक खेती को लेकर अकसर यह भ्रांति फैलाई जाती है कि इसमें उपज कम होती है और रासायनिक खाद का प्रयोग से अधिक उत्पादन होता है। जबकि शोध में पाया गया कि जैविक खेती करने वालों की आमदनी भी ज्यादा होती है। आनुवंशिक रूप से परावर्धित रासायनिक बीटी कपास की खेती करने वालों की आमदनी भी ज्यादा होती है। आनुवंशिक रूप से परावर्धित रासायनिक खाद के प्रयोग से अधिक उत्पादन होता है। जबकि शोध में पाया गया कि जैविक खेती करने वालों की आमदनी भी ज्यादा होती है। आनुवंशिक रूप से परावर्धित रासायनिक बीटी कपास की खेती करने वालों की तुलना में जैविक खेती करने वाले किसानों की दस गुना अधिक आमदनी हुई।

कीट–पतंगों का बीटी कपास पर कोई प्रभाव नहीं होता, ऐसा दावा किया जाता रहा है, जबकि इस कपास में कीटनाशकों की कीमत सामान्य से 11 प्रतिशत अधिक पड़ती है। कई वैज्ञानिकों ने बताया कि आनुवांशिक रूप से परावर्धित फसल और आनुवंशिक अभियांत्रिकी कितनी घातक है, इसपर भरोसा नहीं किया जा सकता। इस तकनीक से उत्पादकता तो नहीं बढ़ी, बल्कि उसने फसल और पशुओं की उत्पादन क्षमता को नष्ट कर दिया है।

रूस की विज्ञान अकादमी के अध्ययन से पता चलता है कि जहऐम सोया खिलाकर पाले गए चूहे बांझ हो गये थे और उनमें टयूमर के ज्यादा मामले भी पाए गए। सम्मेलन में देश भर से प्रस्तुत किए गए शोधों से पता चला कि आंध्र प्रदेश, उड़ीसा और पंजाब में बीटी कपास के खेत में घास चरने वाली भेड़ों की बड़ी संख्या में मौत हो गई। खाद्य सुरक्षा और आत्मनिर्भरता के लिए बीजों का पेटेंट भी घातक है। इससे किसानों की आत्मनिर्भरता खतरे में पड़ रही है और बीज ही नहीं, पूरी खेती पर बीज कंपनियों का एकाधिकार बढ़ रहा है। यही वजह है कि बुद्धिजीवी बीज के पेटेंट को रोकने की मांग कर रहे है।

संपादक

प्राकृतिक रेशों के बहुआयामी उपयोग

चित्रनायक

केन्द्रीय कपास प्रौद्योगिकी अनुसंधान संस्थान, मुम्बई

पूरे विश्व में पिछले कई वर्षों के दौरान वैज्ञानिक खोजों व आधुनिकीकरण के फलस्वरूप निःसंदेह हर क्षेत्र में विकास तो हुआ है, पर साथ ही इनके कई दुष्परिणाम भी सामने आए हैं। हर वो संयंत्र जो कुछ नया उत्पाद निर्मित कर रहा है, कहीं न कहीं, किसी न किसी रूप में प्रकृति को नुकसान भी पहुँचा रहा है। संयंत्रों एवं वाहनों से उत्सर्जित हो रहे प्रदूषित गैस व जैव–अपघटित न होने वाले कृत्रिम उत्पाद हमारे पर्यावरण को भी प्रदूषित कर रहे हैं अब हम प्रकृति की ओर से हो रही प्रतिक्रिया का साफ–साफ अनुभव कर रहे हैं व इस और अब ध्यान नही दिया गया तो भविष्य में हमें और भी भयंकर परिणामों का सामना करना पड़ेगा। ओजोन परत का ह्रास, कार्बनडाईऑक्साईड, नाईट्रसऑक्साईड, क्लोरोफ्लोरोकार्बन आदि प्रदूषित गैसों के बढ़ते उत्सर्जन व वातावरण में बढ़ती प्लास्टिक, पॉलिथिन आदि की मात्रा के कारण पर्यावरण में प्रदूषण का स्तर लगातार बढ़ता जा रहा है। ग्लोबल वार्मिंग (वैश्विक ऊष्मीयता) व जलवायु परिर्वतन की समस्या अब सिर्फ बड़े–बड़े अंतर्राष्ट्रीय व राष्ट्रीय स्तरों पर हो रहे सेमिनारों व सम्मेलनों में बहस का मुद्दा न रहकर हमारे दैनिक जीवन में भी निहित हो चुकी है। वर्षा में कमी, तापमान में वृद्धि, मौसम का असामान्य व्यवहार, बाढ़ व सूखे की समस्या, भूमिगत जलस्तर में लगातार कमी आदि बातें अब रोजमर्रा की बातें होती जा रही हैं। अतः जरूरत है चेतने की और अगर अब भी हमने प्रकृति को बचाने की ओर ध्यान नहीं दिया तो तो फिर हमें प्राकृतिक तांडव झेलने के लिए बाध्य होना पड़ेगा।

प्राकृतिक रेशों के प्रयोग द्वारा पर्यावरण का बचाव

प्रकृति व पर्यावरण का बचाव हम प्राकृतिक संसाधनों के प्रयोग द्वारा ही कर सकते हैं। कृत्रिम वस्त्र, प्लास्टिक के उत्पाद व पॉलिथिन के पैकेट इन सबों के अत्यधिक या यूँ कहें अंधाधुंध प्रयोग द्वारा ही पर्यावरण में प्रदूषण का स्तर इतना बढ़ा है, अतः इनके प्रयोग पर पूरी तरह नियंत्रण द्वारा ही प्रकृति को बचाया जा सकता है। प्राकृतिक रेशों जैसे कपास, ऊन, रैमी, जूट आदि से बने वस्त्रों, पैकेजिंग के लिए जूट, नारियल, बाँस आदि के लुगदी से निर्मित गत्तो के बने डब्बों, जूट के रेशों की बोरियाँ, नारियल के रेशों की रस्सियाँ आदि के प्रयोग में विस्तार व कृत्रिम रेशों के प्रयोग में कमी के द्वारा पर्यावरण में फैल रही इन अशुद्धियों को कम किया जा सकता है एवं जलवायु परिर्वतन से होने वाले दुष्परिणामों से बचा जा सकता है। प्रकृति की सुरक्षा के लिए हमें प्रकृति का ही सहारा लेना पड़ेगा और अब यही सर्वोत्तम उपाय बचा है। मानव निर्मित सिंथेटिक रेशे कृत्रिम रेशों की श्रेणी में आते हैं, जो प्रायः अपघटक नहीं होते हैं एवं उपयोग के पश्चात पर्यावरण में प्रदूषण बढ़ाने में सहयोग करते हैं। आर्ट सिल्क, नायलोन, रेयॉन, पॉलिसटर आदि रेशों से निर्मित वस्त्रोत्पाद सस्ते, चमकीले व टिकाऊ भले ही होते हों, परंतु इनसे बने वस्त्र शरीर से उत्सर्जित पसीना अथवा जल सोखने में अमसर्थ, साथ ही साथ पहनने में कम अरामदेह भी होते हैं। इसके अलावा उपयोग के पश्चात ये कृत्रिम उत्पाद मिट्टी में सड़–गल भी नहीं पाते हैं जिससे पर्यावरण में जल, वायु एवं मिट्टी तीनों प्रकार के प्रदूषण में वृद्धि होती है। भारत में मुख्यतः कपास, जूट व मेस्ता, रैमी, फ्लेक्स, हेम्प, बाँस, केनाफ, अननान्नास, अबाका, केला, सिल्क, ऊन, क्वायर या नारियल की जटा, सुपारी और ताड़ आदि प्राकृतिक रेशों का उपयोग वस्त्र, गत्ते, डब्बे, रस्सी, बोरियाँ व विभिन्न प्रकार के अन्य टेक्सटाइल उत्पादों के निर्माण में किया जाता है। इन सब प्राकृतिक रेशों से बने उत्पाद जैव अपघटित होने वाले होते हैं जिनसे पर्यावरण में प्रदूषण नहीं फैलता है।

विभिन्न प्राकृतिक रेशे व बहुपयोगी उत्पादः कपास के फूलों से बीज सहित रूई की प्राप्ति होती है, जिन्हें ओटाई प्रक्रिया द्वारा बीजों से पृथक किया जाता है। इस प्रकार प्राप्त रूई की धुनाई कर उन्हें स्वच्छ किया जाता है,

फिर कताई प्रक्रिया द्वारा इस रूई से धागा निर्मित होता है। इस प्रकार निर्मित सूतों या धागों से विभिन्न प्रकार के वस्त्रों व टेक्सटाइल उत्पादों का निर्माण किया जाता है। प्राकृतिक रेशों से निर्मित उत्पादों के प्रयोग द्वारा प्राकृतिक संतुलन बरकरार रहता है, साथ ही साथ पर्यावरण भी प्रदूषित नहीं होता। विभिन्न प्रकार के वस्त्रों का निर्माण कपास एवं कपास के समवर्गी रेशो का उपयोग करके किया जाता है। बच्चों के लिए मुलायम व त्वचा को नुकसान ना पहुँचाने वाले वस्त्रों एवं अंदर के वस्त्रों (अंडर गारमेन्ट, जैसे बनियान आदि) के निर्माण के लिए कपास के रेशे बड़े ही उपयोगी होते हैं। घरों में अन्य उपयोग, जैसे परदे, चादर, तौलिये, गद्दे, रजाई व तकिये के कवर, सोफा आदि के वस्त्रों में भी प्राकृतिक रेशों से बने वस्त्रों का उपयोग बड़े पैमाने पर किया जाता है। वस्त्र का उत्पादन हस्तकरघा (हैडलूम) एवं विद्युत करघा (पावरलूम) विधि द्वारा किया जाता है। वस्त्र का उत्पादन हस्तकरघा (हैंडलूम एवं) विद्युत करघा विधि द्वारा ही निर्मित होते हैं साथ ही साथ ये करघा मिल लगभग 60 लाख लोगों को रोजगार भी मुहैया कराती हैं। विभिन्न प्रकार के हैण्डीक्राफ्ट, साज–सजावट के उत्पाद आदि की विदेशों में काफी मांग है और इसके निर्यात से देश को अच्छी विदेशी मुद्रा की आय भी होती है। इन पौधों के तनों से छिलकों को पृथक कर रेशे प्राप्त किए जाते हैं व इन रेशों को बास्ट फाइबर कहा जाता है। जूट (पटसन) के छिलकों को गट्ठर के रूप में बाँधकर पानी में सड़ाया जाता है, जिसे रेटिंग प्रक्रिया कहते है। पानी में सड़ाने के पश्चात बचे हुए रेशों को निकालकर, सुखाकर जूट के लंबे रेशे प्राप्त किए जाते हैं, जिनसे बोरियाँ, कम्बल, रस्सी, गत्ते, जिस्ते आदि जैसे उत्पाद निर्मित किये जाते हैं। आजकल जियो–टेक्सटाइल में भी जूट के रेशों का उपयोग काफी बढ़ा है। जूट उत्पादन एवं जूट उघोग के विकास एवं विस्तार में भारत पूरे विश्वभर में प्रथम स्थान पर है। ये रेशे रूखड़े होते हैं एवं इनका उपयोग बोरी, रस्सी, चटाई, दरी, गद्दे, यंत्रों के लिए गत्तों के बक्से, पेपर, मोटे कम्बल आदि के निर्माण में बहुतायत में किया जाता है। जियो टेक्सटाईल के क्षेत्र में सड़क, भवन बाँध निर्माण आदि के दौरान भी जूट, जूट की बोरियों व चटाईयों का प्रयोग बहुत ही उपयोगी पाया गया है। जूट की बोरियों में भारतीय खाद्य निगम के खाद्यान यथा चीनी, गेहूँ, ज्वार, बाजरा, चावल आदि बड़ी मात्रा में भंडारित व संरक्षित किये जाते है और वे लम्बे समय तक सुरक्षित रहते हैं । ये सभी प्राकृतिक रेशे जैव अपघटक होने के साथ–साथ पुनः उपयोग मे लाए जाने वाले होते हैं, जिनसे पर्यावरण को कोई नुकसान नहीं होता। इन रेशों से निर्मित वस्त्र पहनने में आरामदेह, सुगम वायु पारगम्यता व पसीना एवं जल सोखने की क्षमता वाले होते है। विभिन्न प्राकृतिक रेशों में सिल्क सबसे मुलायम होता है, सिल्क का रेशा, सिल्क के कीड़ों से प्राप्त किया जाता है। सिल्क के रेशों को रानी की संज्ञा से नवाजा गया है। ये सबसे मुलायम व आरामदेह रेशे होते हैं, जिन्हें सिल्क के कीड़ों से प्राप्त किया जाता है। बिहार के भागलपुर, आन्ध्रप्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, दक्षिण भारत, गुजरात आदि जगहों में सिल्क के रेशों का उत्पादन होता है। इन रेशों से उच्च कोटि के उत्पादों का निर्माण किया जाता है। सिल्क के वस्त्रोत्पाद जैसे साड़ी, शाल, कुर्ता, शेरवानी, चादर आदि उत्तम गुणवत्ता वाले होते हैं एवं विदेशों में भी इनकी मांग काफी है। ये वस्त्र काफी हल्के, आरामदेह व मुलायम होते हैं एवं खासकर गर्मी के दिनों में इन वस्त्रों का प्रयोग काफी श्रेयस्कर होता हैं। रैमी के रेशों को कपास के रेशों के साथ मिश्रित कर बुने, निटेड, लाइनेन, जीन्स, स्टोन वाश आदि जैसे वस्त्रों का निर्माण किया जाता है। ये वस्त्र थोडे मोटे व रूखड़े होते हैं, पर काफी टिकाऊ व जल अवशोषक भी होते हैं। इन वस्त्रों की वायु पारगम्यता भी उत्तम होती है जिससे इन वस्त्रों में आरामदेयता उतम होती है। ऊन के रेशे ये रेशे मुख्यतः भेडों से प्राप्त किए जाते हैं एवं इनसे सर्दी के गर्म वस्त्रों का निर्माण किया जाता है। जूट के रेशों की ही तरह केनाफ के पौधों के तनों से प्रथम चरण में छिलकों को पृथक किया जाता है, तत्पश्चात उन्हें रेटिंग प्रक्रिया द्वारा पानी में सड़ाकर फिर सुखाकर रेशों को प्राप्त किया जाता हैं। इन रेशों का प्रयोग पेपर, गत्तों के निर्माण में मुख्य रूप से किया जाता है, साथ ही कपास के साथ मिश्रित कर विभिन्न प्रकार के वस्त्र भी बनाए जाते हैं। उत्कृष्ट अनुसंधान व गहन शोध कार्यो से कपास, कपास के समवर्गी रेशे व वस्त्र उघोग से सफलता की सीढ़ियाँ चढ़ता ही जायेगा और पूरे विश्व से कृत्रिम रेशों के उत्पादों को हटाकर पर्यावरण को पूर्ण रूप से स्वच्छ रखने में सफल हो पायेगा।

भेड़, बकरी पालन द्वारा गरीबी व कुपोषण का उन्मूलन

आलोक कुमार सिंह,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

आज भारत विश्व की द्वितीय सर्वाधिक जनसंख्या वाला राष्ट्र है। देश की जनसंख्या वृद्धि दर लगभग 2 प्रतिशत है जो अति उच्च है। जिसके कारण वर्तमान समय में भारत के उपलब्ध संसाधन अपनी आबादी के भरण पोषण में अल्प सिद्ध हो रहे है। उदाहरण हरित क्रान्ति, दुग्ध क्रान्ति जैसी अनेको क्रान्तियों के बाद भी सभी को संतुलित भोजन उपलब्ध हो पाना एक बड़ा प्रश्न चिन्ह है। फलस्वरूप भारत में समुचित, संतुलित खाद्य के अभाव में कुपोषण दर दिन प्रति दिन बढ़ता जा रहा है। विशेषतः कुपोषण के प्रमुख शिकार वे गरीब भारतीय है जो अल्प आय पर गुजर बसर करने को मजबूर है। यह सर्व विदित है कि कुपोषण और गरीबी का अटूट नाता है। जहाँ गरीबी होगी वहाँ कुपोषण के पाये जाने की अधिकतम संभावना होती है। परन्तु इस दुष्चक्र को तोड़ा जा सकता है। जिसके लिए भारत की गरीब जनसंख्या पशुपालन के रूप में विशेषतः बकरी एवं भेड़ को पालना प्रारम्भ कर दे तो उपरोक्त दोनों समस्याओं से निजाद पाया जा सकता है।

बकरी, भेड़ पालन पर व्यय एवं इनसे आय– जहाँ बकरी एवं भेड़ को अति अल्प खर्चे पर पालन–पोषण किया जा सकता है। वही कुछ भी खा–पी कर वर्ष में दो बच्चे प्रति बकरी/भेड़, खेतो हेतु उच्च कोटी के खाद स्वरूप विष्ठा इत्यादि प्राप्त होती है। वही बकरी/भेड़े के युवा बच्चो, विष्ठा की बिक्री कर अतरिक्त आय अर्जित की जा सकती है।

बकरी व भेड़ के माध्यम से पशुपालन विस्तार की संभावना– यदि पशुपालक पशुपालन को विस्तार देना चाहता है तो वर्ष मे दो व्यात के कारण बकरी, भेड़ में उच्च वृद्धि के कारण इनको अपनाना उपयुक्त सिद्ध होता है।

बकरी व भेड़ के दुग्ध का उच्च पोषण की दृष्टि से रासायनिक संगठन

पशु	जल	वसा	प्रोटीन	कुल ठोस	वसा रहित ठोस	लैक्टोन	राख
बकरी	87.00	4.25	3.52	13.00	7.75	4.27	0.86
भेड़	80.71	7.90	5.23	19.29	11.39	4.81	0.90
गाय	86.61	4.14	3.58	13.19	9.25	4.96	0.71
भैस	82.76	7.38	3.60	17.24	9.86	5.48	0.78

कुपोषण के उन्मूलन हेतु बकरी, भेड़ की भूमिका– उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि जहाँ बकरी का दुग्ध अति सुपाच्य है। वही भेड़ का दुग्ध अति उच्च पौष्टिक है। दुग्ध को सम्पूर्ण आहार की संज्ञा प्राप्त है। गरीब पशुपालक परिवार द्वारा दुग्ध को स्वयं के खाद्य स्वरूप प्रयोग किया जाने के कारण पूरे परिवार को उत्तम स्वास्थय की प्राप्ति होती है। अतः आज के दौर में कुपोषण व गरीबी को मात देने हेतु बकरी, भेड़ पालन उपयुक्त है।

बकरी, भेड़ पालन हेतु निवेश रकम– आज एक साधारण गाय/भैंस का मूल्य लगभग ₹ 20 हजार के आस–पास हैं। वहीं बकरी, भेड़ की उन्नत प्रजाति लगभग तीन हजार में क्रय की जा सकती है।

निष्कर्ष– उपरोक्त विवरणों से पूर्णतः स्पष्ट है कि बकरी, भेड़ पालन द्वारा भारत में व्याप्त गरीबी व कुपोषण को काफी हद तक नियंत्रित किया जा सकता है। इसके लिए सर्वप्रथम जनमानस को जागरूक करना ही होगा। पशुपालन के रूप में बकरी भेड़ जैसेः पशुपालन के आयाम को अपनाने होंगे। वही प्रसार कार्यकर्ता, पशुपालन विभाग, केन्द्र व राज्य सरकार को भी आगे आना होगा।

हरियाणा में पशुधन विकास: एक समीक्षा

प्रमोद कुमार सिंह एवं करूणा असीजा

राष्ट्रीय पशु आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, करनाल

हरियाणा भारत के उत्तर पश्चिमी क्षेत्र का एक संपन्न राज्य है। इसका भौगोलिक क्षेत्र 44,212 वर्ग किलों मीटर है, जो भी देश के भौगोलिक क्षेत्र का 1.3 प्रतिशत है। हरियाणा की जनसंख्या 2.11 करोड़ (2001) है। हरियाणा का जनसंख्या घनत्व 477 व्यक्ति प्रति वर्ग किलो मीटर है। इस राज्य में आदिवासी आबादी नहीं है। राज्य में वन प्रक्षेत्र 1754 वर्ग किलो मीटर है। हरियाणा में पशुधन का अपार भंडार है, जो राज्य के सामाजिक तथा आर्थिक विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। हरियाणा राज्य की भौगौलिक स्थिति $27^{0}37'$ और $30^{0}35'$ उत्तर अक्षांश तथा $74^{0}28'$ और $77^{0}36'$ पूर्व देशांतर है, जो कि औसत समुद्र तल से 200–1200 मीटर की ऊँचाई पर है। हरियाणा में मौसम गरम तथा शुष्क है। अत्यधिक गर्मी में हरियाणा का तापमान 45^{0}–48^{0} सेल्सियस तक पहुँच जाता है। हरियाणा में जुलाई, अगस्त, सितम्बर में कुल वार्षिक वर्षा का 80–85 प्रतिशत वर्षा होती है। सर्दियों में तापमान कुछ दिन लगभग हिमांक तक पहुँच जाता है।

हरियाणा में भारत का 0.8 प्रतिशत गोवंश, 6.16 प्रतिशत भैंसें, 1.03 प्रतिशत भेड़े, 0.37 प्रतिशत बकरियां, 0.89 प्रतिशत सूकर हैं। देश की कुल कुक्कुट संपदा का 2.79 प्रतिशत हरियाणा में है। हरियाणा के कुल पशुधन का 67.92 भैंसें, 17.33 प्रतिशत गौवंश, 7.12 प्रतिशत भेड़ें, 5.18 प्रतिशत बकरियां, 1.35 प्रतिशत सूकर व 1.1 प्रतिशत अन्य पशुधन जैसे घोड़े, खच्चर, गधे, ऊंट आदि हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि राज्य की पशु सम्पदा में भैंसें, गौवंश, भेड़े एवं बकरियां महत्वपूर्ण हैं। हरियाणा में देसी गाय, भेड़, बकरी, घोड़े, ऊँट, सूकर की संख्या में 1992 से 2007 तक लगातार गिरावट देखी गयी है। वहीं 1992–2007 की अवधि में संकर गाय तथा भैंस में लगातार बढ़ोतरी देखी गयी है। हरियाणा में मुर्राह भैंस, हरियाना गाय विश्व की विख्यात नस्लों में से है।

हरियाणा दुग्ध उत्पादन के क्षेत्र में देश का दसवां सबसे बड़ा राज्य है (उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, आंध्र प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, बिहार व तामिलनाडु के बाद), वहीं प्रति दिन प्रति व्यक्ति दुग्ध उपलब्धता की दृष्टि से यह राज्य दूसरे स्थान (पंजाब के बाद) पर है। हरियाणा में 6048 सहकारी डेरी समितियां है, जिसमें 2.71 लाख किसान सदस्य है। हरियाणा का ग्रामीण दुग्ध संग्रहण 4.63 लाख लीटर प्रति दिन है। दुग्ध प्रसंस्करण (प्रोसेस्सिंग) क्षमता में महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, गुजरात, तमिलनाडु के बाद हरियाणा पांचवे स्थान पर है। हरियाणा की दुग्ध प्रसंस्करण क्षमता 6207 हजार लीटर प्रति दिन है। अंडा उत्पादन मे हरियाणा भारत में तीसरे स्थान पर है। आंध्र प्रदेश व तमिलनाडु राज्य ही अंडा उत्पादन में हरियाणा से आगे है। ऊन उत्पादन में हरियाणा भारत में 9वें स्थान पर है, राजस्थान, जम्मू–कश्मीर, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, हिमाचल प्रदेश, उतर प्रदेश आदि राज्य ऊन उत्पादन में हरियाणा से आगे है।

हरियाणा में 1992 में कुल गोवंश की संख्या 21.36 लाख थी, जो बढ़ कर 1997 में 24 लाख हो गयी। परन्तु 2003 में गायों की संख्या घट कर 15.40 लाख रह गयी। वहीं भारत मे परिपेक्ष में देखे तो 1992 में कुल गोवंश की संख्या 2045.84 लाख थी, जो 1997 में कम होकर 1988.81 लाख और 2003 हमें 185.81 लाख रह गयी। भारत में कुल गोवंश की संख्या में निरंतर गिरावट आई है, परन्तु हरियाणा में

1997 के बाद कुल गोवंश की संख्या में गिरावट देखी गयी। वहीं विश्व में कुल गोवंश की संख्या 1990 में 12978 लाख से बढ़ कर 2004 में 13650 लाख हो गयी। विश्व में गायों की संख्या निरंतर बढ़ रही है। वर्ष 1992–2003 अवधि में हरियाणा में कुल गोवंशीय पशुओं की संख्या मे 27.90 प्रतिशत की कमी हो गयी जबकि इसी अवधि में पूरे भारत की कुल गोवंशीय पशुओं की संख्या में 9.48 प्रतिशत गिरावट पाई गयी है।

हरियाणा में संकर गायों की संख्या 1992 में 4.17 लाख थी, जो लगभग दुगनी हो कर 1997 में 8.48 लाख हो गयी, परन्तु 2003 में फिर घट कर 5.73 लाख रह गयी। वहीं भारत में संकर गायों की संख्या में लगातार बढ़ोतरी हो रही है। यह संख्या 1992 में 152.15 लाख से बढ़ कर 1997 में 200.99 लाख हो गयी और 2003 में 246.86 लाख हो गयी। हरियाणा की संकर गायों का देश में अंश 2.32 प्रतिशत है। हरियाणा की संकर गायों की संख्या में 1992–2003 की अवधि में बढ़ोतरी 37.4 प्रतिशत है और वहीं भारत में 1992–2003 की अवधि में इसमे बढ़ोतरी 62.25 प्रतिशत है। भारत में स्वदेशी गायों की संख्या 1992 में1893.69 लाख थी, जो कम हो कर 1997 में 1787.82 लाख और 2003 में और घट कर 1604.95 लाख रह गयी। भारत में संकर गायों की संख्या निरंतर बढ रही है और स्वदेशी गायें कम हो रही हैं। हरियाणा में भी स्वदेशी गायों की संख्या निरंतर घट रही है। वर्ष 1992 में हरियाणा में स्वदेशी गायों की संख्या 17.19 लाख थी, जो घट कर 1997 में 15.52 लाख हो गयी और 2003 में मात्र 9.67 लाख ही रह गयी। स्वदेशी पशुओं की गिरती हुई संख्या निश्चित रूप से एक चिंता का विषय है। अधिक दूध उत्पादन के लिए संकर गोवंश की आवश्यकता एवं कृषि में मशीनीकरण इसके प्रमुख कारण है।

भैसों की संख्या के लिहाज से भारत विश्व में प्रथम स्थान पर हैं। विश्व, भारत एवं हरियाणा में विगत दो–तीन दशकों से भैंसों की संख्या में निरंतर बढ़ोत्तरी देखी जा रही है। हरियाणा में भैंसों की संख्या निरंतर बढ़ रही है। राज्य में 1992 में भैसों की संख्या 43.72 लाख थी, जो 1997 में 48.23 लाख और 2003 में 60.35 लाख हो गयी है। भारत में भैसों की संख्या निरंतर बढ़ रही है। भारत में 1992 में भैसों की संख्या 842.06 लाख थी, जो 1997 में 899.18 लाख हो गयी और 2003 मे 979.22 लाख हो गयी। हरियाणा में 1992–2003 में भैंसों की संख्या में बढ़ोतरी 38.04 प्रतिशत हैं, वही भारत में 1992–2003 में यह 16.29 प्रतिशत है। विश्व में 1990 में भैंसों की संख्या 1482 लाख थी जो निरंतर बढ़ रही है और 2004 में 1720 लाख हो गयी।

हरियाणा में 1992 में भेंड़ो की संख्या 10.43 लाख थी और 1997 में बढ़ कर 12.75 लाख हो गयी परन्तु 2003 में फिर घट गयी और मात्र 6.33 लाख रह गयी। हरियाणा में 1992–2003 की अवधि में भेड़ों की संख्या में 39.31 प्रतिशत की कमी आयी। इसके विपरीत भारत में भेड़ों की संख्या निरंतर बढ़ रही है। 1992 में भारत में भेड़ों की संख्या 507.83 लाख थी, जो बढ़ कर 1997 में 574.94 लाख हो गयी और 2003 में 614.69 लाख हो गई, अर्थात भारत में 1992–2003 के दौरान भेड़ों की संख्या में 21.04 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। विश्व में भेड़ों की संख्या 1990 में 12093 लाख से घट कर 2004 में 10598 लाख रह गई है। जहाँ विश्व में भेड़ों की संख्या निरंतर घट रही है, वहीं भारत में भेड़ों की संख्या बढ़ रही हैं और हरियाणा राज्य में भेड़ों की संख्या 2003 में काफी घट गई है। अतएव भेड़ों के संरक्षण व भेड़

पालकों की हरियाणा में 1992 में बकरियों की संख्या 8.0 लाख थी, और 1997 में बढ़ कर 9.68 लाख हो गयी, आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए कुछ ठोस कदम उठाये जाने की आवश्यकता है।

हरियाणा में 1992 में बकरियों की संख्या 8.0 लाख थी और 1997 में बढ़ कर 9.68 लाख हो गयी, परन्तु 2003 में बकरियों की संख्या 4.60 लाख रह गयी हैं। हरियाणा में 1992–2003 की अवधि में बकरियों की संख्या में 42.5 प्रतिशत की कमी आयी है। भारत में 1992 में बकरियों की संख्या 1152.79 लाख थी, जो बढ़ कर 1997 में 1227.21 लाख हो गयी और 2003 में फिर बढ़ कर 1243.58 लाख हो गयी अर्थात भारत में 1992–2003 के दौरान बकरियों की संख्या में 7.88 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। वहीं विश्व के रूझान पर नजर डाले तो 1990 में बकरियों की संख्या 5873 लाख थी और 2004 में यह बढ़ कर 7900 लाख रह गयी। भारत तथा विश्व में बकरियों की संख्या निरंतर बढ़ रही है। अतएव हरियाणा में बकरी पालन पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। हरियाणा में 1992 में घोड़े, खच्चर, आदि की संख्या 1.0 लाख थी और 1997 में 1.48 लाख हो गयी परन्तु 2003 में यही संख्या घट कर 0.57 लाख रह गयी। घोड़ों की संख्या में 1992–2003 में 43 प्रतिशत कमी हुई है। भारत में 1992 में घोड़े आदि की संख्या 19.77 लाख थी, जो कम हो कर 1997 मे 19.30 लाख थी, जो फिर घट कर 16.77 लाख रह गयी। घोड़ों की संख्या में हरियाणा ही नहीं वरन भारत और पूरे विश्व मे कम हो रही है। इसी प्रकार हरियाणा में ऊंटों की संख्या निरंतर घट रही है। 1992 में ऊंटों की संख्या 1.26 लाख थी जो घट कर 1997 में 0.96 लाख हो गयी, और 2003 में 0.50 लाख रह गयी। हरियाणा में 1992–2003 का ऊंटों की संख्या में 60.32 प्रतिशत की कमी हुई है। राज्य में देश के ऊंटों का मात्र 7.9 प्रतिशत है। भारत में भी ऊंटों की संख्या लगातार घट रहीं है। भारत में 1992 में ऊंटों की संख्या 10.31 लाख थी, जो घट कर 1997 में 9.12 लाख रह गयी है, फिर और अत्यधिक घट कर 6.32 लाख रह गयी, अर्थात 38.70 प्रतिशत की कमी आयी। विश्व में ऊंटों की संख्या 1990–2004 अवधि में स्थिर रही है। भारत और हरियाणा में घोड़े और ऊंटों की संख्या में गिरावट का मुख्य कारण इन प्रजातियों की उपयोगिता में आई कमी है। हरियाणा में सूकर 1992 में 5.16 लाख थे, जो बढ़ कर 1997 में 7.0 लाख हो गए और फिर 2003 में सूकर संख्या अत्यधिक घट कर 1.20 लाख ही रह गयी। हरियाणा में 1992–2003 में सूकर में गिरावट 76.74 प्रतिशत है जबकि भारत में सूकर संख्या लगातार बढ़ रही है। भारत में 1992 में सूकरों की संख्या 127.88 लाख थी, जो 1997 में बढ़ कर 132.91 लाख हो गयी, फिर 2003 में 135.19 लाख हो गयी, अर्थात 5.72 प्रतिशत की वृद्धि हुई। विश्व में सूकरों की संख्या 1990 में 8566 लाख थी, जो निरंतर बढ़ कार 2004 में 9438 लाख हो गई। हरियाणा में कुल पशु सम्पदा 1992 में 91.43 लाख थी, जो बढ़ कर 1997 में 104.12 लाख हो गयी, परन्तु फिर घट कर 88.85 लाख ही बची हैं। राज्य में 1992–2003 में कुल सम्पदा में 2.82 प्रतिशत की कमी हुई है। भारत में कुल पशु सम्पदा 1992 में 4708.60 लाख थी, जो 1997 में बढ़ कर 4853.85 लाख हो गयी फिर 2003 में घट कर 4850.02 लाख हो गयी। भारत में 1992–2003 का कुल पशु सम्पदा में 3 प्रतिशत की कमी हुई है। हरियाणा में देश की कुल पशु सम्पदा का 1.95 प्रतिशत अंश है।

कुक्कुट सम्पदा हरियाणा राज्य में, भारत में तथा विश्व में भी निरंतर बढ़ रही है। हरियाणा में कुक्कुटों की संख्या 1992 में 85.80 लाख थी, जो 1997 में बढ़ कर 92.23 लाख हो गयी, फिर 2003 में 136.

19 लाख हो गयी। वहीं भारत में कुक्कुटों की संख्या 1992 में 2840.2 लाख थी जो 1997 तथा 2003 में बढ़ कर क्रमश 3154.28 लाख, 4573.99 लाख हो गयी। हरियाणा में 1992–2003 में कुक्कुटों की संख्या में 58.73 प्रतिशत की वृद्धि हुई है, वहीं भारत में 61.04 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

हरियाणा राज्य की कुल पशु सम्पदा में मुख्य रूप से गोवंश, भैंस, भेड; और बकरी का समावेश है। गौवंशीय पशुओं में उत्तर भारत की सबसे महत्वपूर्ण नस्ल हरियाना का उद्गम स्थल हरियाणा राज्य है। स्वदेशी गौवंशीय पशु उत्पादों की गुणवत्ता, बढती हुई पेट्रोलियम पदार्थों की कीमतों और घट रही कृषि भूमि की उर्वरा शक्ति को ध्यान में रखते हुए स्वदेशी गोवंश का अत्यधिक महत्त्व है। यह सत्य है कि उत्तर भारत की सफेद स्वदेशी गौवंशीय नस्ल हरियाना ने सम्पूर्ण उत्तर भारत में अनेक गोवंशीय नस्लों को जन्म दिया है एवं अवर्णित गोवंशीय पशुओं के अनुवांशिक उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हैं। किन्तु पिछले 2 दशकों से इस नस्ल की संख्या में निरंतर गिरावट हो रही है। ऐसा माना जाता है कि अधिक दूध उत्पादन पाने की आकांक्षा तथा कृषि में बैलों की घटती उपयोगिता के कारण हरियाना नस्ल की संख्या कम हो रही है। हांलाकि इस सम्बन्ध में कोई अधिकारिक आंकड़े उपलब्ध नहीं है। हरियाना नस्ल के इस महत्वपूर्ण भूमिका को ध्यान में रखते हुए यह उचित होगा कि हरियाना नस्ल के पशुओं के विकास एवं संरक्षण के लिए प्रभावी योजना बना कर क्रियान्वित की जाये। हरियाना के अतिरिक्त, राज्य के कुछ किसान साहीवाल, थारपारकर जैसी गौवंशीय नस्लों का पालन कर रहे है। राज्य के गोवंश का 1/3 से भी अधिक अंश संकर प्रजाति के रूप में है। हरियाणा राज्य में भैंसों की विश्व की सर्वोत्म नस्ल मुर्राह की उत्पत्ति हुई है, एवं भैंसों की कुल संख्या का अधिकांश भाग इस नस्ल के रूप में विद्यमान हैं। इस नस्ल का प्रयोग भारत में ही नहीं वरन पूरे विश्व में भैंसों के उत्थान में किया जा रहा है। इसी लिए यह सत्य ही कहा जाता है कि

''मुर्राह भैंस सोने की खान, हरियाणा इसका मूल स्थान
जिसके घर में काली भैंस, उसके घर सदा दीवाली''

हरियाणा राज्य के कुछ एक किसान नीली–रावी की भैंसें भी पालते हैं। भैंस प्रजाति हरियाणा राज्य के दूध उत्पादन में मुख्य रूप से योगदान देती है। भेड़ ऊंट, बकरी की अधिकांश संख्या अवर्णित है, किन्तु बीटल बकरी और मुंजल भेड़ जैसी नस्लें राज्य की पशु सम्पदा का अभिन्न अंग है।

भारत विश्व में सबसे अधिक दूध उत्पादन करने वाला देश है। भारत भैंसों, बकरियों द्वारा दुग्ध उत्पादन में 2004 में विश्व में प्रथम स्थान पर है, तथा गोवंश द्वारा दुग्ध उत्पादन में भारत में 2004 में विश्व में दूसरे स्थान पर है। हरियाणा में 2001–02 में दुग्ध उत्पादन 49.78 लाख टन था, जो निरंतर बढ़ता रहा और 2007–08 में 54.42 लाख टन हो गया। वहीं भारत में 2001–2 में दुग्ध उत्पादन 844.06 लाख टन से निरंतर बढ़ते–बढ़ते 2007–08 में 1048.40 लाख टन हो गया। भारत का विश्व दुग्ध उत्पादन में योगदान 2004 में 14.9 प्रतिशत था।

विश्व में कुल दुग्ध उत्पादन में विभिन्न पशु प्रजाति के योगदान का विश्लेषण किया जाये तो यह पता चलता है कि गोवंश विश्व के कुल दुग्ध उत्पादन में 84 प्रतिशत का योगदान देता है। जबकि भैंसों का योगदान 12 प्रतिशत ही है किन्तु भारतीय परिपेक्ष में भैंस एवं गाय द्वारा कुल दुग्ध उत्पादन योगदान 54 प्रतिशत एवं 42 प्रतिशत का है। इससे यह स्पष्ट होता है कि भारत में दूध उत्पादन के लिए भैंसें सबसे महत्वपूर्ण प्रजाति है।

हरियाणा राज्य में तो भैंसें कुल दूध उत्पादन में 85 प्रतिशत से भी अधिक का योगदान प्रदान करती है। जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि राज्य के दूध उत्पादन के लिए भैंसें अत्याधिक महत्वपूर्ण है। यदि प्रति दिन प्रति व्यक्ति दूध उपलब्धता का अध्ययन किया जाये तो यह ज्ञात होगा कि सम्पूर्ण भारत में यह 225 ग्राम (2001–02) से बढ़ कर 252 ग्राम (2007–08) हो गया है। वहीं हरियाणा राज्य में यह 645 ग्राम (2001–02) से बढ़ कर 668 ग्राम (2009–10) हो गया है। प्रति दिन प्रति व्यक्ति दुग्ध उपलब्धता की दृष्टि से हरियाणा पूरे देश में पंजाब के बाद दूसरे स्थान पर है। हरियाणा राज्य की प्रति व्यक्ति दुग्ध उपलब्धता कुछ महत्वपूर्ण देशों जैसे अमेरिका (661 ग्राम प्रति दिन), डेनमार्क (660 ग्राम प्रति दिन), यू.के. (656 ग्राम प्रति दिन) आदि से अधिक

साहीवाल गाय

हरियाना गाय

बीटल बकरी

मुर्रा भैस

हरियाणा राज्य के पशुओं की प्रमुख नस्लें

है। प्रति दिन प्रति पशु उत्पादकता की दृष्टि से हरियाणा की स्वदेशी गाय भारत में प्रथम (4.60 किलोग्राम प्रति दिन), भैंसे व बकरियां (6.32 व 0.732 किलोग्राम प्रति दिन, क्रमशः) दूसरे संकर गाय (7.05 किलोग्राम प्रति दिन) 11 वें स्थान पर हैं। प्रति पशु उत्पादकता संकर गाय, स्वदेशी गाय, भैंसों विगत 8 वर्षो से बढ़ते हुए क्रम में है। किन्तु बकरी की उत्पादकता में कमी आई है। जिस पर समुचित ध्यान देते की आवश्यकता है। यह भी स्पष्ट होता है कि हरियाणा के पशुओं की दूध उत्पादकता पूरे भारत की औसत दूध उत्पादकता से अधिक है।

अंडा उत्पादन हरियाणा में निरंतर बढ़ रहा है। हरियाणा में 2001–02 में अंडा उत्पादन 10855 लाख था, जो निरंतर बढ़ते–बढ़ते 2007–08 में 40727 लाख हो गया। हरियाणा में 2005–06 के दौरान संभवतः अधिक संख्या में नए पौल्ट्री फार्म खोले गए, जिस कारण से इस वर्ष अंडा उत्पादन में भारी बढ़ोत्तरी दर्ज की गयी। भारतीय परिपेक्ष की दृष्टि से देखे तो सम्पूर्ण भारत में भी अंडा संख्या निरंतर बढ़ रही है। 2001–02 में अंडा संख्या 387288 लाख से बढ़ते–बढ़ते 2007–08 में 535324 लाख हो गयी। यदि हम अंडा उत्पादन में कुक्कुटों के योगदान पर विश्लेषण करे तो हम देखेंगे कि देशी कुक्कुटों द्वारा अंडा उत्पादन निरंतर कम हो रहा है। हरियाणा में 2001–02 में देशी कुक्कुटों द्वारा अंडा उत्पादन 16.67 प्रतिशत से लगातार कम होते–होते 2006–07 में 1.16 प्रतिशत तक पहुँच गया है। वहीं यदि उन्नतशील कुक्कुटों द्वारा अंडा उत्पादन में योगदान के आंकड़ों को देखे तो हमें ज्ञात होगा कि उन्नतशील कुक्कुटों द्वारा अंडा उत्पादन निरंतर बढ़ रहा है। हरियाणा मं उन्नतशील कुक्कुटों द्वारा अंडा उत्पादन 2001–02 में 83.33 प्रतिशत से बढ़ कर 2006–07 में 98.84 प्रतिशत तक पहुँच गया और भारत में भी उन्नतशील कुक्कुटों द्वारा अंडा उत्पादन बढ़ रहां है। परन्तु देसी नस्ल द्वारा अंडा उत्पादन कम हो रहा है। भारत में देसी नस्ल द्वारा अंडा उत्पादन 2001–02 में 24.18 प्रतिशत से घट कर 2007–08 में 20.73 प्रतिशत हो गया है। देसी नस्ल द्वारा कुक्कुट उत्पादकता जहाँ हरियाणा में लगातार कम हो रही है, 2001–02 (143.81 अंडा प्रति वर्ष) से 2006–07 (137.56 अंडा प्रति वर्ष), वहीं सम्पूर्ण भारत में देसी नस्ल द्वारा कुक्कुट उत्पादकता निरंतर बढ़ रही है, 2001–02 में 98.34 अंडा प्रति वर्ष से बढ़ कर 2006–07 में 116 अंडा प्रति वर्ष हो गयी। हरियाणा में उन्नतशील कुक्कुटों द्वारा उत्पादकता 2001–02 में 227.03 अंडा प्रति वर्ष थी और 2006–07 में 236 अंडा प्रति वर्ष हो गयी। भारत के आंकड़ों को देखे तो 2001 – 02 में 237.51 अंडा प्रति वर्ष से बढ़ कर 2006–07 में 271 अंडा प्रति वर्ष हो गयी। प्रति व्यक्ति अंडा उपलब्धता हरियाणा में निरंतर बढ़ गयी है। हरियाणा में 2001–02 में 51 अंडा प्रति वर्ष से बढ़ कर 2007–08 में 173 अंडा प्रति वर्ष हो गयी, और भारत के आंकड़ों पर दृष्टि डाले तो भारत में प्रति व्यक्ति अंडा उपलब्धता 2001–02 में 38 अंडा प्रति वर्ष से बढ़ कर 2007–08 में 47 अंडा प्रति वर्ष हो गयी।

मांस उत्पादन 2001–02 में 8.66 हजार टन और 2007–08 में 8.9 हजार टन हो गया एवं भारत में 2001–02 में 1921.83 हजार टन से बढ़ कर 2007–08 में 2572 हजार टन हो गया। ऊन उत्पादन हरियाणा मे 2001–02 में 24.61 लाख किलो से कम होते होते 2007–08 में 11.21 लाख किलो ही रह गया है। इस कमी का विशेष कारण है कि हरियाणा में भेड़ों की संख्या में भारी कमी आई है। भारत में 2001–02 में 494.97 लाख किलो से घट कर 2007–08 में 440.21 लाख किलो ही बचा है। भारत सरकार को भी ग्रास रूट लेवल पर भेंडों के संरक्षण पर विशेष बल देना चाहिए।

संस्तुतियां

- ★ मुर्राह नस्ल हेतु राज्य सरकार द्वारा चलाई जा रही योजना अत्यंत प्रभावी है। इस योजना के अंतर्गत उच्च अनुवांशिक गुणवता से उत्पन्न मुर्राह सांडों का उपयोग हरियाणा ही नहीं वरन पूरे देश में किया जा सकता है। जिससे देश में दुग्ध उत्पादन में वृद्धि होगी।
- ★ हरियाणा गोवंशीय नस्ल के अनुवांशिक उत्थान एवं संरक्षण की एक योजना के सृजन एवं क्रियान्वयन अति आवश्यक है।

★ लघुरोमंथी पशुओं (भेड़ व बकरी) के भी अनुवांशिक उत्थान की आवश्यकता है, ताकि इन पशुओं के स्वामियों का आर्थिक विकास संभव हो सके। बकरी की बीटल प्रजाति को राज्य की अवर्णित बकरियों के अनुवांशिक उत्थान हेतु प्रयोग किया जाना चाहिए।

★ राज्य सरकार द्वारा एफ.ए.ओ. द्वारा बनाये गए पशुधन अनुवांशिक संसाधन हेतु वैश्विक कार्य योजना के आधार पर एक योजना तैयार कर उसका प्रभावी क्रियान्वयन सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

तालिका संख्या–1: भारत के सापेक्ष हरियाणा राज्य में पशुधन

प्रजाति	हरियाणा / भारत	1992	1997	2003	अंतर (1992–2003) (%)	देश में हरियाणा का अंश (%)
कुल गाय	हरियाणा	21.36	24.00	15.40	–27.90	0.8
	भारत	2045.84	1988.81	1851.81	–9.48	
संकर गाय	हरियाणा	4.17	8.48	5.73	37.41	2.32
	भारत	152.15	200.99	246.86	62.25	
स्वदेशी गाय	हरियाणा	17.19	15.52	9.67	–43.75	0.6
	भारत	1893.69	1787.82	1604.95	–15.25	
भैंस	हरियाणा	43.72	48.23	60.35	38.04	6.16
	भारत	842.06	899.18	979.22	16.29	
भेड़	हरियाणा	10.43	12.75	6.33	–39.31	1.03
	भारत	507.83	574.94	614.69	21.04	
बकरी	हरियाणा	8.00	9.68	4.60	–42.5	0.37
	भारत	1152.79	1227.21	1243.58	7.88	
घोड़े व अन्य सम्बंधित प्रजातियाँ	हरियाणा	1.00	1.48	0.57	–43	2.99
	भारत	19.77	19.30	16.77	–15.17	
ऊंट	हरियाणा	1.26	0.96	0.5	–60.32	7.9
	भारत	10.31	9.12	6.32	–38.70	
सूकर	हरियाणा	5.16	7.00	1.20	–76.74	0.89
	भारत	127.88	132.91	135.19	5.72	
कुल पशु सम्पदा	हरियाणा	91.43	104.12	88.85	–2.82	1.95
	भारत	4708.60	4853.85	4850.02	3.00	
कुक्कुट	हरियाणा	85.80	92.23	136.19	58.73	2.79
	भारत	2840.2	3154.28	4573.99	61.04	

तालिका संख्या–2 : भारत के सापेक्ष हरियाणा राज्य में पशुधन उत्पादन एवं उत्पादकता

विवरण		2001–02		2002–03		2003–04		2004–05		2005–06		2006–07		2007–08	
		हरियाणा	भारत	हरियाणा	भारत	हरियाणा	भारत	हरियाणा	भारत	हरियाणा	भारत	हरियाणा	भारत	हरियाणा	भारत
दुग्ध उत्पादन (लाख टन)		49.78	844.06	51.24	861.59	52.21	880.82	52.22	924.84	52.99	970.66	53.67	1008.69	54.42	1048.40
प्रति व्यक्ति दुग्ध उपलब्धता (ग्राम/दिन)		645	225	647	230	643	231	631	233	628	241	633	246	632	252
उत्पादकता (किलो/दिन)	संकर गाय	6.707	6.437	6.796	6.52	6.791	6.528	6.842	6.395	6.871	6.437	6.990	6.386	7.045	6.523
	स्वदेशी गाय	4.277	1.913	4.286	1.903	4.323	1.923	4.373	1.945	4.381	1.970	4.474	2.062	4.604	2.096
	भैंस	5.908	4.09	5.957	4.126	5.960	4.241	6.140	4.287	6.200	4.300	6.259	4.394	6.320	4.443
	बकरी	0.781	0.33	0.784	0.314	0.787	0.323	0.776	0.325	0.758	0.346	0.749	0.360	0.732	0.369
दुग्ध उत्पादन में योगदान (%)	संकर गाय	11.19	18.24	11.33	17.57	11.45	18.02	9.08	18.72	8.95	20.22	8.94	20.35	8.62	21.05
	स्वदेशी गाय	8.66	23.13	8.32	23.27	8.14	22.34	5.61	22.29	5.49	21.34	5.52	21.07	5.62	21.05
	भैंस	78.04	54.43	78.28	54.87	78.31	55.37	84.47	55.11	84.75	54.43	84.74	54.74	85.02	54.13
	बकरी	2.11	4.20	2.07	4.29	2.09	4.28	0.86	3.88	0.81	3.96	0.78	3.84	0.77	3.77
अंडा संख्या (लाख)		10855	387288	12509	398228	12802	404031	14816	452009	15125	462354	39596	506630	40727	535324
अंडा उत्पादन में कुक्कुटों का योगदान (%)	देशी	16.67	24.18	16.78	24.31	16.12	21.92	3.05	20.79	2.94	20.81	1.16	19.18	–	20.73
	उन्नत	83.33	75.82	83.22	75.69	83.88	78.08	96.95	79.21	97.06	79.19	98.84	80.82	–	79.27
कुक्कुट उत्पादकता (अंडा/वर्ष)	देशी	143.81	98.34	147.46	98.90	143.47	103.94	136.18	110.06	130.47	111.65	137.56	116	–	116
	उन्नत	227.03	237.51	229.95	249.96	233.14	253.99	238.61	260.92	243.09	258.29	236	271	–	263
प्रति व्यक्ति अंडों की उपलब्धता (अंडा/वर्ष)		51	38	58	39	59	40	65	42	69	42	170	45	173	47
ऊन उत्पादन (लाख किलो)		24.61	494.97	25.46	505.42	25.18	485.48	13.04	445.75	11.36	448.84	11.21	450.85	11.21	440.21
मांस उत्पादन (हजार टन)		8.66	1921.83	8.73	2113.21	8.803	2080	9.145	2211	73.27	2310	7.699	2302	8.900	2572

सन्दर्भः–इस लेख में समस्त आंकड़े भारत सरकार द्वारा प्रकाशित ''बेसिक एनिमल हसबेंडरी–2008'' से लिए गए हैं।

गायों में संकरण की उपयोगिता

रमेश कुमार सिंह, नवीन कुमार, पंकज कुमार, चंदन कुमार एवं सौरभ सुलभ
राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

गायों का संकरण पद्धति एक नयी उत्सुकता को पुर्नजागरित कर रहा है। इन दिनों गायों कि इन ब्रिडग मात्रा काफी बढ़ गयी है, जो 6.25 प्रतिशत से ज्यादा नहीं होना चाहिए। अगर कोई पशु अपने पुर्वजों के एक गुणबिन्दु (जीन) का दो कॉपी रखता है तो उसे इनब्रेड पशु कहते है। ऐसे जिन जोड़ों की प्रतिशत मात्रा को इनब्रिडिंग भी सीएनट कहते है। अगर जीन जोड़ा हानिकारक जिनों का होता है, तो ये पशुओं की उत्पादन क्षमता को घटाता है। अतः पशुओं की उत्पादन क्षमता अपने इनब्रिडिंग काफी सीएनट के समानुपाती होता है।

इनब्रिडिंग के ठीक विपरीत हेटेरोसिस होता है जो गायों की संकरण से प्राप्त होता है। हेटेरोसिस पशुसंतान की ज्यादा उत्पादकता जो अपने माता–पिता की औसत उत्पादन तुलना से अधिक को कहते है। संकरण द्वारा और भी विशिष्ट लक्षण जैसे पशु–प्रजनन क्षमता तथा स्वास्थ्य गुण जो दूसरे नस्ली गायों में मिलती है, उसे भी पशु संतान में समाहित उत्पादकता के अलावा करता है। संकरित पशु अपने प्रजनन क्षमता तथा जीवनकाल अवधि को, दुग्ध उत्पादन क्षमता की कमी के कीमत पर बढ़ाता है। कृत्रिम गर्भाधन के बाद संकर गायों में निषेचन दर ज्यादा पायी जाती है। संकर गायों में जन्मजात मृत बच्चे देने की दर में भी कमी आती है।

संकरण दो तथ्यों जैसे हेटेरोसिस एवं संतान असमानता की कमी ओर ध्यान आकृष्ट करते है। तीन या चार साँड़ प्रयोग में लाकर हेटेटोसिस की कमी को रोका जा सकता है। तीन नस्ली चक्रीये संकरण द्वारा 86–88 प्रतिशत हेटेरोसिस बरकरार रखा जा सकता है। संकर गायों में दुग्ध उत्पादकता की कमी अगले पीढ़ी दर पीढ़ी आता है, पर प्रजनन क्षमता एवं स्वास्थ्य गुण बरकरार रहते है। पर यह कह पाना मुश्किल होता है कि दूध उत्पादन कमी की भरपायी बढ़े प्रजनन क्षमता एवं स्वास्थ्यगुण कर पाता है कि नहीं। इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, बहुलक्षणिक चयन प्रक्रिया अपनायी जा रही है जिससे दूध उत्पादकता के साथ, पशु प्रजनन क्षमता एवं स्वस्थ्य गुणों में भी वृद्धि मिलती है। पशु प्रजनन क्षमता की हैरिटेबीलीटी बहुत ही कम लगभग 0.05 प्रतिशत होती है। इसका मतलब है कि केवल पशु प्रजनन क्षमता विभिन्नता के मात्र 5 प्रतिशत हिस्सा ही गुणबिन्दुओं से संबंधित है। आजकल वैज्ञानिक एक गुणबिन्दु की पहचान कर रहे है जो पशु प्रजनन क्षमता को प्रभावित करता है।

इस दिशा में इन दिनों साँड़ों का चयन उसके (बछड़ी गर्भाधान दर लक्षण) के आधार पर किया जाने लगा है।

बछड़ी गर्भाधान दर लक्षण की गणना कुल योग्य पशुओं में कितना पशु गर्भधारण 21 दिनों की अवधि में करते है, उसका अनुपात निकालकर किया जाता है। इसका लक्षण हैरिटेबीलिटी लगभग 0.04 है। ये प्रजनन क्षमता की आनुवांशिक विकास को चुनौतीपूर्ण बनाता है। पिछली काफी दशकों से गायों कि प्रजनन क्षमता में कमी आयी है। बछड़ी गर्भाधान दर लक्षण को पशु चुनाव आधार में शामिल होने से पशु प्रजनन क्षमता में आनुवांशिक सुधार हुए हैं। पशुसंकरण बिना दूध उत्पादन घटोतरी के प्रजनन क्षमता एवं जीवनकाल अवधि लक्षण के आनुवांशिक सुधार में अहम भुमिका निभायी है। बछड़ी गर्भाधान दर लक्षण सॉड़ चयन में लक्षण शामिल करने से, पशु प्रजनन क्षमता में व्यापक सुधार हुआ है।

अतः पशुओं की उक्तवर्णित लक्षणों का आनुंवाशिक विकास बहुत ही अपेक्षित है, जो सीधे तौर से डेरी व्यवसाय को लाभकारी बनाने में सहायक है। पशुओं में इन लक्षणों पर आधारित चयन करने के लिए, पशुओं की विभिन्नता की पहचान विभिन्न नयी तकनीकों द्वारा करने की जरूरत है।

❋ ❋ ❋ ❋ ❋

करन फ्रीज बछड़ियों (प्रोबायोटिक सम्पूरक व असम्पूरक) में विकास व स्वास्थ के लिए कुछ प्लासिका जैविक संकेतों का मूल्यांकन

आनन्द लक्ष्मी, शशिकांत दांडग, नामागिरी लक्ष्मी एवं जे.पी. सहगल
राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

डेरी पशुओं के बछड़ों का पोषण और प्रबन्धन सम्बन्धी कारक उनके शारीरिक विकास को प्रभावित करते है। हमारे फार्म पर बछड़ों को मादा पशुओं को प्रसव के छः महीने उपरान्त अलग किया जाता है। इसी अलगाव समय इनके खाद्य पदार्थो में परिवर्तन आ जाता है। पूर्व तरल पदार्थो पर आश्रित रहने वाले बछड़े को ठोस पदार्थो का सेवन कराया जाता है। पोषक तत्वों में परिवर्तन होने पर पशु तनाव महसूस करते हैं। ठोस पदार्थो का सेवन कराना भी अनिवार्य होता है क्योंकि यह रूय्मन् और पाचन तंत्र का विकास करता है। करन फ्रीज बछड़ियों में आईजीएफ–1 (Insulin Like Growth Factor-I) हारमोन के स्तर के संदर्भ में अध्ययन नहीं किया गया है। लैक्टोफेरिन हीम रहित लोह बंधित ग्लयीकोप्रोटीन के परिवार का एक बहुआयामी सदस्य है। लैक्टोफेरिन न्यूट्रोफिल रक्त कोशिकाओं में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। इन न्यूट्रोफिल कोशिकाओं के द्वारा संक्रमण और सूजन के खिलाफ रक्षा की जाती है। यह रक्त कोशिकाओं को सक्रिय करता है। आईजीएफ–1 शरीर के कोशिकाओं के प्रसार संकेतों की गतिविधियों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसे नवजात बछड़ों के शारीरिक विकास के लिए एक जैविक संकेत की रूप में प्रयोग किया गया है। यह सोमोटोट्रापिक अक्ष और प्रतिरक्षा प्रणाली के बीच द्विदिश संचार के तंत्र को जोड़ता है।

हैप्टोग्लोबीन (Haptoglobin) प्रोटीन का मुख्य स्त्रोत यकृत है। यह क्लिनिकल और सब क्लिनिकल संक्रमण निर्देशित करने के प्रति आशाजनक संकेत माना गया है। हैप्टोग्लोबीन प्रोटीन पर्यावरण सम्बन्धी तनाव स्तर की गंभीरता को भी दर्शाता है। पशु के स्वास्थ्य की स्थिति को टोल–4 रिसेप्टर्स (Toll - 4 Receptor) की अभिव्यक्ति के माध्यम से भी नियंत्रित किया जाता है। समर्थक रोग प्रतिक्रियाओं का उत्पन्न संक्रमण रोगों के द्वारा होता है। संक्रमण रोगों के विरूद्ध रोगप्रतिक्रियाओं का विकास कुदरती रूप से होता है, किन्तु प्राकृतिक और प्रबन्धन प्रक्रिया के अंतर्गत जन्म प्रसव व पशुओं में दुग्ध–वर्जित अवस्थाओं के प्रति उत्तर में भी रोगप्रतिक्रियाओं की अभिव्यक्ति होती है। राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान करनाल के संशोधन अध्ययन के अंतर्गत छह महीने उम्र की ओर दुग्ध वर्जित अवस्था में प्रवेश किए हुए पंद्रह संकर करन फ्रीज बछड़ियों का चयन किया गया। उन्हें गेहूँ का भूसा और दाना 1:1 अनुपात में दिया गया। उन्हें हरा चारा भी 2 किलो ग्राम/पशु के हिसाब से दिया गया। शरीर का वजन लगातार एक महीने के अंतरालं से चयन उपरान्त आठ महीनों तक लिया गया। हफ्ते में दो बार बछड़ियों से रक्त के नमूने भी लिए। रक्त के नमूनों से रक्त प्लाजमा को अलग किया और प्लाजमा के नमूनों में आई.जी.एफ.–1, लैक्टोफेरीन, हैप्टझेग्लोबिन औश्र टॉल–4 रिसेप्टर जीन (सफेद रक्त कोशिकाओं) की अभिव्यक्ति और बताए गए मानकों का विश्लेषण किया गया। बछड़ियों के अलगाव के 122 दिन पश्चात् उन्हें इनके शरीर के वजन के आधार पर दो समूहों में विभाजित किया गया। एक सामान्य वजन (सा.व.) वाले बछड़ियों का समूह और दूसरा औसतन सामान्य वजन से कम वजन (क.व.) वाले बछड़ियों

का समूह बनाया गया। सामान्य एवं कम शारीरिक भार वाले बछड़ियों के भार 108–124 कि.ग्रा. क्रमशः माना गया। कम वजन वाले बछड़ियों के समूह को खमीर प्रोबायोटिक 300 ग्राम/क्विंटल दाना के हिसाब से संपूरित किया गया। प्रोबियोटिक का सेवन अलगाव के 122 दिन उपरान्त लगातार 14 महीने की आयु तक किया गया। संपूरित या अनुपूरण अवधि के दौरान भी खून के नमूने और शरीर के वजन कार्यक्रम अनुसार इक्ट्ठे किए गए और प्लाजमा में आईजीएफ–1, लैक्टोफेरिन और हैप्टोग्लोबीन या विश्लेषण एंजाइम इम्यूनो एस्से (ई.आई.ए) द्वारा किया गया। टॉल–4 रिसेप्टर की अभिव्यक्ति रियल टाइम पी.सी.आर. तकनीक के द्वारा किया गया।

परिणाम

कम वजन (क.व.) समूह के अंतर्गत जिन बछड़ियों का वर्गीकरण किया गया था अनके शरीर का भार सामान्य वजन (सा.व.) वाले बछड़ियों के तुलना में अलगाव के 122 दिन उपरान्त कम पाया गया (P<0.001)सम्पूरण के साठ दिन की अवधि के अंतर्गत भी दोनों समूह के पशुओं के बीच महत्वपूर्ण अंतर (P<0.001)पाया गया। किन्तु इन साठ दिनों के पश्चात (181–220) जब दो समूहों के शरीर के भार की तुलनात्मक परीक्षण किया गया तो यह देखा गया कि 181–220 दिन के अवधि के अंतर्गत भार का अंतर संकुचित (P<0.001) पाया गया अथवा संपूरित अवधि के दौरान या साठ दिन खामीर प्रोबायोटिक संपूरण के पश्चात् कम वजन वाले पशुओं में शारीरिक भार की वृद्धि सामान्य भार वाले पशुओं के समूह के मुकाबले ज्यादा पाई गई। अनुपूरण अवधि के पूर्व या पश्चात् शुष्क पदार्थ अंतरग्रहण (डीएमआई), फीड रूपान्तरण क्षमता जैसे फीड सम्बन्धित पैरामीटर के अंतर्गत दोनों समूहों के बीच महत्वपूर्ण अंतर नहीं पाया गया। पशुओं के दैनिक शरीर भार का भी विश्लेषण किया गया था। पूर्व अनुपूरण भार के दौरान कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं पाया गया, किन्तु शुष्क पदार्थ अन्तर्ग्रहण/100 कि.ग्रा. शारीरिक भार (DMI 100 kg B.W.), पचायपन शरीर वजन (Metabolic Body Weight), औसतन शरीर वजन (Average Body Weight) सामान्य भार वाले बछड़ियों के समूह में कम भार वाले समूह की तुलना करने पर महत्वपूर्ण अंतर (P<0.001) पाया गया। यह परिणाम अनुपूरण के पूर्व और पश्चात् दोनों अवधि में पाया गया। (P<0.001) के संचार स्तर की बढ़त सा.व. वाले समूह के पशुओं में 90 दिन अलगाव पश्चात् पाई गाई जबकि क.व. वाले समूह में आईजीएफ–I स्तर की बढ़त अनुपूरण अवधि के दौरान अर्थात् 150 दिन अलगाव के पश्चात् पाई गई। प्लाजमा आईजीएफ– की सांद्रता शरीर के भार की वृद्धि के सकारात्मक परस्पर संबंध पाए गए। प्लासिका की सांद्रता शरीर के भार की वृद्धि के समकारत्मक परस्पर संबंध पाए गए। प्लाजमा के स्तर में सकारात्मक रूप से और लैप्टोफेरीन नकारात्मक रूप से शरीर के वजन के साथ सम्बन्ध दर्शाए। अलगाव के पश्चात् 91 दिन तक प्लासिका लैक्टोफेरिन का स्तर दोनों समूह के बछड़ियों में सामान्य स्तर (200+50ngèml) से अधिक पाया गया। लैक्टोफेरीन का स्तर अलगाव के पश्चात् 90 दिन तक उच्च स्तर पर रहा जबकि 120 दिनों के पश्चात् सामान्य वजन वाले समूह के बछड़ियों में घटकर प्लासिका में इसकी वजन सांद्रता (200 ngèml) पाई गई। कम वजन वाले समूह में लगभग इसी तरह परिणाम पाए गए। किन्तु सामान्य स्तर प्राप्त करने में सा.व. वाले पशुओं ने अधिक समय लिया। किन्तु सम्पूरित या अनुपूरण अवधि के दौरान क.व. वाले समूह के बछड़ियों के प्लासिका में लैक्टोफेरिन का स्तर कम पाया गया जो कि सा.व. वाले समूह के स्तर की तुलना में कम था। हैप्टोगलोबिन (ह.पी.) तीव्र चरण प्रोटीन है जोकि कोई एक बीमारी के विरूद्ध संरक्षण प्रदान नहीं करते, बल्कि सामान्य रूप से शरीर के भीतर उत्पन्न हुई के खिलाफ संरक्षण प्रदान करते हैं। ह.पी. के प्लासिका स्तर दोनों

समूह के बछड़ियों में अलगाव के तुरन्त पश्चात् 60–90 दिन तक सामान्य स्तर (200 ± 50ngèml) से अधिक पाया गया (500 ± 150ngèml) । क.व. वाले समूह में अधिक था। लैक्टोफेरीन के स्तर की तरह अलगाव के 120 दिन पश्चात् प्लासिका में ह.पी. का स्तर सामान्य स्तर पर पहुंच गया, किन्तु सम्पूरित अवधि के दौरान क.व. वाले समूह के बछड़ियों में प्लासिका स्तर घट गया और प्लासिका में ह.पी. की सांद्रता 200+50ngèml प्लासिका लैक्टोफेरीन व हैप्टोग्लोबीन का स्तर एक–दूसरे के साथ सकारात्मक रूप से दर्शाया गया। यह सम्बन्ध क.व. वाले बछड़ियों के समूह में अधिक महत्वपूर्ण था।

इस अध्ययन के दौरान यह देखा गया कि टॉल–4 रिसेप्टर की अभिव्यक्ति अलगाव के 60 दिन पश्चात् स.व. समूह के बछड़ियों में क.व. वाले बछड़ियों के समूह की तुलना में 12 गुण ज्यादा था। टॉल 4 रिसेप्टर की अभिव्यक्ति क.व. वाले बछड़ियों में प्राबायोटिक के 90 दिन अनूपूरण अवधि के पश्चात् रक्त कोशिकाओं में पाया गया। रक्त मोनोसाईट कोशिकाओं में टॉल–4 रिसेप्टर की अभिव्यक्ति का स्तर सा.व. वाले बछड़ियों की तुलना में निम्न स्तर पर विनियमित था। अतः इस शोध कार्य से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि बछड़ियों अलगाव के पश्चात् तनावपूर्ण जीवन व्यतीत करते है और प्लासिका आईजीएफ–1 हैप्टोग्लोबीन, लैक्टोफेरीन और टॉल 4 रिसेप्टर के स्तर इस तनाव के स्तर को सकारात्मक रूप से दर्शाते हैं। इस शोध कार्य से यह भी निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि बछड़ियों में शरीर की वजन वृद्धि सामान्य स्तर से कम हो और तनाव कारक की उपस्थिति में वर्णित प्लासिका कारक महत्वपूर्ण रूप से शारीरिक विकास के क्षीण स्थिति को दर्शाते हैं। जिन बछड़ियों का शरीर भार औसतन भार से कम है तो, खामिर प्रोबयोटिक जैसे पदार्थो का उनके खाद्य में अपेक्षित मात्रा में सेवन कराना चाहिए। इस शोध कार्य में यह देखा गया कि प्रोबायोटिक के सेवन कराने से बछड़ियों के शरीर भार में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई। इस अध्ययन को अगर हम बड़े पैमाने पर अधिक बछड़ियों को अलगाव के तुरन्त पश्चात् अगर प्रोबायोटिक्स दे तो शायद प्लासिका तनावपूर्ण संकेतों के स्तर में कमी आएगी और शरीर के विकास में सहयोग होगा। प्लासिका आईजीएफ–1 , हैप्टोग्लोबीन, टॉल–4 रिसेप्टर और लैक्टोफेरीन तनाव व प्रतिरक्षण प्रणाली के संवेदिक सूचक माने जा सकते हैं और इन सूचकों के प्लासिका स्तर से पशु के तनाव की तीव्रता का पता लगाया जा सकता है।

❁ ❁ ❁ ❁ ❁

राष्ट्रभाषा हिन्दी को गंगा नहीं समुद्र बनाना होगा।

आचार्य विनोबाभावे

राष्ट्रभाषा हिन्दी भारतीय विचारों की वेशभूषा है।

चाणक्य– महान नीति मर्मज्ञ

दूध व्युतपन्न जैवक्रियाशील पेप्टाइड

बिमलेश मान, प्रेरणा सैनी, निधि यादव एवं शिल्पा विज

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

जैव क्रियाशील पेप्टाइड विशिष्ट प्रोटीन खंड है जोकि शरीर के कार्यो एवं गतिविधियों पर सकारात्मक प्रभाव डालते हैं, अंततः स्वास्थ्य प्रभावित करते हैं। इनके मौखिक सेवन पर जैवक्रियाशील पेप्टाइड अपने अमीनों अम्ल के अनुक्रम के अनुसार शरीर के विभिन्न तंत्रों को प्रभावित करता है, जैसे ह्रदय, पाचन प्रतिरक्षा एवं तंत्रिका तंत्र। इन विशिष्ट पेप्टाइड द्वारा पुरानी बीमारियों के जोखिम को कम करने और प्राकृतिक सुरक्षा को बढा कर मानव स्वास्थ्य को बढावा देने की वजह से पिछले कुछ वर्षो में वैज्ञानिकों का रूझान इन पेप्टाइड की तरफ बढा है। अब तक ज्ञात कई पेप्टाइड अनुक्रमों ने विभिन्न स्वास्थ्य लाभकारी प्रभाव दर्शाए हैं जैसे कि रोगाणुरोधी, प्रतिआक्सीकारक, एंटीथ्रोम्बोटिक, प्रतिउच्चरक्तचाप और प्रतिरक्षा व्यवस्थित गतिविधियाँ आदि। ये पेप्टाइड विभिन्न आकार के होते हैं जाकि तीन से बीस एमिनों एसिड अवशेषों से बने होते हैं और कई पेप्टाइड बहुक्रियाशील गुण प्रकट करती हैं। दूध प्रोटीन इन जैवक्रियाशील पेप्टाइड का सबसे महत्वपूर्ण स्त्रोत माना जाता है और यह जैवक्रियाशील पेप्टाइड बहुमात्रा में दूध प्रोटीन जलांषनजात और किण्वित डेरी उत्पादों में पाई गई हैं।

जैवक्रियाशील पेप्टाइड का उत्पादन

ये जैवक्रियाशील पेप्टाइड दूध प्रोटीन में निष्क्रिय रूप से उपस्थित होती है और इन्हें तीन विधियों द्वारा उत्पादित किया जा सकता है :–

(क) एंजाइमों द्वारा जलअपघटन व प्रोटियोलिसिस

सामान्यतः इन अव्यक्त जैवकियाशील पेप्टाइड का विपाटन पाचन किया के दौरान पेप्सिन और अन्य अग्नाशयी एंजाइम (ट्रिप्सिन, कायमोट्रप्सिन, कारबोक्सी और एमीनोपेप्टीडेस) द्वारा दूध प्रोटीन से किया जाता है। इसके अलावा यह पेप्टाइडस, सूक्ष्मजीवों (बैक्टीरिया), फंगल एवं पौधों से प्राप्त विभिन्न एंजाइम जैसे–एल्कलेज, पपेंन, न्यूटरेज, थर्मोलयसिन द्वारा दुग्ध प्रोटीन को जलअपघटित कर उत्पन्न की जा सकती है।

(ख) प्रसंस्करण उपचार

दूध के प्रसंस्करण के दौरान दूध प्रोटीन में विभिन्न सरंचनात्मक और रासायनिक परिवर्तन होते हैं जिसके परिण ामस्वरूप विभिन्न जैविक पेप्टाइड उत्पन्न होती है। विशेष रूप से ताप और/या क्षार उपचार के दौरान कुछ अतिरिक्त अंतर आणविक बांड उत्पन्न होते है जोकि अपचनीय होते हैं। यह पेप्टाइड कई दुग्ध उत्पादों के निर्माण के दौरान भी उत्पन्न होती है उदाहरणतः हाइपोएलर्जीक शिशुओं के लिए तैयार आंशिक जलअपघटित दुग्ध प्रोटीन शिशु फार्मूला। चीज में फोस्फोपेप्टसाइडस प्राकृतिक घटक के रूप में शामिल होती है और चीज के पकने के दौरान हुई प्रोटियोलेसिस से विभिन्न एसीई निरोधात्मक पेप्टाइड का गठन हो जाता है।

(ग) सूक्ष्मजैविक किण्वन

डेरी उद्योग में प्रयोग होने वाले डेरी स्टार्टर जीवाणु कुछ हद तक प्रोटियोलेटिक होते हैं। जैवकियाशील पेप्टाइड को इस प्रकार के स्टार्टर और गैर स्टार्टर बैक्टीरिया की प्रोटियोलेटिक गतिविधियों द्वारा उत्पन्न किया जा सकता है जैसे :– लेक्टोबेसिलस हेल्वेटिक्स, लेक्टोबेसिलस डेलब्रुकी उपजाति बलगेरीकस, लेक्टोबेसिलस प्लेन्टेरियम, लेक्टोबेसिलस रेहमसस, लेक्टोबेसिलस एसिडोफिलस, लेक्टोफोकस लेक्टिस, सेट्रप्टोकोकस थर्मोफिलस आदि का प्रयोग किण्वित

डेयरी उत्पादों को बनाने के लिए होता है। लक्टिक एसिड जीवाणु (लैब) की प्रोटियोलेटिक प्रणाली में कोशिका भित्ती से बाध्य प्रोटिनेज और कई तरह के विशिष्ट अंतर जीवकोषीय पेप्टाइडेज होते हैं। बाहय जीवकोषीय प्रोटिनेज दूध प्रोटीन को ओलिगोपेप्टाइड में तोड देते हैं, फिर इन लम्बी ओलिगोपेप्टाइड को अंतर जीवकोषीय पेप्टाइडेज जैवक्रियाशील पेप्टाइड में तोड देते हैं।

जैवक्रियाशील पेप्टाइडस के स्त्रोत

दूध प्रभोजिन व प्रोटीन का समृद्ध स्त्रोत है। कैसिन एवं मट्ठा प्रोटीन दूध में प्रोटीन के मुख्य समूह हैं, कैसिन समस्त दूध प्रोटीन का कुल 80 प्रतिशत भाग होता है और एल्फा, बीटा और काप्पा कैसिन में विभाजित होता है। मटठा प्रोटीन बीटा लैक्टोग्लोबिलिन, एल्फा लैक्टोएलब्यूमीन, इम्योनोग्लोबिलिन, ग्लयकोमक्रापेप्टाइडस, बोवाइन सीरम एलब्यूमीन और अल्प मात्रा में लैक्टोपरआक्सीडेस, लायसोजायीम और लैक्टोफेरिन से बना होता है। कैसिन और मट्ठा प्रोटीन का प्रत्येक छोटे अंश के अपने अद्वितीय जैविक गुण होते हैं। दूध प्रोटीन को एंजोइमेटिक प्रोटियोलेसिस द्वारा कई पेप्टाइड टुकडों में विकृत किया जा सकता है और यह दूध प्रोटीन जैवक्रियाशील पेप्टाइड के स्त्रोत का काम करते हैं।

विभिन्न जैवक्रियाशील पेप्साइड की कार्यप्रणाली

(क) ए सी ई निरोधात्मक गतिविधि व प्रतिउच्चरक्तचाप प्रणाली

दूध प्रोटीन से प्राप्त जैविक रूप से सक्रिय पेप्टाइडस द्वारा रक्तचाप को नियंत्रित करने की क्षमता का अच्छी तरह से अध्ययन किया गया है। ऐनाजियोटेनसिन 1 परिवर्तित करने वाला एंजाइम (ए सी ई: काईनेस पेप्टाइडल डाईपेप्टाइड हाइड्रोलेस ईसी 3.4.15.1) रक्तचाप विनियमन के लिए महत्वपूर्ण है। जब गुर्दो में रक्त की मात्रा या रक्त का प्रवाह कम हो जाता है तब रेनिन ऐनाजियोटेनसिनोजेन पर कार्य कर उसे ऐनजियोटेनसिन 1 में बदल देता है। फिर ए सी ई निष्क्रिय प्रोहार्मोन ऐनजियोटेनसिन 1 (डेकापेप्टाइड) को ऐनजियोटेनसिन 2 (आक्ससोपेप्टाइड) में जलअपघटन होने की प्रकिया को उत्प्रेरित करता है। जिसके परिणामस्वरूप नसों के कसाव द्वारा रक्तचाप में वृद्धि हो जाती है। इसके अलावा ए सी ई नसों को फैलाने वाले पेप्टाइड ब्रेडिकाईनिन एवं अंतर्जात ओपिओइड पेप्टाइड मैट ऐनकेफालिन को भी निष्क्रिय करता है। दूध प्रोटीन से अनेक जैवक्रियाशील पेप्टाइड विलगित किए गए हैं जोकि ऐनजियोटेनसिन पर निरोधात्मक प्रभाव डालते हैं जिससे यह पेप्टाइड की प्रतिउच्चरक्तचाप गतिविधि दर्शाते हैं। यह ए सी ई अवरोधक पेप्टाइड ऐनजियोटेनसिन के सी टर्मिनल से डाईपेप्टाइड को तोड़ देता है। जिससे ए सी ई द्वारा ऐनजियोटेनसिन1 का ऐनजियोटेनसिन 2 में रूपांतरण नहीं हो पाता है। इस तर जैवक्रियाशील पेप्टाइड शरीर में रक्तचाप को नियंत्रित करने मे मदद करती है।

(ख) आपिओइड कियाएं एवं गतिविधि

हाल ही में विभिन्न अध्ययन द्वारा यह प्रमाण मिले हैं कि दुग्ध उत्पादों में कुछ ऐसे पेप्टाइड है जो तंत्रिका तंत्र में एक सक्रिय भूमिका निभाते हैं, इनको ओपिओइड पेप्टाइड के रूप में जाना जाता है। बीटा–कैसोमोरफिन, पहला खोजा गया ओपिओइड पेप्टाइड है जोकि बीटा कैसिन का अंश है। एक बार खून में अवशोषण होने के बाद, यह पेप्टाइड मस्तिष्क और विभिन्न अन्य अंगों में पहुंचकर, अफीम और मार्फीन के समान औषधीय गुणों को प्रदर्शित करते हैं। यही वजह है कि दूध पीने के बाद नवजात शिशु शांत और निद्रागस्त हो जाते हैं।

(ग) खनिज बंधक गतिविधि

केजीनोफोस्फोपेप्साइडस (सी.पी.पी.), ट्रिप्सिन द्वारा केसिन के पाचन से प्राप्त जैवक्रियाशाील पेप्टाइडस हैं और इनका प्रयोग खाद्य पदार्थ जैसे–ब्रेड, पेस्ट्री, चाकलेट, केरमेल आदि में किया गया है। सी.पी.पी. में द्विसंयोजक धातु जैस–केल्सियम, मैगनीसियम, लोहधातु, जिन्क, बेरियम, क्रोमियम, निक्कल, कोबाल्ट और सिरियम आदि को बंधने और घुलनशील

बनाने की क्षमता है। सी.पी.पी. कैल्शियम फास्फेट को सीराइल फोस्फेट समूह द्वारा जोडकर एमोरफस कैल्शियम फास्फेट का स्थिरीकरण कर उसे एमोफरस डाई–कैल्शियम एवं अन्य खनिजों के अवशोषण में वृद्धि करते हैं। इन पेप्टाइड का उपयोग दाँतों के ऐनेमल को मजबूत करने के लिये किया जा रहा है।

(घ) प्रतिआक्सीकारक गतिविधि:–

इन दिनों वैज्ञानिको का रूझान विभिन्न ऑक्सीकारक प्रणालियों के गैर हानिकारक प्राकृतिक प्रतिऑक्सीकारक पदार्थो को पहचानने और विवरणीकरण करने में हो रहा है। ये ऑक्सीकारक मुक्त मूलक पर विभिन्न प्रणाली से कियाशील होते हैं। जैसे मेटल आयन को बांधकर (जो ऑक्सीकरण के लिए उत्तरदायी होते हैं), मुक्त मूलक को सीधे ही स्केवेंज करके इत्यादि। इनमें से प्रमुख प्राकृतिक प्रतिऑक्सीकारक पदार्थ पौधों एवं गैर प्रोटीन स्त्रोत से होते है। दूध से व्युत्पन्न जैवकियाशील पैप्टाइड की प्रतिऑक्सीकारक गतिविधि के कुछ अमीनों अम्ल जैसे प्रालिन, हिस्टीडिन एवं अन्य हाइड्रोफोबिक अमीनों अम्ल की वजह से पाई गई है। इन पेप्टाइड को इस्तेमाल वसायुक्त भोजन की लम्बे समय तक अच्छा रखने के लिए भी किया जा सकता है।

(ड) एंटीमाइक्रोबियल क्रिया

पेप्टाइड की रोगाणुरोधी गतिविधि को झिल्ली तोड (विभाजन) गतिविधि के रूप में परिभाषित किया गया है। ये पेप्टाइड प्रोकेरयोटिक कोशिका झिल्ली पर विशिष्ट रूप से क्रियाशील होते हैं। अनेक पेप्टाइड प्रमुख रूप से अल्फा हेलिकल सरंचना, केटआयनिक व उभयधर्मी प्रकृति के होते हैं। इनमें से कुछ हाइड्रोफोबिक अल्फा हेलीकल पेप्टाइड भी रोगाणुरोधी गतिविधि दर्शाते हैं। एंटीबायोटिक की तुलना में रोगाणुरोधी पेप्टाइड निर्धारित कोशिका को तीव्रता से मारने में लाभदायक होते हैं। साथ ही यह ऐटीबायोटिक प्रतिरोधी रोगाणुओं पर भी समर्थ हैं।

निष्कर्ष

जैव क्रियाशील पेप्टाइड दर्शयी गई विभिन्न शारीरिक गतिविधियों व शारीरिक स्वास्थय लाभ की वजह से इन पेप्टाइडस को विभिन्न कार्यात्मक खाद्य पदार्थों में कार्यात्मक संघटक के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। निसंदेह:, दूध व्युतपन्न यह जैवक्रियाशील पेप्टाइड डेयरी उद्योग को न्यूट्रासूटिकल बाजार का एक बड़ा हिस्सा बनाने में प्रमुख भूमिका निभा सकती है। लेकिन इन पेप्टाइडस को आमतौर पर स्वास्थय के सरंक्षण और पुरानी बिमारियों के इलाज के लिए उपयोग करने के लिए, प्रोटीन जैवरसायनज्ञों, टेक्नोलोजिस्ट और पोषण विशेषज्ञ के बीच में गहन और निरन्तर ज्ञान का आदान प्रदान होना चाहिए ताकि मनुष्यों की शारीरिक गतिविधियों पर इन पेप्टाइडस का प्रभाव जाना जा सके।

❁ ❁ ❁ ❁ ❁

राष्ट्रीय ज्ञान के लिए अपनी भाषा जरूरी है।

डा. ब्रहमानन्द रेड्डी

राष्ट्रभाषा हिन्दी के द्वारा सारे भारत को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है।

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती

विदेशी सब्जियों की खेती करके लाभ कमाएं

सतीश कुमार एंव ए. एस. हरीका
राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

हरियाणा तीन तरफ से देश की राजधानी व महानगर से सटा होने के कारण यहां के किसान अनेक प्रकार की सब्जियों की खेती करके अधिक धन कमा सकते हैं। इसके साथ–साथ अन्तरराष्ट्रीय हवाई अड्डा होने के कारण यहां से सब्जियों को बाहर भी भेजा जा सकता है। कुछ सब्जियां जैसेः एसपेरेगस, ब्रोकोली, चायनीज कैबेज, ब्रुसलन, स्पराडर सैलेरी लीक, चेरी, टोमेटो सलाद आदि मुख्य विदेशी सब्जियां हैं। जिनके बारे में यहां कम जानकारी है तथा जिनकी तकनीकी जानकारी एवं अनेक बीजों की कम उपलब्धता के कारण प्रचलन लाभ नहीं किया जा सका है, जबकि महानगरों में पांच सितारा होटलों व रेस्टोरेटों में शोपिंग मॉल्स में विदशी सब्जियों की मांग में निरन्तर वृद्धि हो रही है। कम उत्पादन और भारी मांग के कारण इन सब्जियों को किसान बड़े क्षेत्र में पैदा करके अधिक लाभ कमा सकते हैं। किसान जो बड़े नगरों के पास है उनके लिए इन सब्जियों को सफलतापूर्वक उगाने के लिए लाभ का सौदा हो सकता है । इन सब्जियों को सफलतापूर्वक उगाने की तकनीकी जानकारी सही समय पर उपलब्ध कराई जाएं तो किसान इनको उत्पादन कर अच्छा धन कमा सकते हैं। इन सब्जियों की सस्य क्रियाएं निम्नलिखित है।

एसपेरेगस: यह एक बहुवर्षीय सब्जी है तथा इसके तने को स्पीयर कहते है। इसकी सब्जी सूप, अचार तथा डिब्बा बंद उत्पाद के रूप में प्रयोग किया जाता है इसकी उन्नत किस्में प्रफैक्शन,मेरी वाशिंगटन, बलाक ईम्पीरियल–84 आदि है। इसकी सफल खेती के लिए उचित जल निकास वाली दोमट मिट्टी जिसका पी.एच. मान 6–7 हो, अच्छी होती है। इसकी रोपाई फरवरी तथा जुलाई में की जाती है जिसको 90 से 45 सें मी. की दूरी पर लगाया जाता है जैसे ही इसके स्पीयर आरम्भ हो तो पत्तियों में मिटटी चढ़ा दें। इससे स्प्रीयर कोमल तथा सफेद रहेंगे। इसके एक पौधे से 10–12 स्पीयर मिल जाते हैं तथा दो–तीन साल बाद अच्छी उपज मिलने लगती है।

ब्रोकोली:– यह फूल गोभी की तरह ही होती है तथा गोभी वर्षीय फसलों में सबसे पौष्टिक तथा गुणकारी है। फूलों के बन्द गुच्छे आपस में जुड़े हुए निकलते है। इससे सलाद, सूखी सब्जी, सूप, रायता, पकौड़े तथा परोठे बनाकर खाया जाता है। यह मधुमेह तथा हृदय रोगों के मरीजों के लिए बहुत लाभदायक होती है । यह बलुई दोमट व जल निकास वाली भूमि में अच्छी पैदावार देती है। इसकी निम्न जातियां हैं –

के.टी.एस.–1, इटालियन ग्रीन हैड, पंजाब ब्रोकोली तथा संकर किस्मों में क्रिएस्टा, पैकमेन, ग्रीन ब्यूटी आदि है। ब्रोकोली तथा संकर नर्सरी में अगस्त के आखिरी सप्ताह से अक्टूबर तक बोया जाता है। 200 ग्राम बीज प्रति एकड़ बोया जाता है । पौधें 35 से 45 दिन जमें तैयार हो जाता है तथा इससे 45 से 45 मी. की दूरी पर लगाया जाता है। बाकी कृषि क्रियाएं फूल गोभी के समान हैं इसकी कटाई में बहुत सावधानी रखें। इसकी मुलायम शाखाएं 6–8 सै.मी. तक फूलों के गुच्छों के साथ काटी जाती है। इसकी कटाई 40–45 दिन तक चलती रहती है।

1. **चायनीज कैबेज:–** इसको पत्तेदार सब्जियों की तरह साग बनाकर तथा सलाद के रूप में खाया जाता है। इसकी पत्तियों से कोई गन्द नहीं आती। इसलिए इसको अकेला बनाकर खाया जाता है। इसकी मुख्य किस्मों में चाइनी डोल, चायनीज सरसों व चिदिली मुख्य है। उपजाउ भुमि व जल निकास के उचित प्रबन्ध हो, उत्तम रहती है। इसकी पौध तैयार करने के बाद रोपाई की जाती है जो 45×45 से.मी. की दूरी पर करते हैं। 200 ग्राम बीज/एकड़ बोया जाता है। बुवाई के लगभग 90 दिन बाद फसल तैयार हो जाती है। पौधों की पत्तियों को काटकर बाजार में बेचा जाता है।

2. **ब्रुसलन स्प्राउडर**:– इसके गोल स्प्राउडर हरे एवं लाल रंग के तने के नीचे लगे होते है। इसको कच्चा या उबाल कर सब्जी के रूप में किया जाता है। इसको छोटी बंद गोभी के नाम से भी जाना जाता है। इसके खाने वाले भाग को ही स्प्राउडर कहते हैं जो 3 से 5 से.मी. व्यास के होते हैं। नर्सरी में बिजाई का उचित समय अक्टूबर है। बीज 50 से 100 ग्राम /एकड़ लगता है। इसकी कृषि क्रियाएं बन्द गोभी के समान होती है। इसकी उन्नत किस्मों में पेरिस मार्किट, टॉप स्कोर, हिल्स आईजियल व एक्सप्रैस अलीड्रुवाल है।

3. **सैलरी :–** यह एक सलाद की फसल है। इसके पत्तों व डंठल कच्चे तथा पका कर सूप में प्रयोग में आते है। उपजाउ जमीन इसकी बिजाई के लिए उपयुक्त रहती है। इसकी खुली जगह जहाँ पर उचित नमी और सूरज की रोशनी मिलती हो, उपयुक्त रही है। इसकी पौध तैयार करते हैं। सितम्बर से अक्तूबर का समय इसकी बिजाई के लिए उपयुक्त है । 40 से 50 ग्राम बीज/ एकड़ काफी रहता है। पौध तैयार होने पर 60×20 सै.मी. की दूरी पर रोपाई करे। रोपाई के पांच–छह माह बाद जब यह 30–40 से.मी. के पौधे हो जाएं तो कटाई कर लेते है।

4. **सलाद :–** (लैट्टूस) यह एक महत्वनपूर्ण और लोकप्रिय सलाद की फसल है जो गुणों से भरपूर पत्तेदार सब्जी है इसमें केल्शियम और लोहा काफी मात्रा में होता है तथा विटामिन भी अधिकता में पाया जाता है। अच्छी जल निकास वाली उपजाऊ जमीन इसके लिए उपयुक्त होती है। इसकी बुवाई सीधे खेत में की जाती है इसकी जड़ें ज्यादा गहरी नहीं होती हैं। इसके लिए खाद अधिक भाग में चहिए। खरपतवार नियंत्रण के लिए 3–4 निराई–गुडाई चाहती है। इसकी पत्ते वाली एवं हैड, दो तरह की किस्में होती हैं। पत्तों वाली किस्म से हैड किस्मों की उपज ज्यादा होती है। बाजार में भेजने से पहले इसकी कटाई–छटाई अच्छी तरह से कर लेनी चाहिए।

5. **पारस्ले**:– इसको अधिकतर सुगन्धित एवं सुशोभित करने के लिए व सलाद के रूप में प्रयोग किया जाता है। यह भोजन में प्याज की सुगन्ध को कम करता है। यह प्रोटीन, लोहा, विटामिन–ए तथा सी से भरपूर होती है। इसकी उन्नत किस्में क्लर्ड लीफ, फर्न लीड कलर्ड , डबल कलर्ड चैम्पियन आदि है। इसके बीजों को सितम्बर–अक्तूबर में पौध तैयार करके खेत में पौध की रोपाई 60×45 से.मी. की दूरी पर करें। बीज को बुवाई से पहले 24 घंटे पानी में भिगोकर रखे। खेत में रोपाई करने के 90 से 100 दिन बाद पत्तियां काटने योग्य हो जाती हैं।

6. **चेरी टोमेटो**: यह टमाटर से ज्यादा पोष्टिक होते हैं तथा फल गुच्छों में लगते हैं। यह टमाटर की तरह सभी पौष्टिक उत्पाद जैसे प्यूरी, पेस्ट, चटनी, कैचप, सलाद आदि बनाने के काम आते हैं। गृह–वाटिका में लगाने के लिए बिल्कुल उपयुक्त है। इसकी उन्नत किस्में चैरी वण्डर, चेरिटा, सनचेरी, स्वीट 100 आदि है। यह टमाटर की तरह नवम्बर–दिसम्बर तथा जुलाई में लगाते है। रोपाई के 90 दिन बाद चैरी टोमेटो पकने लगते हैं।

7. **लीक**:– यह एक बहुवर्षीय सब्जी है तथा प्याज कुल से संबंधित है। इसकी हरी पत्तियां तथा तनों को खाया जाता है। इसको हरी प्याज की तरह सलाद, सब्जी, सूप तथा मसाले के रूप में प्रयोग किया जाता है। बहुवर्षीय सब्जी होने के कारण यह हर तरह के मौसम को सहन कर लेती है तथा कई वर्ष तक पैदावार देती रहती है। इसकी उन्नत किस्मों में ब्रांड लंदन, लिंकन, कोंकर, लंदन फ्लेम आदि है। लीक की नर्सरी अक्टूबर तथा फरवरी–मार्च में तैयार करते हैं। 40–45 दिन में इसकी पौध तैयार हो जाती है। 4 कि.ग्रा. बीज /प्रति एकड़ पर्याप्त रहता है। तैयार पौध को 20×15 सें.मी. की दूरी पर खेत में लगाएं। लीक की कटाई तब करें जब इसकी मोटाई कम से कम 2 से.मी. हो जाए।

अनुपयुक्त भूमियों पर चारा उत्पादन की संभावनाएं

ब्रजेन्द्र सिहं मीणा[1], आनन्द प्रकाश रूहिल[1] एवं ब्रज किशोर मीणा[2]

[1]राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल, [2]गेंहू अनुसंधान निदेशालय, करनाल

हमारे देश में लगभग 329 मिलियन हेक्टेयर भू–भूभाग में मात्र 165 (54.70 प्रतिशत) मिलियन हेक्टर ही कृषि योग्य है। काफी भू–भाग बंजर, परती, लवणता, क्षारीयता, जलमग्नता, शुष्कता एवं वृक्ष आवरण आदि के कारण अनुपजाऊ तथा अनुपयुक्त है। भारतवर्ष में सूखे चारा (22 प्रतिशत) एवं हरा चारा (62 प्रतिशत) की भारी कमी है। पशुओं के लिये चारे का क्षेत्रफल बढ़ाने के लिये कृषि योग्य भूमि में पर्याप्त अवसर नहीं है हम ऐसी अनुपयुक्त भूमि को आधुनिक वैज्ञानिक तकनीकी प)तियों से चारोत्पादन कर गुणवत्तायुक्त पौष्टिक उत्तम चारा उपलब्ध करा सकते हैं। जहां जनसंख्या की दृष्टि से भारत का विश्व में दूसरा स्थान होने के बावजूद भी खाद्यान्न की दृष्टि से हम आत्म निर्भर हो गये हैं वहीं पशुओं हेतु पौष्टिक चारे की दृष्टि से पीछे हैं, जबकि विश्व के कुल पशुधन का लगभग 16 प्रतिशत संख्या भारत में है। पशुधन का हमारे देश की आर्थिक प्रगति में कृषि के बाद दूसरा महत्वपूर्ण स्थान है। आज पशुधन के चहुंमुखी विकास के लिये पौष्टिक चारे की उपलब्धता प्राथमिकता का विषय है। एक अच्छे दूध देने वाले पशु को 20–30 कि. ग्रा. हरा चारा और 5–6 किलोग्राम भूसा प्रतिदिन देना चाहिए।

जैसे दश में बढ़ती हुई जनसंख्या के अनुरूप खाद्यान्न की आवश्यकता बढ़ती जा रही है उसी प्रकार बढ़ती हुई पशु प्राणियों की संख्या के अनुपात में चारा फसल क्षेत्र में वृद्धि आवश्यक होगी। अतः हमें ऐसी बेकार किस्म की भूमि को उपयोग में लाना है। जिसमें हम चारा उत्पादन करके पशुधन का विकास कर सकते हैं।

खदानों से प्रभावित अनुपयोगी भूमि पर चारा उत्पादन :

इस तरह की भूमियों पर धबलू, केल, फुलकरा, भाभर, नेपियर इत्यादि घास, दलहनी चारा जैसे स्टाइलो, सिराट्रो तथा वृक्ष जैसे बबूल की प्रजातियां, सिरिस की प्रजातियां, नूतन, बांस, नीम, सूबबूल इत्यादि लगाकर चारा उत्पादन किया जा सकता है।

बीहड़ भूमि, मरूभूमि, जलभराव वाले भूमि तथा अन्य ऊसर भूमि पर चारा उत्पादन की सम्भावनाएं :

बीहड़ क्षेत्र के भूमि अत्यधिक कटाव के कारण कृषि हेतु अनुपयुक्त हो जाती है लेकिन इन भूमियों का दोहन चारा उत्पादन कर किया जा सकता है। लगभग 40 लाख है. बीहड़ भूमि मध्य प्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदश तथा गुजरात में उपलब्ध है। इन क्षेत्रों में घासें जैसे ब्लूपेनिक, अंजन, फुलकरा, केल, भाभर, दीनानाथ घास तथा दलहनी चारा जैसे सिराट्रो, रिन्कोसिया, तितली मटर, तपनी बेल, वनकुल्थी तथा स्टायलो हमाटा आदि लगाकर चारा उत्पादन बढ़ाई जा सकती है। इन क्षेत्रों में वृक्ष जैसे बबूल, नीम, बांस, सिरिस, नूतन, बेर, झरबेरी इत्यादि लगाना उपयुक्त है एवं इन पत्तियों से काफी हरा चारा प्राप्त होता है। इन क्षेत्रों में बकरी पालन अच्छा व्यवसाय सि) हो सकती है। इसी तरह पथरीली भूमि तथा लाल कंकडीली भूमि वाले क्षेत्र मध्य प्रदश, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश तथा उड़ीसा पाई जाती है जो खाद्यान्न उत्पादन हेतु अनुपयुक्त है परन्तु इनका विकास वृक्ष के साथ–साथ घास तथा दलहनी चारा लगाकर किया जा सकता है एवं पशु उत्पादन में वृद्धि प्राप्त की जा सकती है। वन चरागाह की स्थापना कारगर है। इन भूमियों में सेन, लम्पा, धबलू आदि घासें एवं स्टाइलो,वनकुल्थी, सिराट्रो आदि दलहनी चारे उपयुक्त होते हैं। इनके साथ काला सिरिस, सफेद सिरिस, अंजन, सुबबूल, रामकांटी तथा बांस लगाकर पूरे इस तरह से लगाये गये वन चरागाह से 5 टन शुष्क चारे (पत्ती सहित) प्रति हे. प्राप्त की जा सकती है। इन क्षेत्रों में चराई से भी पशुधन उत्पादन विशेषकर

लघु रोमन्थी पशु जैसे भेड़ तथा बकरी उत्पादन बढ़ाई जा सकती है। राजस्थान के अधिकांश हिस्से में एवं गुजरात तथा हरियाणा के कुछ भागों में मरूभूमि पाए जाते हैं जो खाद्यान्न पैदावार हेतु अनुपयुक्त होने के बावजूद चारा उत्पादन कर पशुधन विकास किया जा सकता है। इन भूमियों का विकास उपयुक्त बहुउद्देशीय पेड़ों जैसे खेजरी, इजरायली बबूल, सिरिस, अंजन, दशी बेर, नीम, विलायती बबूल के साथ घासें जैसे अंजन, सेवन, ब्लूपेनिक, धामन तथा दलहनी चारा जैसे सेवरा, तितली मटर, वनकुल्थी लगाकर पशुओं हेतु चारा प्राप्त किया जा सकता है। इन क्षेत्रों में अंजन घास, झरबेरी तथा ग्रेबिया लगाकर बकरी उत्पादन बढ़ाया जा सकता है। इसी प्रकार दश के दक्षिणी एवं पूर्वी भागों में दलदल तथा जलभराव वाले क्षेत्र पाये जाते हैं। इन अनुपयुक्त भूमि का विकास कुछ घासों की प्रजातियाँ जैसे पैराघास, बहिया, मछौरी, कैल, डेलिकस आदि एवं दलहनी चारा जैसे ग्लाइसीन के साथ चारा वृक्ष जैसे ग्लीरी सिडिया, सेलिकस आदि लगाकर चारा उत्पादन कर किया जा सकता है जिससे लगभग 20 से 40 टन प्रति हे. चारा प्राप्त किया जा सकता है।

वन चरागाह पद्धति :

अनुपयुक्त भूमि को वन चरागाह पद्धति के अंतर्गत लाकर चारा उत्पादन बढ़ाया जा सकता है। इस पद्धति में चारा वृक्षों के कतारों के बीच घास तथा दलहनी चारा जैसे स्टाइलो लगाकर अधिक पौष्टिक चारा प्राप्त किया जा सकता है। साथ ही ऐसे क्षेत्रों में पशुपालन को बढ़ावा देने के लिये निम्न तथा मध्यम श्रेणी की भूमियों पर चारा फसल उगाकर बड़े रोमन्थी पशु जैसे गाय–भैंस की जगह छोटे रोमन्थी पशु जैसे भेड़–बकरी पालन अधिक लाभप्रद रहेगा। पेड़ों से प्राप्त पत्तियां हरा चारे की आपूर्ति करती है एवं पशुओं हेतु कमी के दिनों के लिये पौष्टिक हरा चारा है।

वन चरागाह का विकास भेड़ तथा बकरी पालकों लिये रामबाण है क्योंकि थोड़ी मेहनत कर पशुपालक बेकार भूमि को वन चरागाह में परिवर्तित कर पशुधन उत्पादन बढ़ा सकते है। एक अनुमान के अनुसार वन चरागाह पद्धति से चारे के रूप में प्रतिवर्ष 12 हजार रूपये प्रति हेक्टर का शुद्ध लाभ अर्जित किया जा सकता है। सुबबूल, अरडू के पत्तों तथा स्टाइलो में प्रोटीन की मात्रा 20 प्रतिशत के लगभग पाई जाती है। इनमें खनिज लवण तथा विटामिन ए (कैरोटीन) भी प्रचुर मात्रा में पाई जाती है जो मांस उत्पादन एवं दुग्ध उत्पादन में लाभकारी है।

कृषि वानिकी पद्धति द्वारा अनुपयोगी भूमि का चारा उत्पादन हेतु उपयोग :

वर्तमान समय की मांग के अनुसार कृषि वानिकी पद्धति एक ऐसी टिकाऊ पद्धति है जिसे अपनाकर अनुपयुक्त पड़ी भूमि का उपयोग में लाकर चारा उत्पादन के साथ साथ लकड़ी एवं फल का उत्पादन कर सकते हैं। सिल्वीपाश्चर विधि से भी वर्षभर हरा चारा पशुओं हेतु प्राप्त होता रहता है। सुबबूल, सिरस, बबूल इत्यादि लगाकर नाइट्रोजन का स्थिरीकरण कर भूमि के उत्पादकता बढ़कर उन्नत चारा पैदा करने की अवसर प्राप्त होती है। बकरियों हेतु बेर व अन्य झाड़ियां लगाकर वृक्षों के सानिध्य में घासों का सफलता पूर्वक पैदावार की जा सकती है। आंवला के साथ स्टायलो लगाकर सम्पूरक चराई पशुओं द्वारा की जा सकती है जिससे पशुभार में वृद्धि सम्भव है। चारा–उद्यान पद्धति से आंवला, बेर, करौंदा, खेजड़ी व नीबू जातीय पेड़ों की खेती के साथ चारा फसलें लगाकर पशुओं हेतु अतिरिक्त चारा प्राप्त की जा सकती है।

अनुपयोगी भूमि में झाड़ियों का बकरी उत्पादन हेतु महत्व :

कृषि हेतु अयोग्य भूमि पशुओं की चराई के लिये परम्परागत संसाधन है। विभिन्न प्रकार की पर्यावरणीय तथा भौगोलिक परिस्थितियों के प्रति सहनशीलता के कारण झाड़ियों का विस्तार ऐसे भूमि पर व्यापक है। झाड़ियां बकरियों के मांस उत्पादन हेतु उत्तम चारे का श्रोत है। जीजीफस नुम्मूलारिया (बेर), काप्पारिस डेसीडुआ (केर), फलेकोरशिया

इंडिका, हेलोजीलान सेबीकार्निकम (लारवा) सुएडा फुटिकोसा, सालसोला वेरयोसमा, इण्डिकोफेरा ओबलोंजी फोलिया आदि मुख्य झाड़ियां हैं जिन्हें बकरी चाव से खाती है। इनमें विषैले पदार्थ जैसे टेनिन इत्यादि भी बहुत ज्यादा नहीं है जिससे पशुओं के स्वास्थ्य प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता। राजस्थान, मध्य प्रदेश, बुन्देलखंड के कई क्षेत्रों में यह पशुधन के चारे का महत्वपूर्ण श्रोत है। बकरी के साथ–साथ ऊंट भी मुख्यतः ब्राउजर है एवं झाड़ियों को चाव से खाते हैं।

उत्तम पशुधन उत्पादन हेतु स्टाइलो :

अनुपयुक्त भूमि हेतु यह दलहन चारे की प्रजाति बहुत महत्वपूर्ण है। इसे बंजर, परती भूमि, शुष्क तथा अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में लगाया जा सकता है। इससे चरागाहों की उत्पादन क्षमता के साथ–साथ गुणवत्ता भी बढ़ती है। इसका पशुधन उत्पादन पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता हे। पशु इसे चाव से खाते हैं एवं दुग्ध उत्पादन पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। यह अनुपयुक्त भूमि में कार्बनिक पदार्थ बढ़ाने के साथ साथ नत्रजन की भी मात्रा बढ़ाती है। चराई हेतु यह उत्तम चारा है। इसे पुष्पावस्था में काटकर हे अथवा स्टाइलो मील बनाकर गाय एवं भैसों को दाने की जगह कुछ हद तक (50 प्रतिशत) खिलाई जा सकती है। इसमें लाइसिन, सिसटिन एवं मिथियोनिन अमीनो अम्ल अधिक मात्रा में पाई जाती है जिससे पशु उत्पादन के साथ–साथ दुग्ध उत्पादन में वृद्धि होती है। यह अनुपयुक्त भूमि हेतु रामवाण है।

किसानों से अपील :

प्रचार–प्रसार एवं आवश्यक रोचक जानकारी के लिये संस्थान की पत्रिका एक सशक्त माध्यम है। किसान बन्धुओं से अपील है कि कृषि में दक्ष होना आपका नैतिक दायित्व है। खेतों की जुताई से लेकर बुवाई, खाद, पानी, संरक्षण, कटाई, मढ़ाई, प्रसंस्करण एवं भंडारण तक की गहनतम जानकारी आधुनिक संयत्रों, उपकरणों का प्रयोग, उच्चस्थ अंकुरण क्षमता, अनुवांशिक शुद्धतायुक्त बीजों का प्रयोग आदि की सूक्ष्मतम एवं गहनतम जानकारी होना ही एक शिक्षित किसान की पहिचान है।

कहावत है कि प्यासा–कुंएं के पास, रोगी–डाक्टर के पास, जिज्ञासु–विद्वान के पास जाता है और अपनी इच्छाओं की तृप्ति करता है ठीक उसी प्रकार किसान को संबंधित वैज्ञानिकों, संस्थानों विभागों, संस्थाओं में जाकर किसान गोष्ठी, किसान मेलों में सम्मिलित होकर संबंधित कृषि साहित्यों, विशिष्ट जानकारों से वृहद उत्पादन क्षमता की आधुनिक जानकारियों से लाभ उठाकर अपनी एवं अपने देश की उन्नति में सहायक बनने का संकल्प एवं असंभव को संभव कर दिखाने की प्रतिज्ञा का उचित समय यही है।

हे! किसान बन्धुओं, जागो, उठो और चल पड़ों इस विशिष्ट लक्ष्य की प्राप्ति हेतु मंजिल की ओर सफलता आपके कदम चूमने के लिये आ रही है, आपकी ओर। क्योंकि अब हो गया है भोर।

❋ ❋ ❋ ❋ ❋

आराधना अपनी संस्कृति का, अभिनन्दन अपनी भाषा का।
जब रत्नाकर अपने बीच बहे, औरों के बीच बहें हम क्यों।
हम इतने निर्धन वाणी के नहीं,जो औरों के ऋणी रहें।

संपादक

कृषि उत्पादन में जैव-उर्वरकों की महत्ता एवं उपयोग

उत्तम कुमार एवं ए.एस.हरीका
राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

स्वतंत्रता के 63 वर्षो के बाद भारत एक नये युग में प्रवेश कर चुका है बीते वर्षो में हम कृषि के क्षेत्र में की गई प्रगति पर एक निगाह डालते है तो इसमें हुई प्रगति हमें बहुत ही उत्साहित एवं रोमांचित करती है। मसलन हरित क्रांति के कारण हम प्रारंभिक 50 के दशक से खाद्यान्न में 5 करोड़ टन से बढकर 23 करोड़ टन के पास आ गए है। तात्पर्य यह है कि 2.5 प्रतिशत वार्षिक की दर से उत्पादन बढ़ा है। तिलहन के खेत्र में पीली क्रांति लाकर पिछले दो दशको में उत्पादन दोगुना कर लिया गया है। दूध के क्षेत्र में श्वेत क्रांति के कारण दुग्ध उत्पादन में विश्व में हम पहले स्थान पर पहुँच गए है, नीली क्रांति के कारण मछली उत्पादन बढ़ा है। इसके निर्यात से देश को लगभग एक मिलियन डालर की विदेशी मुद्रा प्राप्त हो रही है।

निःसन्देह हमनें कृषि के विभिन्न क्षेत्रों में आत्मनिर्भरता प्राप्त कर ली है परन्तु अब इससे भी महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या कृषि क्षेत्र में हमारी ये उपलब्धियां आने वाले वर्षो में भी बनी रहेगी? क्या हमारी खेती पर्यावरण एवं परिस्थितिकी को हानि पहुंचाए बिना भविष्य में बढ़ती हुई जनसंख्या को पोषित करने में भी सक्षम होगी? अगर हम खाद्यान्नों के क्षेत्र में आत्म निर्भरता की बात करते है तो इसके मूल में उन्नत किस्म के बीज, उर्वरक, समय पर सिंचाई एवं प्रबन्धन तथा पौध संरक्षण का महत्वपूर्ण योगदान पाते है रासायनिक उर्वरकों ने हमें आत्मनिर्भरता बनाने में एक महत्वपूर्ण एवं प्रभावशाली भूमिका अदा की है लेकिन जब हम भूमि परीक्षण प्रयोगशालाओं से आ रहे परिणामों को देखते है तो ज्ञात होता है कि निरन्तर असन्तुलित रसायनिक उर्वरकों के प्रयोग से भूमि में जीवांश पदार्थ की मात्रा लगातार घटती जा रही है साथ ही साथ भूमि में खारेपन की मात्रा भी बढती जा रही है तथा भूमि एवं जल की गुणवत्ता पर बुरा असर पड़ रहा है। जिसके कारण मृदा स्वास्थ्य में लगातार ह्रास हो रहा है कृषि मंत्रालय ने भूमि की विकृतता के कारण होने वाली हानि को 30–50 मिलियन टन खाद्यान्न उत्पादन के बराबर आंका है। फसलों द्वारा भूमि से लिए जाने वाले मुख्य पोषक तत्वों नत्रजन, फास्फोरस व पोटाश में नत्रजन की गतिशीलता अधिक होने के कारण इसका सर्वाधिक अवशोषण होता है, तथा इसी की सबसे ज्यादा आवश्यकता भी होती है, सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि भूमि में प्रयोग किए गये नत्रजन का केवल 40–50 प्रतिशत ही फसल उपयोग करती है तथा शेष 50–60 प्रतिशत अप्राप्य रह जाता है। इसके अलावा फास्फोरस में प्राप्तता तो केवल एक तिहाई है और दो तिहाई अप्राप्त हो जाने के कारण पौधे प्राप्त नहीं कर पाते है, जेसा कि हम सब जानते हे कि किसान भाई नत्रजन ओर फास्फोरस की आपूर्ति रासायनिक उर्वरकों से करते हैं, जो कि बहुत कीमती है और उचित मात्रा में प्रयोग कर पाना छोटे और मध्यम किसानों की क्षमता से बाहर है। अतः वर्तमान परिस्थितियों में नत्रजन एवं फास्फोरस धारी उर्वरको के साथ–साथ वैकल्पिक स्रोतों का उपयोग न केवल आर्थिक दृष्टि से उपयोगी है बल्कि उर्वरा शक्ति को बनाये रखने के लिए भी आवश्यक है ऐसी

स्थिति में सस्ते एवं कम लागत वाले जैव उर्वरको तथा सान्द्रिय पदार्थों के एकीकृत उपयोग की नत्रजन उर्वरको के रूप में करने की सिफारिस की गई है।

जैव उर्वरक या जीवाणु खाद क्या है?

सभी प्रकार के पौधों की वृद्धि के लिए मुख्यतः 16 तत्वों की आवश्यकता होती है जिनमें नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश अति आवश्यक तथा प्रमुख पोषक तत्व हैं। ये पौधों में तीन प्रकार से प्राप्त होते है–

अ.) रासायनिक खाद द्वारा।

ब.) गोबर की खाद/कम्पोस्ट द्वारा।

स.) नाइट्रोजन स्थिरीकरण एवं फास्फोरस घुलनशील जीवाणुओं द्वारा।

भूमि केवल एक भौतिक माध्यम नहीं है बल्कि यह एक जीवित क्रियाशील तंत्र है। इसमे सूक्ष्मजीवी बैक्टिरिया, फफूंदी, शैवाल, प्रोटोजोआ आदि पाये जाते है इनमें से कुछ सूक्ष्मजीव वायुमण्डल में स्वतंत्र रूप से पायी जाने वाली 78 प्रतिशत नत्रजन (जिन्हें पौधे सीधे प्रयोग करने में अक्षम होते हैं) को अमोनिया एवं नाइट्रेट तथा फास्फोरस को उपलब्ध अवस्था में बदल देते हैं। जैव उर्वरक इन्हीं सूक्ष्म जीवों का पीट, लिग्नाइट या कोयले के चूर्ण में मिश्रण है जो पौधों को नत्रजन एवं फास्फोरस आदि की उपलब्धता बढ़ाता है। जैव उर्वरक पौधें के लिए वृद्धि कारक पदार्थ भी देते हैं ,पादप रोगों की रोकथाम करते है तथा पर्यावरण को स्वच्छ रखने में सहायक हैं। भूमि ,जल एवं वायु को प्रदूशित किये बिना कृषि उत्पादन बढानें में सहायक सिद्ध होते है इन्हें जैव कल्वर ,जीवाणु खाद ,टीका अथवा इनाकुलेन्ट भी कहते हैं।

जीवाणु खाद या जैव उर्वरक निम्न प्रकार के उपलब्ध है

- ★ राइजोबियम कल्चर
- ★ एजोटोबेक्टर कल्चर
- ★ एजोस्पाइरिलम कल्चर
- ★ एसिटोबेक्टर
- ★ नील हरित शैवाल (बी. जी. ए.)
- ★ फास्फेटिका कल्चर
- ★ एजोला फर्न
- ★ माइकोराइजा

1. राइजोबियम कल्चर

यह एक नम चारकोल एवं जीवाणु का मिश्रण है, जिसके प्रत्येक एक ग्राम भाग में 10 करोड़ से अधिक राइजोबियम जीवाणु होते हैं। यह खाद केवल दालीय (दलहनी) फसलों में ही प्रयोग किया जा सकता है। दलहनीं फसलों में अलग–अलग फसल के लिए अलग–अलग प्रकार का राइजोबियम जीवाणु खाद का प्रयोग होता है। राइजोबियम जीवाणु खाद से बीज उपचार करने पर ये जीवाणु खाद से बीज पर चिपक जाते हैं। बीज अंकुरण पर ये जीवाणु जड़ की मूलरोम द्वारा पौधों की जड़ों में प्रवेश कर जड़ों पर ग्रन्थियों का निमार्ण करते हैं। ये ग्रन्थियां नत्रजन स्थिरीकरण इकाइयां हैं तथा पौधों बढ़वार इनकी संख्या पर निर्भर करती है। पौधे की जड़ में ग्रन्थियां अधिक होने पर पैदावार भी अधिक होती है।

फसल विशेष पर प्रयोग की जाने वाली राइजोबियम खाद

अलग–अलग फसलों के लिए राइजोबियम जीवाणु खाद के अलग–अलग पैकेट उपलब्ध होते हैं तथा निम्न फसलों में प्रयोग किये जाते हैं–

- दलहनीं फसलें: मूंग, उर्द, अरहर, चना, मटर, मसूर इत्यादि ।
- तिलहनी फसलें: मूंगफली, सोयाबीन ।
- अन्य फसलें: रिजका, बरसीम, ग्वार आदि ।

प्रयोग विधि

200 ग्राम राइजोबियम कल्चर से 10–12 किलोग्राम बीज उपचारित कर सकते है। एक पैकेट को खोले तथा 200 ग्राम राइजोबियम कल्चर लगभग 300–400 मि. लीटर पानी में डालकर अच्छी प्रकार घोल बना लें। बीजों को एक साफ सतह पर एकत्रित कर जीवाणु खाद को बीजों पर धीरे–धीर डालें ,और बीजों को हाथ से उलटते पलटते जाए जब तक की सभी बीजो पर जीवाणु खाद की समान परत न बन जाये। इस प्रक्रिया में यह ध्यान रखें कि बीजों पर लेप करते समय बीज के छिलके का नुकसान न होने पाये। उपचारित बीजों को साफ कागज या बोरी पर फैलाकर छाया में 10–15 मिनट सुखाये और उसके बाद तुरन्त बोयें।

राइजोबियम जीवाणु के प्रयोग से लाभ

- इसके प्रयोग से 10–20 कि.ग्रा. रासायनिक नत्रजन की बचत प्रति हैक्टर होती है।
- इसके प्रयोग से फसल की उपज में 20–25 प्रतिशत की वृद्धि होती है।
- राइजोबियम जीवाणु हारमोन्स एवं विटामिन भी बनाते हैं जिससे पौधों की बढ़वार अच्छी होती है और जड़ों का विकास भी अच्छा होता है।
- इन फसलों के बाद बोई जाने फसलों में भी भूमि की उर्वरता तथा स्वास्थ्य सुधरने से अच्छी पैदावार प्राप्त होती है।

2. एजोटोबेक्टर कल्चर

यह जीवाणु खाद पौधों के जड़ क्षेत्र में स्वतन्त्र रूप से रहने वाले जीवाणुओं का एक नम चूर्ण रूप उत्पाद है जो वायुमण्डल की नत्रजन का स्थिरीकरण कर पौधों को उपलब्ध कराते हैं। जिसके एक ग्राम भाग में लगीाग 10 करोड़ जीवाणु होते हैं। यह जीवाणु खाद दलहनी फसलों को छोड़कर सभी धान्य फसलों पर प्रयोग में लायी जा सकती हैं।

3. एजोस्पाइरिलम

यह जीवाणु खाद भी मृदा में पौधों के जड़ क्षेत्र में स्वतन्त्र रूप से रहने वाले जीवाणुओं का एक नम चूर्ण रूप उत्पाद है जो वायुमण्डल की नत्रजन का स्थिरीकरण कर पौधों को उपलब्ध कराते हैं। यह जीवाणु खाद खरीफ के मौसम में धान, मोटे अनाज तथा गन्ने की फसल हेतू विशष उपयोगी हैं।

एजोटोबेक्टर/एजोस्पाइरिलम जीवाणु खाद से लाभ

- फसलों की 10–20 प्रतिशत तक पैदावार में वृद्धि होती है तथा फलों एवं दानों का प्राकृतिक स्वाद बना रहता है
- इसके प्रयोग करने से 20–30 कि.ग्रा. नत्रजन की बचत प्रति हैक्टर की जा सकती है।

- ★ एजोटोबेक्टर खाद कुछ वृद्धि कारक हारमोन्स (जैसे–जिब्रेलिक एसिड) तथा विटामिन्स (जैसे–बी) का उत्सर्जन करते हैं जिससे पौधें के विकास में सहायता मिलती है।
- ★ इसके प्रयोग करने से अंकुरण शीघ्र और स्वस्थ होता है तथा जड़ों का विकास अधिक एवं शीघ्र होता है।
- ★ फसलें भूमि से फास्फोरस का अधिक उपयोग कर लेती है जिससे कल्ले अधिक बनते है।
- ★ इन जैव उर्वरको के जीवाणु एन्टीबायोटिक पदार्थो का भी निर्माण करते है जिससे पौधे की रोग प्रतिरोधी क्षमता बढ़ती है तथा फसल का बीमारियों से बचाव होता है।
- ★ ऐसे जैव उर्वरकों का प्रयोग करने से जड़ों एवं तनों का अधिक विकास होता है जिससे पौधे में तेज हवा, अधिक वर्षा एवं सूखे की स्थिति सहन करने की क्षमता बढ़ जाती है।

4.एसिटोबेक्टर :

यह जीवाणु खाद मुख्य रूप से गन्ने की फसल ही में प्रयोग की जाती है।

5.नील हरित शैवाल खाद

एक कोशिकीय सूक्ष्म नील हरित शैवाल नम मिट्टी तथा स्थिर पानी में स्वतन्त्र रूप से रहते हैं। धान के खेत का वातावरण के लिए सर्वथा उपयुक्त होता है। इसकी वृद्धि के लिए आवश्यक तापमान, प्रकाश, नमी एवं पोषक तत्वों की आवश्यक मात्रा धान के खेत में विद्यमान रहती है।

प्रयोग विधि :

धान की रोपाई के 3–4 दिन बाद स्थिर पानी में 12.5 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से सूखे जैव उर्वरक का प्रयोग करें। इसे प्रयोग करने के पश्चात 4–5 दिन तक खेत में पानी लगातार भरा रहने दें। इसका प्रयोग कम से कम तीन वर्ष तक लगातार खेत में करें इसके बाद इसे पुनः डालने की जरूरत नहीं होती हैं। यदि धान में किसी खरपतवारनाशी का प्रयोग किया गया है तो इसका प्रयोग खरपतवारनाशी के 3–4 दिन बाद करें।

नील हरित शैवाल जैव उर्वरक के लाभ

- ★ इसके प्रयोग से 30 कि.ग्रा. नत्रजन/है० प्राप्त होती है।
- ★ इसके प्रयोग से धान के उत्पादन में 15–20 प्रतिशत वृद्धि होती है।
- ★ इसके प्रयोग से वृद्धि नियंत्रक, विटामिन बी–12 अमीनों अम्ल भी श्रावित करते है जिससे पौधें में अच्छी वृद्धि के साथ–साथ दानों की गुणवत्ता भी बढ़ती है।

6. फास्फेटिका कल्चर :

फास्फेटिका जीवाणु खाद भी स्वतन्त्र जीवी जीवाणुओं का एक नम चूर्ण रूप में उत्पाद है। नत्रजन के बाद दूसरा महत्वपूर्ण पोषक तत्व फास्फोरस ही है जिसे पौधे सर्वाधिक उपयोग में लाते है फास्फेटिक उर्वरकों का लगभग एक तिहाई भाग ही पौधे अपने उपयोग में ला पाते है। शेष अघुलनशील अवस्था में ही जमीन में पड़ा रह जाता है जिसे पौधे स्वयं घुलनशील नहीं बना पातें। जब हम यह जीवाणु युक्त खाद प्रयोग करते है तो मृदा में उपस्थित अघुलनशील फास्फोरस को जीवाणुओं द्वारा घुलनशील अवस्था में बदल दिया जाता हैं। तथा इसका प्रयोग सभी फसलों में किया जा सकता है।

साधारणतयः यह आवश्यक नहीं कि मृदा में उपस्थित सभी जीवाणु सक्षम एवं असरकारक हों। अतः कल्चर के माध्यम से किसानों को असरकारक जीवित पदार्थ या जीवाणु उपलब्ध कराये जाते हैं।

फास्फेटिका खाद से लाभ :

- ★ फास्फेटिका जीवाणु खाद के प्रयोग से की 10–20 प्रतिशत तक पैदावार में वृद्धि होती है।
- ★ इसके प्रयोग करने से 25–30 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से फास्फेट की बचत की जा सकती है।
- ★ जडों का विकास अधिक होता है, जिससे पौधा स्वस्थ बना रहता है।

7. एजोला फर्न :

यह ठण्डें मौसम में स्थिर पानी के ऊपर तैरते हुए पाया जाता है जो दूर से देखने में हरे या लाल रंग की चटाईनुमा लगता है। इसकी पत्तियां बहुत छोटी तथा मोटी होती हैं। इन पत्तियों के नीचे छिद्रो में सहजीवी साइनो–बैक्टीरिया ॕएनावीना एजोलीॠ पाया जाता है, जो नत्रजन स्थिरीकरण में सहायक है। यह जलमग्न धान के खेतों में बुवाई के एक सप्ताह बाद 10 कुन्तल प्रति हे. की दर से उगाया जा सकता है जो लगभग दो कि.ग्रा. नत्रजन प्रति दिन की दर से स्थिर कर सकता है। इसका प्रयोग कम्पोस्ट बनाने में अथवा 10 की दर से हरी खाद के रूप में भूमि में मिलाकर किया जा सकता है। इसके प्रयोग से धान की फसल में खरपतवार कम पनपते हैं तथा नत्रजन के प्रयोग में 40–80 किलोग्राम तक की बचत की जा सकती है।

8. माइकोराइजा :

इसमें फफूंदी का पौधें की जड़ो से सहजीवन होता है, जिसमें फफूंदी अपनी जड़ों से पोषक तत्वों को अवशोषित करती है और पौधों को इन तत्वो को तुरन्त उपलब्ध कराती है कवक इसके बदले भोजन पौधे से लेता है। यह दो प्रकार का होता है :–

अ.) एक्टोमाइकोराइजा   ब.) इन्डोमाइकोराइजा

माइकोराइजा से लाभ :

- ★ इसके प्रयोग से नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश तथा कैल्शियम की उपलब्धता बढती है।
- ★ इसके प्रयोग से वृद्धि वर्धक (साइटोकाइनिन) हार्मोन्स भी पौधों को उपलब्ध होता है।

जैव उर्वरको के प्रयोग में सावधानियां :

- ★ जीवाणु खाद को धूप व गर्मी से दूर सूखे एवं ठण्डे़ स्थान पर रखें।
- ★ जीवाणु खाद या इससे उपचारित बीजों को किसी भी रसायन या रसायनिक खाद के साथ न मिलायें।
- ★ राइजोबियम फसल विशेष होता है अतः पैकेट पर अंकित फसल में ही प्रयोग करें।
- ★ यदि बीजों पर फफूंदी नाशी बेविस्टीन आदि का प्रयोग करना हो तो बीजों को पहले फफूंदी नाशी से उपचारित करें तथा फिर जीवाणु खाद की दुगनी मात्रा से उपचारित करें।
- ★ जैव उर्वरको का प्रयोग पैकेट पर लिखी अन्तिम तिथि से पहले ही करना चाहिए।

❋ ❋ ❋ ❋ ❋

पशु सुधार में जैव-प्रौद्योगिकी के अनुप्रयोग

राजेश वाकचौरे एवं मंगेश वैद्य

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

जैव प्रौद्योगिकी का व्यापक अर्थ जीवित वस्तुओं से है जैव प्रौद्योगिकी द्वारा दूध, पोल्ट्री और मत्स्य, स्वच्छ पर्यावरण बड़ी संख्या में चिकित्सा उद्योग और कृषि क्षेत्र में उत्पादों में सुधार करने में मदद करती है। जैव प्रौद्योगिकी से समाज में विशेषकर भारत के ग्रामीण क्षेत्रों के लिए आसान रोजगार सृजन और कम लागत से स्वास्थ्य और समग्र खुशी के सतत विकास के लिए पर्यावरण तैयार करने में मदद मिली है। जैव प्रौद्योगिकी से कृत्रिम गर्भाधान, ट्रांसजेनिक जानवर, भ्रूण हस्तांतरण, कम तापमान में वीर्य और भ्रूण संवर्धन, क्लोनिंग ओर बेहतर जानवरों के चयन में तीव्रता और सटीकता का सामर्थ्य प्राप्त हुआ है।

कृत्रिम गर्भाधान

कृत्रिम गर्भाधान डेरी फार्म पर पशुओं के आनुवंशिक सुधार के लिए एक नियमित और सबसे महत्वपूर्ण तकनीक है। यह तकनीक कई कारणों से इस्तेमाल की जा सकती है, जैसे उपयोग होने वाले सांड के आनुवंशिक सामग्री में दुरी या समय भिन्नता के लिए, शारीरिक चोट के दौरान प्रजनन कठिनाइयों को दूर करने के लिए, सब सांडों के डेरी फार्म पर रखने की आवश्यकता से बचने के लिए और आनुवंशिक सुधार के लिए सबसे अच्छे सांड का उपयोग करने के लिए किया जाता है। कृत्रिम गर्भाधान विश्व स्तर पर जमे हुए वीर्य को निर्यात करने का विकल्प भी देता है। कृत्रिम गर्भाधान के द्वारा यौन संपर्क से होने वाले कई संभावित विनाशकारी रोगों पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

ट्रांसजेनिक पशु

ट्रांसजेनिक पशु वे पशु है जिनके जीनोम में विदेशी जीन डाला जाता है। विदेशी जीन पुनः संयोजक डीएनए पद्धति का उपयोग कर निर्मित किया जाता है। ट्रांसजेनिक प्रौद्योगिकियों का प्रयोग फार्म पर पशुओं में दूध और मांस का उत्पादन बढ़ाने के लिए मानव चिकित्सा उपयोग के लिए प्रोटीन का उत्पादन के लिए किया जाता है इसके अलावा जानवरों से मनुष्य में अंग–प्रत्यारोपण प्रक्रियाओं में किया जाता है।

क्लोनिंग

जीव विज्ञान में क्लोनिंग आनुवंशिक रूप से समान व्यक्तियों की अलैंगिक प्रजनन की प्राकृतिक उत्पादन प्रक्रिया हैं। स्कॉटलैंड के रोसीलिनन संस्थान के डा० विल्मट द्वारा 5 जुलाई, 1996 में डॉली भेड़ का व्यस्क कोशिका से क्लोन किया गया था और उसकी मौत वर्ष 2003 में हुई थीं। क्लोनिंग लुप्त होने जा रही प्रजातियों के संरक्षण, कृषि और औषधि उत्पादन, जैव चिकित्सा अनुसंधान तथा मानव रोगों के उपचार के लिए एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया हैं।

एक पुनः संयोजनक डीएनए अणु

एक पुनः संयोजनक डीएनए अणु 2 या अधिक भिन्न डीएनए अणु के खंडों से निर्मित होता है। एक पुनः संयोजक डीएनए अणु सूखे और गर्मी के प्रतिरोध के रूप में, इंसुलिन के उत्पादन में हेपेटाइटिस बी, सिकल सेल एनीमिया ओर सिस्टिक फाइब्रोसिस के इलाज में उपयोगी होता है।

भ्रूण स्थानांनतरण

भ्रूण स्थानांनतरण वह तकनीक है, जिनके द्वारा भ्रूण एक दाता से एकत्र कर प्राप्तकर्ता में स्थानांतरित किया जाता है। भ्रूण स्थानांनतरण तकनीक घरेलू जानवरों की लगभग सभी प्रजातियों और विदेशी जानवरों की कई प्रजातियों के

लिए प्रयोग की गयी है। भ्रूण स्थानांनतरण तकनीक भेड़ और गो–प्रजनन में आनुवंशिक सुधार के लिए नए अवसर प्रदान करती है। जबकि यह तकनीक अभी भी महंगी है इसका इस्तेमाल मुख्य रूप से वाणिज्यिक उत्पादन के बजाय नस्ल सुधार के लिए किया जाएगा। भ्रूण स्थानान्तरण के माध्यम से जानवरों में अधिक प्रजनन दर, गहन और अधिक सटीक चयन, पीढ़ी में कम अंतराल और इन सभी के साथ आनुवंशिक परिवर्तन की दर में तेजी लाने में सफलता मिली है।

कम तापमान में संवर्धन

कम तापमान में संवर्धन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें कोशिकाओं या ऊतकों को पूरे–196 डिग्री सेल्सियस (तरल नाइट्रोजन के उबलते बिंदु) जैसेः कम तापमान में संरक्षित करते हैं। कम तापमान पर जैविक गतिविधि जिसमें जैव रासायनिक प्रतिक्रियाएं जैसेः कोशिकाओं या ऊतकों की मौत प्रभावी रूप से बंद हो जाती है। संवर्धन का सबसे आम उपयोग शुक्राणु, भ्रूण, अंड़े और डीएनए को संरक्षित करने में किया जाता है। भ्रूण संवर्धन, तकनीक आनुवंशिक सुधार कार्यक्रम का एक अभिन्न हिस्सा है और जर्मप्लाज्म संरक्षण कार्यक्रमों में महत्वपूर्ण है।

भ्रूण विभाजन

भ्रूण विभाजन लाभकारी तकनीक है जिसमें एक भ्रूण को अनेक हिस्सों में बांटा जाता है। एक भ्रूण से दो– चार या कभी–कभी सोलह भ्रूण भी मिल सकते हैं। भ्रूण बंटवारे का उद्देश्य प्रदाता से एक से अधिक संख्या में संतान प्राप्ति करना है।

❁ ❁ ❁ ❁ ❁

डॉली भेड़ और क्लोनिंग

जैव–प्रौद्योगिकी के सहारे फसलों की संकर किस्में तैयार करने के बाद वैज्ञानिकों ने जीवों का क्लोन या प्रतिकृति बनाने का जो क्रांतिकारी सपना देखा, वह 5 जुलाई,1996 के दिन साकार हुआ था। इसी दिन वैज्ञानिकों ने पहले स्तनधारी के रूप में मादा भेड़ डॉली बनाने में सफलता प्राप्त की। डॉली को तैयार करने का श्रेय अंग्रेज जीव वैज्ञानिक इयान विल्मट, कैथ कैंपबेल और उनकी टीम को जाता है। चूंकि यह प्रक्रिया न्यूक्लियर ट्रांसफर के तहत पूरी की गई थी, हालांकि डॉली का देहान्त 14 फरवरी, 2003 को ही हो गया, पर एक स्वस्थ क्लोन के रूप में भेड़ के निर्माण ने इस तथ्य को भी मजबूती दी कि किसी अंग विशेष की कोशिकाओं का न्यूक्लियर ट्रांसफर कर एक पूरी संरचना तैयार की जा सकती है। असल में, न्यूक्लियर ट्रांसफर ऐसी ही तकनीक है, जिसमें एक कोशिका के नाभिक की दूसरी कोशिका के नाभिक से अदला–बदली कर एक नई कोशिका बनाई जाती है, जो स्वभावतः अपनी मातृ कोशिकाओं से बिल्कुल अलग होती है। इस तकनीक का अविष्कार 1975 में गर्डन नाम वैज्ञानिक ने किया था। वहीं, क्लोनिंग एक ऐसी जैविक प्रक्रिया है, जिसमें किसी क्लोन को तैयार करने के लिए तीन तरीके अपनाए जाते है–1 अणु संबंधी क्लोनिंग 2 कोशिका संबंधी क्लोनिंग 3 स्टेम सेल क्लोनिंग। आज सबसे ज्यादा स्टेम सेल क्लोनिंग को तवज्जो दी जा रही है। बहरहाल क्लोनिंग को लेकर वैज्ञानिकों में भी एक राय नहीं है, विशेषकर मानव क्लोनिंग के प्रति ईश्वर के कार्यो में हस्तक्षेप जैसे नैतिक पक्ष छोड भी दिए जाए, तो इसके दुरूपयोग की आंशका प्रबल है। तर्क यह भी है कि क्लोनिंग से तैयार जानवर बीमार पैदा हुए है और कभी–कभी क्लोन के बड़े आकार से गर्भाशय के फटने का भी खतरा होता हैं क्लोन का गर्भ खुद खत्म होना भी एक जटिल समस्या है।

संपादक

गरमाती धरती: पृथ्वी पर मंडराता संकट

हरी बाबू, शोध–छात्र एवं रश्मि कान्त

एन. सी. कालेज ऑफ इंजीनियरिंग एण्ड टैक्नोलॉजी इसराना, पानीपत

धरती की उम्र का पता विभिन्न तरीकों से चट्टानों की डेटिंग (कितनी पुरानी यह पता लगाना) के जरिए लगाया जाता है। दुनिया में अब तक सबसे पुरानी चट्टान 1999 में कनाड़ा के उत्तर पश्चिम क्षेत्र में अकास्टा नदी के आसपास वाले इलाके में मिली है। इस चट्टान का नाम है, अकास्टा नाइस। इसकी उम्र करीब 400 करोड़ साल आंकी गई है। साथ ही भू–वैज्ञानिकों का मानना है कि इस चट्टान को आकार लेने में करीब 50 से 60 करोड़ साल तो लगे ही होंगें। इसीलिए पृथ्वी की उम्र 460 करोड़ साल के आसपास मानी जाती है।

पृथ्वी की सतह के तापमान में निरंतर वृद्धि हो रही है और जलवायु में परिवर्तन भी आशा के विपरीत तेजी से हो रहे हैं। यह परिवर्तन संसार के परिस्थितिक तंत्र पर मंडराते एक संकट की ओर समूचे विश्व का ध्यान आकर्षित करता है। इसे हम 'ग्लोबल वार्मिंग' या गरमाती धरती कहते हैं। 'ग्लोबल वार्मिंग' का अर्थ है– पृथ्वी के तापमान में ग्रीन हाउस गैसों का बढ़ता प्रभाव, जिससे पृथ्वी का वातावरण दिन पर दिन गरमाता जा रहा है। ग्लोबल वार्मिंग की समस्या समझने से पूर्व हमें ग्रीन हाउस प्रभाव के बारे में जानने की नितांत आवश्यकता है। 'ग्रीन आउस प्रभाव' से तात्पर्य है– पृथ्वी के वायुमंडल में कुछ विशेष गैसों की मात्रा का इस सीमा तक बढ़ जाना कि पृथ्वी की ऊष्मा बाहर न निकल सके। इन गैसों में प्रमुख हैं, कार्बन डाई ऑक्साइड, जलवाष्प, मीथेन, नाइट्रस आक्साइड और क्लोरोफ्लोरो कार्बन।

गरमाती धरती (ग्लोबल वार्मिंग)

दस बड़ी चुनौतियां

- ★ **जनसंख्या बोझ:**– दुनिया की आबादी अभी 6.91 अरब है। वर्ष 2050 तक यह 9.15 अरब हो जाएगी। संयुक्त राष्ट्र के आर्थिक और सामाजिक मामलों के विभाग के अनुसार यही रफ्तार रही तो अगले 40 साल में 10 में से सिर्फ एक को ही भरपेट भोजन मिल पाएगा।
- ★ **तपती धरती:** ग्लोबल वार्मिंग से धरती का तापमान 1880 के बाद करीब एक डिग्री बढ़ चुका है। इसकी बड़ी वजह है, कार्बन उत्सर्जन। वातावरण में कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा नवबंर 1958 में 313.34 पाट्र्स/मिलियन थी। यह 2009 में करीब 20 फीसदी बढ़कर 387.41 पाट्र्स/मिलियन हो गई।
- ★ **पिघलते ग्लेशियर:** धरती का तापमान बढ़ने से ग्लेशियर तेजी से पिघल रहे है। आर्कटिक ध्रुव पर अभी सिर्फ 27 ग्लेशियर ही बचे है। जबकि 1990 में 150 थे। इस वजह से इस सदी के अंत तक समुद्र के पानी का स्तर 7 से 23 इंच बढ़ जाएगा। कई तटीय क्षेत्र डूब जाएगें।

- **जल संकट:** यू. एन. स्टेटमेंट ऑन वाटर क्राइसिस के मुताबिक दुनिया में आज करीब एक अरब लोगें को साफ पीने लायक पानी नहीं मिलता। वर्ष 2050 तक दुनिया में करीब तीन अरब लोग बिन पानी या कम पानी में गुजारा कर रहे होगें। वर्ष 2025 तक भारत के करीब 60 फीसदी भूजल स्त्रोत पूरी तरह सूख चुके होंगें।
- **घटते जंगल:** अर्थ ऑब्जरवेटरी नासा के मुताबिक वर्तमान में हर साल करीब 3.5 करोड़ एकड़ जंगलों की कटाई होती है। जंगल कटने से फल, फाइबर, कागज, तेल, मोम, रंग, औषधि आदि की कीमतें बढ़ रही है। इससे भारत को हर साल करीब 4 लाख करोड़ का नुकसान होता है।
- **जमीन बंजर:** ओंटरियो इंस्टीट्यूट ऑफ पेडोलॉजी के अनुसार मिट्टी की ऊपरी परत हर साल 25 अरब टन कम हो रही है। यही जमीन को उपजाऊ बनाती है। इसमें 13 महत्वपूर्ण पोषक तत्व होते है, जो पानी में मिलने के बाद पेड़–पौधों और फसल विकसित करते हैं। इसके नष्ट होने पर जमीन बंजर।
- **रेगिस्तान:** यूनाइटेड नेशन एन्वायरमेंट प्रोग्राम के अनुसार दुनिया में हर साल करीब 32 हजार किलोमीटर जमीन रेगिस्तान में तबदील हो जाती है। इस वक्त करीब 20 फीसदी जमीन रेगिस्तान की शक्ल अख्तियार कर चुकी है।
- **खत्म संसाधन:** धरती के नीचे तेल, गैस, कोयला जैसे संसाधन लगातार खत्म हो रहे है। दुनिया में अभी हर साल करीब 8.1 करोड़ बैरल तेल का उत्पादन होता है। वर्ष 2030 तक इसके घटकर करीब 3.9 करोड़ बैरल सालाना रह जाने की आशंका है।
- **प्रदूषण:** वर्ष 1950 में दुनिया भर में प्लास्टिक का प्रयोग 50 लाख टन होता था जो आज करीब 10 करोड़ टन है। चौपहिया वाहन प्रदूषण का बड़ा कारण है। वर्ष 1950 में दुनिया में 50 लोगों पर एक कार होती थी। यह आकंड़ा वर्तमान में 12 लोगों पर एक कार का हो चुका है।
- **स्वास्थ्य संकट:** धरती पर इस वक्त विभिन्न जीव–जन्तुओं की करीब एक करोड़ प्रजातियां है। इनमें से अगले 20 साल में आधी ही बचेंगी। इनके स्थान पर बदलते मौसम, बढ़ते तापमान, प्रदूषण आदि से कुछ अज्ञात जीव–जन्तु पैदा हो सकते है। ये मानव स्वास्थ्य के लिए बड़ा संकट होगीं।

बिगड़ते पर्यावरण के खतरे

- भारत दुनिया के उन मुल्कों में से है, जहां ग्लोबल वर्मिंग का सबसे ज्यादा असर पड़ेगा। इससे देश की आधी आबादी यानि करीब 50 करोड़ लोगों को पेयजल, भोजन, आवास व स्वास्थ्य की समस्याओं से जूझना होगा।
- भारत में गंगोत्री ग्लेशियर अगले 20 से 30 वर्षो में खत्म होने की आशंका मूल स्थान से 23 मीटर पीछे हटा।
- भारत, चीन व नेपाल की सात नदियों पर संकट। पहले इन नदियों का जलस्तर बढ़ेगा फिर तेजी से घटेगा।
- 2050 तक देश में प्रति व्यक्ति 30 फीसदी पानी की कमी होगी, यानी प्रति व्यक्ति 1000 क्यूसेक पानी ही मिलेगा। वर्तमान में प्रतिव्यक्ति 1,140 क्यूबेक पानी उपलब्ध है।
- 2035 तक उत्तर भारत में गेहॅू की पैदावार में 30 फीसदी की कमी होगी।
- आधा सेल्सियस तापमान बढ़ने पर गेहॅू की 17 फीसदी पैदावार कम होगी।

- ★ समुद्री जलस्तर सालाना 3.14 मिमी. की दर से बढ़ रहा है। इससे सुंदरवन के 102 द्वीपों में से 12 द्व ीपों पर संकट।
- ★ 2020 तक इसका 15 फीसदी हिस्सा पानी में समा जाने की आशंका।
- ★ ऐतिहासिक महत्व वाला घोड़ामारा द्वीप का एक तिहाई हिस्सा पानी में समा चुका है।
- ★ 2100 तक जलस्तर 40 सें.मी. तक बढ़ने की आंशका।
- ★ एक मीटर बढ़ने पर नीदरलैंड के 06, मिस्त्र का 01, बांग्लादेश का 17 फीसदी व मार्शल आईलैंड का 80 फीसदी हिस्सा पानी में समा जाएगा।
- ★ कई क्षेत्रों में हिमखंड प्रतिवर्ष 10 से 15 मीटर पीछे हट रहे है।
- ★ 50 वर्षो में अंटार्कटिका प्रायद्वीप की 13000 वर्ग कि.मी. बर्फ पिघली।
- ★ संक्रामक रोगों का प्रकोप बढ़ेगा खासकर डेंगू व मलेरिया।

तापमान–वृद्धि यानी तबाही

- ★ इस सदी के तापमान पांच से छह डिग्री तक बढ़ने का अनुमान जबकि दो डिग्री की बढ़ोत्तरी भी दुनिया में तबाही ला सकती है।
- ★ एक डिग्री सेल्सियस की वृद्धि से वनस्पतियों की कई प्रजातियों को खतरा।
- ★ दो डिग्री बढ़ोत्त्तरी का असर फसलों की पैदावार पर, रूस व यूरोप पर अधिक प्रभाव।
- ★ जानवरों व पौधों की 12 हजार प्रजातियों के खत्म होने की आशंका।
- ★ 28 अरब लोग पानी की किल्लत झेलेंगे।
- ★ तीन से पांच डिग्री सेल्सियस बढ़ने पर दुनिया की कुल आबादी का 45 से 60 फीसदी हिस्सा मलेरिया व अन्य संक्रामक बीमारियों की चपेट में होगा।
- ★ 1990 के बाद वैश्विक तापमान में 1.5 डिग्री सेल्सियस की बढ़ोत्तरी।

❁ ❁ ❁ ❁ ❁

समुद्री जीवों की गणना:– वैज्ञानिकों ने दुनिया के सभी समुद्रों के भीतर रहे जीवों की दस साल से चल रही गणना पूरी कर ली है। वैज्ञानिक मानते है कि इससे यह पता चल पाएगा कि किस तरह से इंसानों की हरकतों से समुद्र के भीतर रह रहे जीवों की जिंदगी प्रभावित होती है। इनमें से कुछ जीव तो ऐसे हैं जिनके बारे में अब तक किसी को पता भी नहीं था। समुद्री जीवों की इस गणना को दुनिया में अपनी तरह का पहला शोध माना जा रहा है। इस जनगणना की मुख्य (स्टीयरिंग) समिति के अध्यक्ष आयन पॉयनर ने कहा है कि, ''जमीन पर रहने वाले हर प्राणी की जिन्दगी समुद्र के भीतर रहने वाले जीवों पर आश्रित है। ''समुद्री जीवों से हमारी जरूरत का आधा ऑक्सीजन मिलता है, हमारी आवश्यकता का ढेर सारा खाना भी वहीं से आता है और व पर्यावरण को भी संचालित करते है।'' वर्ष 2000 में शुरू हुए इस शोध में 65 करोड़ डालर खर्च हुए है। इस अंतरराष्ट्रीय परियोजना में दुनिया के 80 दशों की 670 संस्थाओं के 2,700 शोधकर्ता (रिसर्च स्कालर) शामिल हैं। इन्होंने गणना पूरी करने के लिए 9,000 दिन समुद्र के भीतर गुजारे हैं। गणना पूरी करने के लिए शोधकर्ता को तीन सवालों के जवाब देने थे। **समुद्र में क्या रहता था, समुद्र में क्या रहता है और समुद्र में क्या रह सकता है**। पूरे एक दशक तक समुद्री जीवों की गणना करने वाले वैज्ञानिकों को कहना है कि इतना समय इस काम में लगा देने के बावजूद वह आश्वस्त होकर नहीं कह सकते कि हर समुद्री जीव की गिनती हो ही गई है। हालांकि समुद्री जीवों की गणना संबंधी मौजूदा कार्यक्रम अभी पूरा हो गया है लेकिन इससे जुड़े लोगों को कहना है कि अब कई सारी चुनौतियां पैदा हो गई है।

संपादक

दुधारू पशुओं के ब्यांत के महत्वपूर्ण दिनों पर परिचर्चा समीक्षा प्रगतिशील पशुपालक के अनुभवों पर आधारित

महाबीर सिंह रोड़
गांव/पोस्ट ढाढरथ, जीन्द (हरियाणा)

किसान के पास तीन प्रकार का धन होता है। 1. फसल धन 2. पशुधन 3. वृक्षधन जिन्हें अपनाकर किसान अपना जीवन निर्वाह करता है। किसान का पशुधन ही आय का मुख्य स्त्रोत माना जाता है। जिससे वह प्रतीदिन पैसा कमा सकता है।

हमारे देश के अलग–अलग इलाकों के वातावरण व अन्य परिस्थितियों के अनुसार दुधारू पशुओं में गायों व भैंसों की विभिन्न नस्लें पाई जाती है जो कि अपनी विशेष गुणों में दूध क्षमता में प्रसिद्धि प्राप्त है। सो दुधारू पशु के दूध में वृद्धि पशु के वंशावली गुणों आहार व्यवहार व उचित प्रबन्धन पर निर्भर होती है। जिन्हें अपना कर पशुपालक अधिक व स्वच्छ दुध उत्पादन द्वारा अधिक लाभ कमा सकते है।

दुधारू पशु का ब्यांत कुल 305 दिन का माना जाता है इसमें पहले 5 दिन खीस के होते है जो कि नवजात शिशु व दुधारू पशुओं को ही पिलाया जाता है जो कि पौष्टिकता से भरपूर व रोग रोधी होता है बाकी 300 दिन दूध के होते है। दुधारू पशु प्रत्येक वर्ष में एक ब्यांत जिसे हरियाणवी भाषा में वर्ष मोड़ (एक बर्ष के अन्दर ब्याना) कहते है और दो ब्यांतों में 13 से 14 महीनों का अन्तर होना चाहिए इन दो मुदों पर भी दूध के व्यवसाय की लाभ व हानि निर्भर करती है।

ब्याने से 45 से 60 दिन पहले व ब्याने के 60 दिन बाद इन दिनों में दुधारू पशु के शरीर में विभिन्न क्रियाएं होती है जैसे किः–।

1. ब्याने की तैयारी।
2. ब्याने के बाद क्षमतानुसार दूध पैदा करना।
3. जल्दी गाभिन कराने की तैयारी।

कम से कम 30 दिन ब्याने से पहले गाय–भैंस का दूध सुखा देना चाहिए जिससे शिशु के जन्म तथा उसके बाद में दूध देने के लिए उसकी शरीर यन्त्रण का काम तेजी से जारी रहे । इसके लिए प्रोटीन, ऊर्जा, खनिज इत्यादि पोषक तत्वों को शरीर में संचय किया जाता है। आखरी दिनों में बच्चा दानी में गर्भ में रहे शिशु के वजन में बहुत तेजी से वृद्धि होती है इसलिए भी दुधारू पशु को पोषक तत्वों के अतिरिक्त आहार की जरूरत होती है।

आमतौर पर देखा गया कि किसान या पशुपालक भाई जब पशु दूध नहीं देता है तो वह पशु की खुराक/आहार पर बहुत कम ध्यान देता है जिसके परिणाम स्वरूप पशुओं में निम्नलिखित कठिनाइयां आ जाती है।

- ब्याने में तकलीफ
- जेर अटकना
- मिल्क फीवर (बुखार)
- कम वजन का बछड़ा
- अपेक्षा से कम दूध
- दूध में उतार चढ़ाव
- ऋतु चक्र में गड़बड़ी

दोबारा गाभिन होने के लिए ब्याने से पहले 45 से 60 दिनों में पशु को संतुलित व खनिज मिश्रण आहार जरूर खिलायें।

ब्याने के तुरन्त बाद पशु को 1/2–1 किलो गुड़ व गेहूं का दलिया दें जेर गिरने में मदद होगी व पशु के शरीर में ताकत आयेगी।

ब्याने के बाद के दिनों में जिस हिसाब से दूध बढ़ता है यह पशु के शरीर में संचित चर्बी पर निर्भर करता है ऐसे में ब्याने से पहले का वांडी स्कोर तथा बाद का स्कोर बहुत महत्वपूर्ण होता है जब छाती की तीन से ज्यादा पसलिया दिखने लगती है तब 10% तक दूध घटता है, साथ ही साथ ऋतुकाल (हीट) भी टलता है दुधारू पशु जब अधिकतम दूध दे रही होती है उन दिनों उसे प्रोटीन से भरपूर आहार देना चाहिए।

इस तरह ब्यांत के पहले 45 दिन व बाद के 60 दिन पशुपालन व्यवसाय के लाभ–नुकसान को तय करते है और इन दिनों में पशुपालक को अपने पशु पर विशेष ध्यान देकर कारोबार को अधिक लाभकारी बनाने की हर सम्भव कोशिश करनी चाहिए।

नवजात शिशुओं की देखभाल

आज की बछड़ी बछड़ा कल की होने वाली गाय भैंस है जन्म से ही उसकी सही देखभाल रखने से भविष्य मे वह अच्छी गाय भैंस बन सकती है अगर शिशु का वजन लगातार तेजी से बढ़ता है तो वे सही समय पर गाय भैंस बन जाती है पशुपालक को एक गाय भैंस से ज्यादा ब्यांत एवं ज्यादा दूध मिलने से अधिक लाभ होता है।

ब्याने के बाद नवजात शिशु की देखभाल कैसे करें?

- ★ जन्म के बाद बच्चे की नाक मुंह साफ करें।
- ★ नाल को चार अंगुली नीचे छोटा धागा बांध कर साफ सुथरी कैंची या ब्लेड से काटें। बाद में नाल को आयोडीन के कप में अच्छी तरह से डुबो लें।
- ★ बछड़े को माँ के सामने रखें माँ के लगातार चाटने से बच्चे के शरीर मे खून दौड़ने लगता है।
- ★ जन्म के बाद 1/2 से दो एक घंटे के अन्दर नवजात बच्चे को खीस जरूर पिला देना चाहिए और दुधारू पशु की जेर गिरने की इंतजार न करें उपरोक्त समय अवधि पर पिलाया हुआ खीस नवजात शिशु को भविष्य में कई खतरनाक रोगों से बचाने की ताकत देता है। बच्चे के वजन के 10% खीस/दिन पिलाना चाहिए यानि 20 किलो भार के बछड़े को 2 किलो खीस प्रतिदिन पिलायें।

नवजात बच्चे को दूध पिलाना व रोगो से बचाव

बच्चे को माँ के ऑचल (चुगाकर) से दूध पिलाना चाहिए इस प्रकार से दुधारू पशु के थन सख्त नहीं होते नर्म रहते है औार थनों का आकार लम्बाई की तरफ बढ़ता है।

- ★ दूध पीने के बाद बच्चे का मुंह गीले कपड़े से साफ कर लें।
- ★ उम्र के 1½ से 2 मास के बाद दिन में एक ही बार दूध पिलायें बच्चे को धीरे-धीरे गेहूॅ के चोकर, दलिया, पीसा हुआ मक्का आदि खाने की आदत डालें छोटे बच्चों के लिए खास तौर पर बनाया गया ''काफ स्टार्टर'' खिलाना शुरू करें।
- ★ उम्र के दो माह बाद प्रत्येक बच्चे को प्रतिदिन 10 से 15 ग्राम मिनरल मिक्सचर जरूर खिलायें।

- एक सप्ताह के होने पर पेट के कीड़े मारने की दवा देना बहुत जरूरी है फिर यह दवा 21 दिनों के बाद दो बार दे।
- आयु के तीन महीने के बाद ''मूंह पका खुर पका'' नामक बीमारी की रोकथाम के लिए टीका जरूर लगवाये जरूरत होने पर 10 दिन बाद ''गल घोटू'' बीमारी का भी टीका लगाना चाहिए।
- समय समय पर चिचड़ों की रोकथाम के लिए दवाई का प्रयोग करें

दुधारू पशु के गोबर की जाँच

एक साधारण गाय/भैंस एक दिन–रात में 12 से 18 बार गोबर करती है जिससे 20 से 40 कि0ग्राम गोबर मिलता है केवल गोबर का निरीक्षण करके आप पशु के पेट में चली रही/बदहजमी तथा उसके आहार के असंतुलन का लाना चाहूंगा पता कर सकते है आपके संज्ञान में लाना चाहूंगा कि ईजारयल देश में वहां का पशु पालक आपने दुधारू पशुओं की शरीर के अन्दर की प्रक्रिया को जांच कर समयानुसार पशुओं को सन्तुलित आहार देकर दूध में वृद्धि करता है।

गोबर कैसा है:–	पशु के आहार व स्वास्थ्य में कमी
गहरे रंग का पतला गोबर	**पशु आहार में जरूरत से ज्यादा से ज्यादा प्रोटीन होना या रेशों की कमी होना।**
हल्के रंग का पतला गोबर	**पशु के अफारा होने से आता है।**
सख्त गोबर	**नमक की कमी/पानी कम पीना/पशु आहार में प्रोटीन की कमी या रेशों की मात्रा ज्यादा होना।**
गोबर में अनाज के दाने	**पाचन क्रिया कमजोर होना।**

दुधारू पशु में जेर अटकना

सामान्य रूप से बयाने के बाद 2 से 8 घंटों में जेर अपने आप गिर जाती है किसी कारण से जेर के अटकने से बच्चे दानी पर बुरा असर होता है दुधारू पशु का दूध उसकी क्षमता की अपेक्षा घट जाता है। उसका गर्मी में आना (हीट) चक्र बिगड़ता है बच्चा दानी में गड़बड़ी होने के कारण दुबारा गाभिन होने/रहने में तकलीफ होती हैं

जेर क्यों अटकती है?

- सेहत की कमजोरी:– कमजोर दुधारू पशु की सारी ताकत बच्चे को बच्चेदानी में से बाहर निकालने में खर्च हो जाती है। बाद में ऐसा पशु जेर को बाहर फैंकने में असमर्थ होता है
- शारीर में मिनरल्स (खनिजों) की कमी:– कैल्शियम, फास्फोरस, सेलेनियम, कांपर, आयोडीन और अबेंको मिनरल्स (खनिज) की शरीर में कमी होना भी जेर अटकने का एक मुख्य करण बन सकता हैं

जेर न अटके इसके लिए क्या करें?

- ब्याने से 60 दिन पहले गाय–भैंस को प्रतिदिन 2 से 3 किलो ग्राम सन्तुलित पशु आहार प्रति दिन दें जिससे पशु की सेहत अच्छी रहेगी।
- मिनरल्स की कमी को पूरा करने के लिए अच्छी कम्पनी का मिनरल मिक्सचर 40–50 ग्राम प्रति दिन जरूर दें।
- ब्याने के तुरंत बाद गाय भैंस को गुड़ खिलाएं।
- ब्याने के बाद बच्चे को एक दो घंटे के अन्दर खीस पिला देना चाहिए पशु के जेर गिरने का इन्तजार न करें। इससे बच्चे व उसकी मां दोनों के लिए नुकसानदायक हो सकता है। जितना जितना जल्दी बच्चे को खींस

पिलाओगे जेर जल्दी गिरेगी पशु पालकों की धारणा है कि जेर गिरने के बाद बच्चे को खीस पिलाये यह धारणा गलत है ऐसा न करें।

जेर अटकने पर क्या उपाय करें।

- ★ पशु ब्याने के 12 घन्टे तक पशु ने जेर नही डाली है तो पशुचिकित्सक को मिलें।
- ★ ब्याने के 36 से 48 घन्टे में बच्चादानी का मुंह बन्द होने के पहले उसमें डाक्टर की सहायता से नली द्वारा एन्टीबायोटिक दवाई बचादानी में डालें।
- ★ अटकी हुई जेर को चप्पल, पत्थर इत्यादि से बांध कर खींचने का प्रयास न करें।
- ★ अनुभवी डा० से सलाह लेकर कम से कम 5 दिन दवाईयां दीजिए।

दुधारू पशु के लिये थनैला रोग की जानकारी :–

दूध का कारोबार करने वाले पशु पालकों के लिए थनैला रोग एक चुनौती से कम नही है। जिसका समय रहते उपचार करना अति जरूरी हैं।

थनैला क्यों होता है?

दूध दुहने की गलत विधि अपनाने से और पशुशाला में गंदगी से थनैला होता परन्तु इसका स्थाई इलाज नही है परन्तु संक्रामण को कम किया जा सकता है।

सुप्त थनैला :– छिपा दुश्मनः– थनैला रोग के लक्षण बाहर नही दिखते जिस थन में यह रोग होता है उसमें से कम दूध निकलता है व दूध मे खून आने लगता है

थनैला का प्रतिबंधन :– आदर्श पशु प्रबंधन विधियों जैसे कि आहार, आवास सफाई व बढ़िया साफ सुथरा वातावरण में पशु को रखे और दुध निकालने की ठीक विधि (पूरी मुट्ठी) से दूध निकाले के बाद थन का छेद आधे से चार घंटे तक खुला रहता है। खुले छेद के द्वारा रोग आसानी से अन्दर दाखिल होकर इस रोग का कारण बनते है। रोग के जिवाणुओं का प्रवेश रोकने के लिए हमेशा दूध निकालने के बाद चारों थनों को लाल दवाई वाले पानी में डुबोना न भूले व पशु को 15 से 30 मिनट तक बैठने न दें। साफ सुथरा पानी पिलाये, अच्छी गुणवत्ता वाला सन्तुलित आहार दे साथ में मिनरल मिक्सचर (खनिज मिश्रण) का सही मात्रा में प्रयोग करें, थनैला रोग के लक्षण दिखते ही तत्काल पशु चिकित्सक से सम्पर्क करें अन्यथा किसी भी प्रकार की लापरवाही बहुत ही हानिकारक साबित हो सकती है।

❋ ❋ ❋ ❋ ❋

राजभाषा आलेख/कविताएँ

हिन्दी हमारी आत्मा एवम् संस्कृति है

आर. स्वामीनाथन

भारतीय भाषा प्रतिष्ठान राष्ट्रीय परिषद्, राजेश्वरी नगर, माईलादुरायी, तमिलनाडू

देश के सबसे बड़े भू–भाग में बोली जाने वाली राष्ट्रभाषा 'हिन्दी' के कारण ही भारत विश्व में अपनी महानता बनाये हुए है। इसमें भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता की वह सुगन्ध समायी हुई है, जिसके आकर्षण में सम्पूर्ण विश्व सुख–शान्ति का अनुभव करता है।

पश्चिमी देशों में ऐसे अनेक साहित्यकार हुए है, जिन्होंने वहाँ निष्ठापूर्वक अध्ययन, मनन, चिन्तन किया है। भारत की प्राचीन विशाल सांस्कृतिक परम्परा की ज्योति ने ही उन्हें सार्वभौमिक मूल्यों की और जाग्रत किया है। अनेक विदेशी विद्वानों ने भारतीय ग्रन्थों का अपनी भाषा में अनुवाद कर भारत की अमूल्य सांस्कृतिक, साहित्यिक धरोहर को विश्व के समक्ष रखा है तथा पाठ्यक्रम में स्थान दिलाया है। उन्नीसवीं सदी के प्रमुख प्राच्य विद्याविद् भाषाविद् साहित्यकार 'फैडरिक सॉलेमन ग्राउस' का नाम उल्लेख उल्लेखनीय है, जिन्होंने' रामचरित मानस' का अंग्रेजी में अनुवाद किया एवं वर्तमान में ''डॉ. केथरिन हैनसन'' केनेडियन महिला ने हिन्दी साहित्य से सम्बन्धित पुस्तकें लिखी है एवं हिन्दी/उर्दू मे पी.एच.डी. तथा भारतीय संगीत में भी महारत प्राप्त की है।

हमारे वेद–पुराण, उपनिषद, रामायण, महाभारत, गीता आदि ऐसे समृद्ध ग्रन्थ हैं, जो सत्य और ईश्वर का, आत्मा से परमात्मा का साक्षात्कार कराते हैं, मानवता का आभास कराकर मानव को मानव बनाने में सहायक सिद्ध होते है, जिससे यदि किसी राहगीर को कॉंटा भी चुभ जाए तो संवेदना अश्रु बनकर छलक पड़ती है। राम का आदर्श, कृष्ण की वात्सल्यता, नानक का उपदेश एवं तुलसी, सूर, कबीर,रसखान आदि के छन्दों में मानव सद्भावना, साम्प्रदायिक एकता का संदेश समाया हुआ है, जो स्वर्गानुभूति भी कराते हैं एवं ब्रम्हानन्द सहोदर की भी प्राप्ति होती है तथा मन 'मानव' धर्म' की ओर अग्रसर होता है।

हिन्दी एक व्यापक भाषा है, जो सम्पूर्ण भारत का प्रतिनिधित्व करती है, जिसमें सम्पूर्ण भारत एक साथ बोलता है। इसके एक–एक शब्द के उच्चारण में हमारी आत्मा, हमारी संस्कृति समाई हुई है। भारतीय संस्कृति को जीवित रखने के महान् उद्देश्य को दृष्टिगत रखते हुए मनीषियों ने हिन्दी को प्रतिनिधि भाषा घोषित करनें में भारत का और अपना गौरव समझा है। यह निर्विवाद सत्य भी है कि जिस दिन 'हिन्दी' व्यावहारिक रूप में प्रतिनिधि भाषा का रूप धारण कर लेगी और 'अंग्रेजी' का मोह भंग हो जायेगा, उस दिन हमारा 'एकता' का मोह भंग हो जायेगा, उस दिन हमारा 'एकता' का कार्य अनायास ही सिद्ध हो जायेगा। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने हिन्दी के महत्व को प्रतिपादित करते हुए कहा है कि: 'हिन्दी के द्वारा ही सारे देश को एक सूत्र में पिरोया जा सकता हैं। इसी प्रकार डॉ. जाकिर हुसैन ने हिन्दी को 'देश की एकता की कड़ी' कहा है।

हिन्दी सहज, सरल एवं सम्पूर्ण भाषा है, पर्याप्त शब्द कोष है।इसमें हमारी संवेदनाओं को अभिव्यक्त करने का सामर्थ्य तथा लयबद्धता है, भरपूर–साहित्य है, जिसके संवाद अपना एक विशिष्ट स्थान रखते हैं। हिन्दी ने अपनी मौलिकता एवं सुबोधता के बल पर ही राष्ट्र की सभ्यता, संस्कृति और साहित्य को जीवन्त बनाए रखा है तथा सम्पूर्ण राष्ट्र को एक सूत्र में बंधा महसूस कराते रहती है एवं अनेकता में एकता के दर्शन कराती है।

हिन्दी बोलने वाले भारत में ही नहीं वरन् सीमा पार अन्य देशों में भी बहुसंख्यक रूप में हैं, जैसे मॉरीशस एवं नेपाल ऐसे देश हैं, जहाँ हिन्दी भाषी हर गली, चौराहे एवं घर, गाँव, नगर में मिल जायेंगे।

हमारी विश्व प्रसिद्व 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना से ओत–प्रोत संस्कृति, सभ्यता एवं भाषा के प्रति विदेशों में ऐसा प्रेम उद्वेलित है कि वहाँ के विश्वविद्यालयों में हजारों छात्र–छात्राएं हिन्दी माध्यम से विश्वविद्यालयों में विद्याध्ययन कर रहे हैं तथा भारतीय साहित्य का गूढ़ अध्ययन, मनन, चिन्तन कर रहे हैं। इसी से भारत को 'मनुष्य जाति का पालना' कहा जाता है, क्योंकि मानव संस्कृति का जन्म भारत में ही गंगा के कछार में हुआ है तथा मनुष्य के ज्ञान की प्रथम–ज्योति यहीं से प्रज्ज्वलित हुई है। स्वामी विवेकानन्द, रामकृष्ण परमहंस, दयानन्द सरस्वती, महात्मा गाँधी, आचार्य विनोबा भावे आदि महान विभूतियों ने भारतीय दर्शन, शास्त्र एवं अध्यात्म की रोशनी विश्व को दिखायी है, जिससे भारत एवं भारतीयों की आत्मा, हिन्दी के प्रति आकर्षित हुई है एवं प्रेम बढ़ा है। अहिन्दी भाषी लोग भी हिन्दी सीख रहे हैं। पूर्व राष्ट्रपति डॉ. शंकरदयाल शर्मा ने अपने उद्‌बोधन में एक बार कहा था कि–'राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी के महत्व की अनदेखी नहीं की जानी चाहिए। यदि इसमें कुछ अड़चने हैं, तो उन्हें दूर करने के प्रयास किये जाने चाहिए।' परन्तु खेद है कि भारत के शिक्षित, सम्भ्रान्त, समृद्ध बुद्धिजीवी लोग अपनी ही मातृभाषा की उपेक्षा कर रहे हैं एवं अंग्रेजी के मोहजाल में ऐसे दीवाने है कि उपने बच्चों को अंग्रेजी माध्यम से ही शिक्षा दिलाने में अपना सौभाग्य समझते हैं तथा बच्चे की तोतली बोली में 'मम्म', 'डैड' शब्द सुनकर फूले नहीं समाते हैं। हिन्दी माध्यम से पढ़ने वाले बच्चों के परिवार को हीन भावना से देखा जाता है। शासनतन्त्र में भी उच्च पदों पर वे ही आसीन होते है, जिन्हें अंग्रेजी धड़ल्ले से बोलना, लिखना, पढ़ना आता है।

अतः आइए। हम सभी अपनी मातृभाषा, राष्ट्रभाषा हिन्दी को पूर्णतः अपनाकर राष्ट्र का गौरव बढ़ायें। व्यर्थ के अहम और आडम्बर को दूर भगाएं, अंग्रजी का चश्मा उतार फेंके। सच्चे सपूत की भाँति ईमानदारी से भारत भूमि का कर्ज चुकाए, जिसे आने वाली पीढ़ी स्मरण रख सके एवं गर्व से कह सके कि हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है, जिसमें विश्वबन्धुत्व की भावना कूट–कूटकर भरी है और इसका गौरवशाली इतिहास रहा है। हमारी एक ही भाषा 'हिन्दी' और एक ही धर्म है। हमारे पास प्रचुर संसाधन हैं तथा मानव संसाधन की दृष्टि से भी भारत अग्रणी है। अतः आर्थिक एवं प्रौद्योगिकी प्रतिस्पर्धा के इस दौर में राष्ट्रभाषा की भूमिका महत्वपूर्ण है। जनभाषाओं का राजभाषा के साथ भगिनी–सा तालमेल, सहयोग होना चाहिए। वास्तव में जो भी अक्षमता परिलक्षित होती है, वह भाषा की नहीं, बल्कि उसके प्रयोग करने वालों की मानसिकता की है। भाषाविद्, विद्वान, लेखक, कवि इस सम्बन्ध में अहम भूमिका अदा कर सकते हैं तथा राजनेता लोकतांत्रिक व्यवस्था के अन्तर्गत राजभाषा को लोगों के करीब लाकर जनभाषा का रूप देने में भागीरथ प्रयास कर सकते हैं, क्योंकि मातृभाषा के ज्ञान के बिना उन्नति के शिखर की और प्रशस्त होना दिवास्वप्न के समान है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने भी कहा है: 'निजभाषा ज्ञान बिन, रहे हीन के हीन।'

❊ ❊ ❊ ❊ ❊

हिन्दी हमारे देश की राष्ट्रभाषा है, इसलिए सरकारी काम–काज हम सबको गौरव के साथ करना चाहिए।

डा. बाबासाहब अम्बेडकर

राष्ट्रीय ध्वज की विकास गाथा

आर. एस. गौतम

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

15 अगस्त, 1947 को हमारा देश स्वाधीन हुआ। हमारे वर्तमान राष्ट्रीय ध्वज को आजादी मिलने से महज एक महीने पहले, 22 जुलाई ,1947 का संविधान सभा ने स्वीकृत किया था। बहुत लोगों को यह नहीं पता कि राष्ट्रीय ध्वज की विकास यात्राा 1857 के संग्राम से शुरू हुई थी।

हमारे राष्ट्रीय ध्वज तिरंगे का इतिहास तथा वंशावली अत्यंत पुरानी और घटनापूर्ण है। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान सबसे पहले आजादी का झंडा बहादुरशाह ज़फ़र ने सन् 1857 में उठाया था। शहंशाह ने आजादी के उस झंडे पर कमल का एक फूल और चपाती को चिह्न के रूप में अपनाया था। इस झंडे के चारों ओर एक सुनहरी झालर लगी थी।

1857 के संग्राम का बहादुरशाह ज फर का ध्वज

सिस्टर निवेदिता का ध्वज 1905

सन् 1905 में सिस्टर निवेदिता ने लाल रंग का एक वर्गाकार ध्वज आजादी के संघर्ष को जीवित रखने के लिए बनाया। इस झंडे के चारों ओर 108 ज्योति–माला (हर भुजा पर 27) बनी थी। झंडे के मध्य भाग में देवराज इंद्र के प्रसिद्ध अस्त्र 'वज्र' की आकृति पीले रंग में अंकित थी। वज्र के बाई ओर पीले रंग में ही 'वंदे' और दाहिनी ओर बंगाली भाषा में 'मातरम्' लिखा था।

स्वतंन्त्रता संग्राम के दौरान पहली बार 'तिरंगा' सन् 1906 में कोलकाता ध्वज के रूप में सम्मिलित हुआ। इस झंडे की रूपरेखा इस प्रकार थी: एक जैसी लंबाई–चौड़ाई वाली तीन पट्टियों में हरा, पीला व लाल रंग था। हरे रंग की पहली पट्टी पर अर्धविकसित सफेद आठ कमल पुष्प चित्रित थे। पीलेरंग की दूसरी पट्टी पर नीले रंग में देवनागरी लिपि में 'वंदेमातरम्' लिखा था। निचली तीसरी लाल पट्टी पर सफेद रंग में बाई ओर सूर्य और दाहिनी ओर एक चंद्रकला अंकित थी। यह झंडा सर्वप्रथम कोलकाता के पारसी बागान स्क्वेयर में 7 अगस्त, 1906 को फहराया गया था।

कोलकाता-ध्वज 1906

'कोलकत्ता–ध्वज' का एक दूसरा रूप विदेशों में मैडम भीकाजी रूस्तम कामा द्वारा आजादी की लड़ाई के दौरान सबसे पहले 22 अगस्त, 1907 को जर्मनी के स्टुटगार्ट शहर में फहराया गया था। इस झंडे में भी कोलकाता– ध्वज की भांति तीन एक जैसी हरी, पीली और लाल पट्टियां थी। सबसे ऊपर गहरे हरे रंग की पट्टी में आठ अर्धविकसित कमल थे, दूसरी पीली पट्टी पर सफेद रंग में देवनागरी लिपि में 'वंदेमातरं' लिखा था। सबसे नीचे तीसरी लाल पट्टी पर सफेद सूर्य और चंद्रकला की आकृति अंकित थी

मैडम कामा का ध्वज 1907, जर्मनी

स्वतंत्राता संग्राम के अगले पड़ाव के दौरान सन् 1917 में होमरूल लीग के नेता बाल गंगाधर तिलक तथा डॉ. श्रीमती ऐनी बेसेंट ने सन् 1917 में एक नये झंडे की रूपरेखा

होमरूल लीग का ध्वज 1917

तैयार की। इसमें बारी–बारी से पांच लाल और चार हरी समतल पट्टियां थीं, जिसमें सप्तऋषियों का प्रतिनिधित्व करने के लिए सात तारागण अंकित थे। इसके बाई ओर के ऊपर के चौथाई जिसका इस्तेमाल कभी नही हुआ। भाग में 'यूनियन जैक' तथा दाहिनी ओर के चौथाई भाग में एक अर्धचंद्र तथा एक तारा अंकित था।

आजादी की लड़ाई के दौरान गांधीजी का चरखे वाला तिरंगा सन् 1921 में पहली बार मैदान में उतरा। दूसरे तिरंगों की भांति, गांधी जी के तिरंगें में भी एक जैसी तीन पट्टियां थीं, जिनका रंग हरा, सफेद और लाल थे। इस झंडे के बीच में एक बड़ा सा चरखा अकिंत था। चूंकि झंडे में प्रयोग किए गए रंग देश की भिन्न–भिन्न जातियों और वर्गो को इंगित करते थे, इसलिए कुछ लोग इस बात से नाराज थे। झंडे की इस आलोचना को ध्यान में रखते हुए गांधी जी ने इस झंडे की रूप रेखा और रंगरूप दोनों को ही सन् 1931 में बदल दिया। नये झंडे में भी तीन पट्टियां रखी गई थीं, परंतु उनके रंगों को इस बार बदल दिया गया था। पहली पट्टी को अब भगवा रंग, दूसरी को सफेद तथा तीसरी पट्टी को हरे रंग में दर्शाया गया। सन् 1931 के इस नये झंडे में प्रयोग किए गए रंगों को इस बार सांप्रदायिकता की आलोचना से मुक्त रखा गया।

फ्लैग कमेटी द्वारा संस्तुत ध्वज (1931) जिसका इस्तेमाल कभी नहीं हुआ

सन् 1931 में आई.एन.सी.द्वारा अपनाया गया ध्वज

अंतः 3 जून, 1947 को, जब अंग्रेजों ने 15 अगस्त 1947 को भारत को आजाद करने की घोषणा की तब भारत की संविधान सभा ने एक अस्थायी समिति राष्ट्रीय ध्वज निर्माण हेतु गठित की और उसे स्वतंत्र भारत के लिए राष्ट्रीय ध्वज का नमूना बनाने का दायित्व सौंपा। समिति ने जिस ध्वज के नमूने को तैयार किया उसे संविधान सभा ने 22 जुलाई, 1947 को भारत के 'राष्ट्रीय ध्वज' के रूप में सर्वसम्मति से स्वीकृत किया।

हमारे राष्ट्रीय ध्वज में तीन एक जैसी लंबाई–चौड़ाई वाली पट्टियां हैं क्योंकि इसमें मुख्य रूप से तीन रंगों का प्रयोग हुआ है। अतः लोग तिरंगे के नाम से जानते हैं। परन्तु, वास्तव में इसमें चार रंगों का प्रयोग हुआ है। केसरी (सरकारी तौर पर इसे इंडिया–सैफरन कहते हैं) से त्याग तथा निस्पृहता का बोध होता है, माध्यम की सफेद पट्टी देश की निर्मलता को दर्शाती है, जबकि नीचे की हरी पट्टी (जिसे सरकारी तौर पर इंडिया–ग्रीन कहते हैं) देश की समृद्धि और विकास की द्योतक है। तिरंगें में जो चौथा रंग प्रयोग हुआ है, वह नीला है और इस रंग में 24 धुर्रियों वाला अशोक चक्र झंडे के मध्य भाग में अंकित हैं। नीला अशोक चक्र असीम उन्नति को दर्शाता है। नीला रंग ऊपर आकाश तथा नीचे अथाह समुद्र को चरितार्थ करता है। 24 धुर्रियां देश की सतत उन्नति की प्रतीक हैं और दिन के 24 घंटों को दर्शाती हैं।

सन् 1931 में आई.एन.सी. द्वारा अपनाया गया ध्वज

वर्तमान राष्ट्रीय ध्वज

संकलनः साभार – नेशनल बुक ट्रस्ट साक्षरता संवाद मासिक पत्रिका, अगस्त 2010

❁ ❁ ❁ ❁ ❁

धर्म: परिभाषाएँ, मान्यताएँ और सन्दर्भ

पुष्पनायक

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

मिथक टूटने के लिए ही होते हैं

जो सत्य होता है, वह **काल, स्थान** और **व्यक्ति** के परे जाकर भी सत्य होता है वह हर कसौटी पर खरा उतरता है। वक्त बदल जाए, मुकाम बदल जाए, इंसान या मुसाफिर बदल जाए, पर सच नहीं बदलता। गुरूत्वाकर्षण का नियम हो या सापेक्षिकता का सिद्धान्त हो – दोनों ही तथ्यों की सत्यता काल, व्यक्ति और स्थान से निरपेक्ष है।

सत्य को ढूँढ़ने की प्रक्रिया ही **अन्वेषण** है। न्यूटन ने गुरुत्वाकर्षण के नियमों को ज्ञात किया। आइंस्टीन ने सापेक्षिकता के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। ढूँढ़े गये सत्य को स्थापित करने की प्रक्रिया ही **न्याय** है। आधुनिक युग में क्रमशः ज्ञात होते गये वैज्ञानिक सत्यों की धाराप्रवाह श्रृंखला ने आर्यभट्ट, कोपरनिकस तथा गैलीलियो द्वारा ज्ञात 'धरती द्वारा सूर्य की परिक्रमा' के सत्य को पूर्णतः स्थापित कर अन्ततः गैलीलियो जैसे चिन्तकों को **सही** और रोम के पोप जैसे शंकालुओं को **गलत** सिद्ध किया।

धर्म और सत्य – सत्य की मर्यादा का पालन ही धर्म है। पेड़ से फल का पकने के बाद ही स्वतः नीचे धरती पर गिरना, उस फल द्वारा 'गुरूत्वाकर्षण के सत्य की मर्यादा का पालन' है और इसलिए उस गिरनेवाले फल का धर्म है। बिना पके टूट कर असमय गिर जाने से उस फल के धर्म का उल्लंघन होता है। ऐसा ही उल्लंधन तब भी होता है, जब अपरिपक्व रहे बालक–बालिका विवाह या सेक्स आदि के चक्कर में फांस लिए जाते हैं, दोष चाहे **परम्परा** का हो या फिर **आधुनिक मीडिया** का हो। व्यक्ति के लिए धर्म क्या हो सकता है? व्यक्ति इच्छा द्वारा संचालित जीव है। इच्छा ही व्यक्ति के कार्यो का निर्धारण करती है, इसलिए व्यक्ति का धर्म उसकी इच्छा से जुड़ा है। इच्छा शून्य भी हो सकती है और अत्यधिक भी। इच्छा होगी तो इच्छा की पूर्ति का प्रश्न उठेगा। इच्छा की पूर्ति, इच्छा से परिमाण में अधिक नहीं हो सकती। इच्छा चाहे जितनी हो जाए उसकी पूर्ति काल, स्थान और व्यक्ति की सीमाओं से निर्धारित होती है। इस तरह इच्छा, अपनी पूर्ति की सीमित क्षमता के मुकाबले असीमित ही मानी जाएगी।

इच्छा **साधन** है, तो जरूरतें (आवश्यकताएँ) **साध्य** हैं। जानने की इच्छा अर्थात जिज्ञासा का साध्य है सत्य। सत्य, किसी एक मानव के ज्ञान ग्रहण करने की सीमित क्षमता के मुकाबले, अनन्त जितना ही विशाल माना जा सकता है और इसलिए सत्य के प्रति मानव की जिज्ञासा भी मानवीय ज्ञान–ग्रहण क्षमता के इस सीमित पैमाने (स्केल) पर अनन्त (अमाप्य) हो सकती है। इस सन्दर्भ में देखा जाए, तो किसी एक व्यक्ति के समक्ष, उसकी अनन्त को छू सकती जिज्ञासा के समाधान हेतु किसी समय किसी भी परिस्थिति में, उसकी सीमित ज्ञान–ग्रहण क्षमता के कारण, सत्य को संपूर्ण में रखना (प्रस्तुत करना) मुमकिन नहीं होता है, बल्कि जो मुमकिन होता है, वह यही होता है कि किसी एक व्यक्ति या व्यक्ति–समूह) के समक्ष, किसी विशिष्ट समय पर, किसी विशिष्ट परिस्थिति में सत्य का एक विशिष्ट अंश प्रस्तुत किया जाए; अब सत्य का वह विशिष्ट अंश कैसा हो, इसी तथ्य में सत्य की **मर्यादा** निहित है और **सत्य की इसी मर्यादा का पालन** ही धर्म है।

इस क्रम में, निश्चय ही व्यक्ति का धर्म यही है कि सत्य का वही अंश जो सन्दर्भ–उपयुक्त हो, किसी के समक्ष प्रस्तुत किया जाए। इस तथ्य से भरा हुआ संस्कृत का एक प्रसिद्ध श्लोक इस प्रकार हैः ''सत्यं ब्रूयात्, प्रियं ब्रूयात्। मा ब्रूयात सत्यम् अप्रियं।। प्रियं च नानृतं ब्रूयात। ऐष धर्मः सनातनः।।'' इसका सार (अर्थ) है, सत्य ऐसा बोलें, जो प्रिय हो, लेकिन अप्रिय सत्य न बोलें।

खैर, यह श्लोक सत्य की मर्यादा के सम्बन्ध में या सत्य की सन्दर्भ–उपयुक्तता के सम्बन्ध में, श्लोक–रचयिता का निजी मन्तव्य–जो श्लोक–रचयिता के निजी व्यक्तित्व पर ही आधारित है–ही प्रकट करता है। सत्य की सन्दर्भ–उपयुक्तता वस्तुतः सत्य–ग्राहक, दोनों के व्यक्तित्व पर संयुक्ततः निर्भर है। उदाहरणार्थ, अवज्ञाकारी शिष्य के लिए गुरू की कटु वाणी, या नटखट सन्तान के लिए माता–पिता की डाँट कतई सन्दर्भ–अनुपयुक्त नहीं मानी जाएगी।

धर्म की शुद्ध परिभाषा – धर्म की उपर्युक्त व्याख्या में एक अंतर्विरोध यह शेष रह गया है कि जब सत्य अनन्त है – मानवीय ज्ञानग्रहण क्षमता के सीमित पैमाने पर – तो फिर कोई सत्य–प्रस्तुतकर्ता संपूर्ण सत्य भला जान भी कैसे सकता है! वह तो सत्य जितना जानेगा, उसी यथाज्ञात सत्य को संपूर्ण मानकर उसके अंश को संप्रेषित करेगा। इसी क्रम में, यदि वह इस यथाज्ञात सत्य की मर्यादा यथासंभव सुरक्षित रखता है, तो उसे धर्म का पोषक माना जाएगा, अन्यथा नहीं! अतः **यथाज्ञात सत्य की मर्यादा यथासंभव पालन** ही धर्म है। *व्यक्ति–धर्म की यह व्यावहारिक परिभाषा, सत्य की भाँति काल, स्थान एवं व्यक्ति के परे भी सत्य है। सत्य, चाहे उसका अधिकांश हमारी मानवता के लिए अज्ञात ही हो, संपूर्ण है और शाश्वत् है। गुरूत्वाकर्षण का सत्य, हमारे बिना उसे जाने भी, हमारी धरती पर लागू होता आया था और लागू होता रहेगा। लेकिन सत्य जितना ज्ञात है – अर्थात यथाज्ञात सत्य – वह संपूर्ण सत्य का एक अंश है, सापेक्ष है और तुलनात्मक है। उदाहरणार्थ, जो किसी एक व्यक्ति के लिए यथाज्ञात सत्य है, वह सम्पूर्ण मानवता के लिए यथाज्ञात सत्य से भिन्न है, और उसका एक अंग ही है। इसी क्रम में यथाज्ञात सत्य की मर्यादा का यथासंभ्व पालन –अर्थात् धर्म – भी एक सापेक्ष धटना है। कसाई द्वारा जीविकोपार्जन हेतू जीवहत्या अधार्मिक नहीं रह जाती, लेकिन मात्र पाश्विक मनोरंजनार्थ जीवहत्या (शिकार) इस प्रसंग में कतई धार्मिक नहीं सिद्ध होती।

धर्म की यह सापेक्षता, न सिर्फ **प्रसंग** बदलने पर दृष्टिगोचर होती है, बल्कि अध्ययन का **काल** बदलने पर भी दृष्टिगोचर होती है। जो एक हजार वर्ष पूर्व धर्म या धर्मसंगत था, वह आज नहीं है, और जो आज धर्मसंगत है, वह तब नहीं था। **व्यक्ति** के सन्दर्भ में, 'यथाज्ञात सत्य के यथासंभव मर्यादापालन' के रूप में धर्म' की सापेक्षता ऐसे समझी जा सकती है कि यथाज्ञात सत्य और उसका यथासंभव मर्यादापालन, दोनों ही की सीमा व्यक्ति–विशेष की **ज्ञान–क्षमता, उत्साह, योग्यता** और **धैर्य** पर निर्भर करती है। अधिक ज्ञानवान वयक्ति के लिए यथाज्ञात सत्य जितना अधिक होगा, कम ज्ञानवान व्यक्ति के लिए यथाज्ञात सत्य उतना ही कम होगा। इसी तरह, अधिक क्षमतावान व्यक्ति के लिए यथाज्ञात सत्य की मर्यादा का पालन जितना अधिक संभव होगा, कम क्षमतावान व्यक्ति के लिए यह मर्यादापालन उतना ही कम संभव होगा।

उदाहरणार्थ, हमारे प्रजातंत्र का तो सिद्धान्त ही है – अधिक से अधिक ज्ञानवान और अधिक से अधिक क्षमतावान व्यक्तियों का प्रजा की सेवा हेतु चयन – ताकि 'संपूर्ण मानवता के लिए अधिकतम यथाज्ञात सत्य'

★ 'इसी प्रसंग में धर्म से थोड़ा हटकर देखा जाए, तो न्याय सत्य की स्थापना से बढ़कर यथाज्ञात सत्य की यथासंभव स्थापना माना जाएगा।

की मर्यादा का अधिकतम पालन संभव हो सके; परन्तु सैद्धान्तिक प्रयास हमेशा सफल कहाँ हो पाते हैं? आखिर अभाव के वातावरण में तो **प्रजातंत्र** के ऊपर **व्यक्तिवाद** का आदर्श ही अक्सर भारी पड़ेगा न! जहाँ तक **'धारयति इति धर्मः'** के आधार पर धर्म की परिभाषा एवं अर्थ, 'धारण करने' के कार्य से लिये जाने का प्रश्न है, तो यह शाब्दिक अर्थ **संस्कृत** तक ही सीमित है। '**मजहब**' एवं '**रिलिजियन**' के अपने–अपने शाब्दिक अर्थ भी कुछ अलग–अलग अवश्य होंगे। लेकिन जहाँ तक व्यावहारिक अर्थ तथा व्यावहारिक परिभाषा का प्रश्न है, तो **धर्म**, **मजहब**, या **रिलिजियन** इत्यादि शब्द समान अर्थ–सूचक हैं, और उन्हें '**यथाज्ञात सत्य के यथासंभव मर्यादापालन**' के रूप में निस्सन्देह समान रूप से परिभाषित किया जा सकता है।

विश्वसता (ईश्वर या अल्लाह) संबंधी मानवीय ज्ञान की वर्त्तमान सीमा – अब इस आधुनिक वर्त्तमान युग में 'संपूर्ण मानवता के लिए यथाज्ञात सत्य' की सीमा – विश्वसता (भगवान, अल्लाह इत्यादि) के संबंध में–निर्धारित करने के लिए प्रस्तुत हों! तदनुरूप यथाज्ञात सत्य के यथासंभव मर्यादापालन के रूप में ही संपूर्ण मानवता के लिए धर्म (विश्वसता–संबंधी) के वर्तमान स्वरूप को सुनिश्चित किया जा सकेगा। हर धर्म की किताब कहती है कि हर काल में, हर जगह, हर रूप में **ईश्वर** या **अल्लाह** या **गॉड** सा **ऐसी ही एक अद्भुत शक्ति** या **विश्वसत्ता** समायी हुई (व्याप्त) है। इस अद्भुत शक्ति के गुण इन सभी धार्मिक पुस्तकों ने अपनी पहुँच के बाहर बताये हैं।

लेकिन यह जरूरी नहीं है कि जो चीज धार्मिक पुस्तकों की पहुँच के बाहर हो। वह विज्ञान की पहुँच के भी बाहर हो। उदाहारणार्थ, धार्मिक पुस्तकों का ज्ञान, ईश्वर के संबंध में, बस इतना है कि ईश्वर हर जगह, हर रूप में मौजूद है, अब चाहे वह जैसा भी हो। इस मुताबिक ईश्वर न सिर्फ हमारे भोजन में, बल्कि उस भोजन को चबाने वाले हमारे दाँतों में भी मौजूद है। इस सब का मतलब यह निकलता है कि हमारे दॉतों में उपस्थित ईश्वर ने हमारे भोजन में स्थित ईश्वर को चबा लिया, तो निस्सन्देह यह मतलब अनर्गल और बेतुका ही माना जाएगा। लेकिन अब विज्ञान बताता है कि यह ऊर्जा ही है, न कि कोई ईश्वर, जो न सिर्फ हमारे भोजन में, बल्कि उस भोजन को चबानेवाले दाँतों में भी व्याप्त है। और इसीलिए जब कभी हमारे शरीर को ऊर्जा की कमी होती है, तो उस ऊर्जा की कमी को पूरा करने के लिए हमारे शरीर के दाँत किसी भोज्य पदार्थ को चबाकर उस भोज्य पदार्थ की ऊर्जा को हमार शरीर के लिए प्रस्तुत कर देते हैं।

परस्पर पवित्तनीय ऊर्जा एवं मात्रा ही सर्वकालीन विश्वशक्तिः इनके गुण – इस प्रकार आज के विज्ञान ने उपर्युक्त विश्वशक्ति (ईश्वर, अल्लाह, गॉड आदि) को सही–सही पहचाना और उसे ऊर्जा की संज्ञा (नाम) दी। फिर विज्ञान ने इस ऊर्जा के विभिन्न **सजीव** एवं **निर्जीव** रूप पहचाने सजीव ऊर्जा का ही एक महत्वपूर्ण, परन्तु निर्णायक अंश **मानवीय ऊर्जा** है। मानवीय ऊर्जा के भी दो प्रकार हैंः **शारीरिक** एवं **मानसिक**। जिस तरह जल का **प्रवाह**, 'अधिक ऊँचाई पर रखे जल–स्त्रोत' से 'कम ऊँचाई पर रखे जल–पात्र' की ओर संभव होता है, इसी तरह **ऊर्जा का प्रवाह**, 'अधिक ऊर्जा के स्त्रोत' से 'कम ऊर्जा के क्षेत्र' की ओर संभव होता है। उदाहरण ार्थ, धरती की ओर– दिन में सूर्य से, तथा रात में सूर्यप्रकाशित चन्द्रमा से–ऊर्जा (प्रकाश–ऊर्जा) का प्रवाह स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है।

आगे चलकर विज्ञान ने वैज्ञानिक आइंस्टीन के जरिये, **ऊर्जा की मात्रा** में, तथा **मात्रा की ऊर्जा** में, **परस्पर परिवर्त्तनशीलता** को भी पहचाना। ऊर्जा में 'जल–लहर या जल–तरंग के समान फैलने' का गुण – जिसे इसलिए तरंग–गुण या तरंग–प्रकृति कहते हैं – प्रभावी होता है; जबकि मात्रा में कणात्मकता (कण–प्रकृति) – विशिष्ट समय में (क्षण पर) किसी विशिष्ट स्थान पर उपस्थिति – का गुण प्रभावी तौर पर विद्यमान

होता है। वैसे, **कणात्मकता** एवं **तरंगात्मकता** के ये दोनों ही गुण, मात्रा एवं ऊर्जा, दोनों में विद्यमान होते हैं। फर्क ही यही है कि मात्रा में तरंगात्मकता नगण्य होती है, तो ऊर्जा में कणात्मकता नगण्य होती है। मात्रा जितनी कम होती जाती है, उसकी कणात्मकता उतनी ही कम होती जाती है, और उसमें तरंगात्मकता का क्रमशः विकास होता जाता है। दूसरी तरफ, ज्यों–ज्यों ऊर्जा की तरंग–लम्बाई (एक विशिष्ट तरंग–अभिलाक्षणिक) घटती जाती है, उसकी तरंगात्मकता घटती जाती है, और उसकी कणात्मकता बढ़ती जाती है।

उर्जा एवं मात्रा संयुक्त योगदान ही स्वतंत्र पिण्डों का निर्माण करता है, चाहे वह निर्मित पिण्ड **ब्रह्माण्ड** जैसा विशाल हो, या फिर **बैक्टीरिया** जैसा सूक्ष्म! ऊर्जा एवं मात्रा से निर्मित इन पिण्डों में सजीव उवं निर्जीव, दोनों आ जाते हैं। सजीव भी दो प्रकार के हैः पशु और पादप (पौधे)। पशुओं में मानव सर्वाधिक उन्नत पशु है। जरा हम मानव में होनेवाले ऊर्जा–प्रवाह के कुछ उदाहरण देखें!

निर्णायक मानवीय ऊर्जा का वर्त्तमान चरित्र – मानव–समाज में पुरुष का स्त्री पर रक्षात्मक नियन्त्रण, **मानवीय शारीरिक ऊर्जा के** – मानवीय शारीरिक क्षमता की ढ़ाल (उबड़–खाबड़ धरातल) पर, 'पुरुष की सामान्यतः उच्चतर शारीरिक क्षमता के ऊँचे तल' से 'नारी की सामान्यतः निम्नतर शारीरिक क्षमता के नीचे तल' की ओर–**प्रवाह का उदाहरण** है। शारीरिक ऊर्जा का यह अवांछनीय प्रतीत होनेवाला प्रवाह तभी रुकेगा, जब मानव को अन्य पशुओं से अलग करनेवाला **विवेक** पर्याप्त जागृत हो जाए, या फिर स्त्री और पुरुष किसी प्रकार शारीरिक क्षमता के धरातल पर बराबर ऊँचाई पर आ जाएँ, या फिर शारीरिक क्षमता का धरातल बिल्कुल समतल हो जाए।

दूसरी तरफ, नारी में **सहन–शक्ति**, **धीरता** जैसे गुण नारी को पुरुष की तुलना में मानसिक क्षमता के उच्चतर धरातल पर रखते हैं, ताकि मानसिक ऊर्जा का प्रवाह, नारी से पुरुष की ओर, मानसिक प्रेरणा के रुप में होता रहे। कुल मिलाकर, नारी एवं पुरुष के मध्य शारीरिक एवं मानसिक ऊर्जा के प्रवाह का यह चक्र, ऊर्जा–संरक्षण के सिद्धान्त के अनुपालन–स्वरुप अब तक अनवरत् चलता आ रहा है। दुनिया–भर के मानवों में, वर्तमान अमेरिकी या जापानी नागरिक, भौतिक दृष्टि से औसतन सर्वाधिक उन्नत मानव–प्राणी माने जा सकते हैं। भौतिकतः, भारत का औसत मानव इनके मुकाबले काफी पिछड़ा हुआ है।

इस प्रसंग में, 'अमेरिकन' शब्द के उल्लेख–मात्र पर आम जानकर भारतीय का रोमांचित हो उठना, या अपने अन्दर मानसिक आवेग की लहर का ज्वार अनुभव करना–वस्तुतः **मानसिक ऊर्जा** का भौतिकता की ढलान पर ऊँचाई (अमेरिका की) से नीचे (भारत) की ओर स्वाभाविक **प्रवाह** है। उदाहरणार्थ, स्वामी विवेकानन्द द्वारा अमेरिका और यूरोप में हासिल उपलब्धियों के सामने उनकी स्वदेश में अर्जित उपलब्धियाँ फीकी पड़ जाती हैं, भले ही अमेरिका और यूरोप में उनके द्वारा प्रभावित हुए लोगों का औसत बौद्धिक स्तर, स्वदेश में उनके प्रभाव–क्षेत्र के लोगों की तुलना में कम ही क्यों न रहा हो! दूसरी तरफ, गाँधीजी की अब तक परतंत्र रहे **दक्षिण अफ्रीका** में अर्जित उपलब्धियाँ, उनकी स्वदेश–अर्जित उपलब्धियों की पृष्ठभूमि में ही याद की जाती है; आखिर परतंत्र चले आ रहे दक्षिण अफ्रीका की तुलना में स्वतंत्र हो चुका भारत ही ज्यादा स्वाभाविक आकर्षण रखता है। इसी तरह, 'मल्होत्रा' से हम 'मेहरोत्रा' पर आ जाते है, शायद अंग्रेजी भाषा के प्रति अपने रुझान (भौतिकतावादी) के कारण! और मानसिक ऊर्जा का भौतिकता की ढलान पर उपर्युक्त प्रवाह तब तक होता रहेगा, जब तक **भौतिकता के धरातल** पर भारत और अमेरिका, या दक्षिण अफ्रीका और भारत, या भारत और इंग्लैण्ड समान ऊँचाई पर न

आ जाएँ; या फिर जब तक कोई भारतीय भौतिकतासूचक '**अमेरिकन**' या **अंग्रेज**' जैसे शब्दों के **बारम्बार उल्लेख के कारण,** ऐसे शब्दों की ध्वनि के प्रति एक सामान्य भारतीय की संवेदनशीलता न खो बैठे।

इसी प्रसंग में, भारत के मानव प्राणियों की उन्नति का तात्कालिक उत्तरदायित्व, सिद्धान्ततः स्वयं भारत की जनता का है, परन्तु व्यवहारतः यह उत्तरदायित्व भारत के नेतावर्ग, पूँजीपति, नौकरशाहों तथा शिक्षाधिकारियों का है फिर अन्य विकासशील देशों की ही भाँति भारत की सूक्ष्मतः सबसे बड़ी समस्या वस्तुतः व्यवहार–योग्य ऊर्जा, खासकर विद्युत–ऊर्जा की लगातार कमी ही है। अगर विद्युत–ऊर्जा पर्याप्त उपलब्ध हो जाए, तो अन्य सभी क्षेत्रों, जैसे कृषि, उद्योग इत्यादि में तीव्र विकास संभव है। खैर, उपर्युक्त भटकती–सी लम्बी विवेचना के पश्चात् कुल मिलाकर यह बिलकुल सौ–फीसदी साबित हो चुका है कि अपरिभाषित विश्वसत्ता के '**भगवान**', '**अल्लाह**', '**गॉड**' इत्यादि जैसे जिन अलग–अलग कॉपीराइट संस्करणों को संपूर्ण सत्य बताकर धर्मप्रवर्त्तकों द्वारा गये जमाने से अब तक दुनिया में भावनाओं के बाजार में बेचा जा चुका है, वे सभी–के–सभी संस्करण गलत हैं। अब यहा ज्ञात हो चुका है कि अब तक अज्ञात–अपरिभाषित रही दिव्यशक्ति या विश्वसता कुछ और नहीं, बल्कि एकमात्र ऊर्जा है, जो सर्वव्याप्त है, मात्रा में परिवर्त्तनशील है, एवं सजीव एवं निर्जीव, दोनों ही ऊर्जा–रुपों मे विद्यमान है। समस्त ऊर्जा–रुपों में अत्यधिक सक्रिय एवं सर्वाधिक निर्णायक **मानवीय मानसिक ऊर्जा** ही है कोई अन्य नहीं।

तथाकथित धर्म और तथाकथित विश्वसत्ता का चिरघोषित साध्य–अब जरा विश्वसत्ता या धर्म आदि के तात्पर्य या अर्थ–परिभाषा आदि से हटकर इनके उद्देश्य पर आएँ। सवाल है कि धर्म की परिभाषा चाहे जो भी हो, परन्तु उसका घोषित, या कहें, वांछित लक्ष्य क्या रहा है; या पूछें कि धर्म की जरुरत क्या रही है और क्या बतायी जाती रही है। उत्तर यह है कि धर्म की जरूरत रही है, और बतायी भी यही जाती है: सब लोगों की सुख–शांति, और यह आश्वासन कि स्वार्थ–सिद्धि के लिए एक–दूसरे का गला न काटने लगें।

इसी प्रसंग में देखा जाए, तो 'भगवान' या अपरिभाषित विश्वसत्ता की अवधारणा की वजह रही है: लोगों के समक्ष एक ऐसी सत्ता–जिसका उत्तरदायित्व '**सामाजिक शांति और स्थायित्व का निर्वाह**' हो, का अस्तित्व प्रकट करने की जरुरत। अब ओग देखा जाए, तो ये जरुरतें शाश्वत् हैं, सत्य हैं, और **साधन** (धर्म, विश्सत्ता इत्यादि) से अलग हटकर **एकमात्र अंतिम साध्य** हैं। इन्हीं जरुरतों के लिए कार्ल मार्क्स ने या महात्मा गाँधी ने अपने–अपने सिद्धान्त दिये।

गाँधी ने मार्क्स के सिद्धान्त की आलोचना इस आधार पर की कि मार्क्स द्वारा इन जरुरतों की पूर्त्ति हेतु चुने गये साधनों में हिसां की गिनती समाज के लिए आत्मधाती है, और ऐसे साधन से साध्य (अन्तिम सामजिक शांति की शाश्वत आवश्यकता, को ही खतरा पहुंच सकता है। इसी आधार पर हम पाते हैं कि इन जरूरतों की पूति हेतु धर्म और भगवान जैसे भावनात्मक, परन्तु कल्पित साधनों का इस्तेमाल भी हमेशा सामाजिक शांति की अंतिम जरुरत के लिए ही खतरनाक सिद्ध होता रहा है; और वह इसलिए कि न सिर्फ इन साधनों में 'भगवान' (या 'अल्लाह' आदि) वस्तुतः कल्पना की चीज ही सिद्ध हुआ है; बल्कि साथ ही साथ इस कल्पित 'भगवान' (या 'अल्लाह') के वास्तविक प्रभाव क्षेत्र (**आज जनता**) को **कल्पनाकारों** (विश्वसत्ता की कल्पना करने–करवाने वालों) ने **अक्सर** अपने **निजी** स्वार्थ के लिए भुनाया भी।

एक साधन के रुप में तथाकथित धर्म–सह–विश्वसत्ता का वर्त्तमान औचित्य – आज जो उचित है, वह यह है कि 'धर्म' या 'भगवान' जैसे **साधन** और उनके घोषित या वांछित लक्ष्य (या **साध्य**) – इन दोनों को एक–दूसरे

से पृथक् (**अलग**) कर लें। 'भगवान' और उससे सम्बद्ध 'धर्म' की संकल्पनाएँ जैसे जिस स्वरुप में उदित हुई थीं, उन्हें उनके उसी स्वरुप में वैसे ही लुप्त होने दिया जाए। दूसरी तरफ, जिन जरुरतों के लिए 'भगवान' या 'धर्म' की कल्पना की सृष्टि हुई थी, उन जरुरतों को भली–भाँति पहचानते हुए उनके वास्तविक चुनौतीपूर्ण हल ढूँढ़े जाएँ। सोमनाथ का मन्दिर, महमूद गजनवी ने तब लूटा था, जब मन्दिर के रक्षक भक्त, 'भगवान' के मन्दिर–रक्षार्थ अवतरित होने का दिवास्वप्न देखते रह गये थे।

हमारी जरुरतें क्या है? हवा, पानी, भोजन इत्यादि हमारी **जैविक** आवश्यकताएँ (जरुरतें) हैं। कपड़े मकान इत्यादि हमारी **भौतिक** आवश्यकताएँ हैं। शारीरिक शक्ति, स्वास्थ्य, काम इत्यादि हमारी **दैहिक** आवश्यकताएँ हैं। प्रेरणा, मानसिक शक्ति, प्रेम इत्यादि हमारी **मानसिक**–सह–आध्यात्मिक आवश्यकताएँ हैं। आराम हमारी शारीरिक–सह–मानसिक आवश्यकता है ऊर्जा हमारी **सर्वांगीण** आवश्यकता है। अतः इनमें से प्रत्येक आवश्यकता के उपयोग एवं उपभोग के प्रति संरक्षण एवं आदर की भावना हममें होनी चाहिए, न कि उनके प्रति किसी प्रकार के तिरस्कार (तुच्छता की भावना) या किसी लोभ से प्ररित उनके (आवश्यकताओं के) अपव्यय की प्रवृति!

इन सारी मानवीय आवश्यकताओं को उपनी पीढ़ी के लिए पूरा कर पाना, एवं सारी अगली पीढ़ियों के लिए इनकी पूर्ति की संभावनाओं को सुरक्षित बनाये रखना ही आज के किसी भी वैकल्पिक धर्म की जरुरत होनी चाहिए। यह सही है कि 'धर्म' या 'भगवान' की प्रचलित अवधारणाओं की जन–अहितकारिता सिद्ध होने के बावजूद, सिवाय साम्यवादी ('कम्युनिस्ट') राष्ट्रों के, दुनिया के किसी अन्य देश ने अब तक अपने सारे संस्थापित धर्म–संस्करणों की संवैधानिक मान्यता संपूर्णतः रद्द नहीं की है, लेकिन अब इसका सही वक्त आ गया है। ऐसा कदम उठाने में **भारत** जैसे उन मुल्कों – जिन्होंने हर धर्म–संस्करण को बराबर संवैधानिक मान्यता दे रखी हो – को कम वक्त लगेगा, वनिस्पत् **अरब**, **पाकिस्तान** जैसे उन मुल्कों – जिन्होंने अब तक अपने यहाँ (राज्य–क्षेत्र में) हर धर्म–संस्करण को बराबर संवैधानिक मान्यता देने के बदले, सिर्फ किसी एक धर्म–संस्करण को मान्यता प्रदान की हो और बाकी सभी धर्म–संस्करणों को खारिज किया हो–के।

अच्छा होता, अगर विश्व के समस्त राष्ट्र, संयुक्त राष्ट्र संघ की आम सभा में शामिल होकर, जल्द–से–जल्द यह कदम एक साथ उठाते! इस दिशा में शीघ्रता आवश्यक इसलिए है कि समय महान है। जिसने समय को नहीं जीता, वह समय द्वारा पछाड़ दिया जाता है। मनुष्य अपने आलस्य को दूर रखे, समय पर जीत अवश्य मिलेगी।

❋ ❋ ❋ ❋ ❋

हिन्दी है जन–जन भाषा, राष्ट्र एकता की परिभाषा।

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त

डा० लोहिया बनाम भारतीय भाषाएं

बृजेश यादव
सहा. निदेशक (धातु विज्ञान)
एम.एस.एम.ई.,विकास संस्थान, भारत सरकार आगरा

समाजवादी राजनीति के पुरोधा डॉ. राममनोहर लोहिया के भाषा संबंधी समस्त चिंतन और आंदोलन का लक्ष्य भारतीय सार्वजनिक जीवन से अंग्रेजी के वर्चस्व को हटाना था। यहां दो बातें स्पष्ट कर देना जरूरी है। पहली यह कि लोहिया जब अंग्रेजी हटाने की बात करते हैं तो उनका मतलब हिंदी लाना नहीं है। दूसरी, अंग्रेजी हटाने के नारे के पीछे लोहिया की एक खास समझदारी है।

लोहिया भारतीय जनता पर थोपी गई अंग्रेजी के स्थान पर भारतीय भाषाओं को प्रतिष्ठा दिलाने के पक्षधर थे। 19 सितंबर, 1962 को हैदराबाद में लोहिया ने कहा था, 'अंग्रेजी हटाओ का मतलब हिंदी लाओ नहीं होता। अंग्रेजी हटाओ का मतलब होता है, तमिल या बांग्ला और इसी तरह अपनी–अपनी भाषाओं की प्रतिष्ठा।' लोहिया को अंग्रेजी भाषा मात्र से कोई आपत्ति नहीं थी। अंग्रेजी के विपुल साहित्य के भी वह विरोधी नही थे, बल्कि विचार और शोध की भाषा के रूप में वह अंग्रेजी का सम्मान करते थे। लोहिया की अंग्रेजी से मूल आपत्ति सार्वजनिक जीवन में इस्तेमाल से है। इसके ठोस सामाजिक–आर्थिक–राजनीतिक कारण है। भाषा का सवाल उनके लिए पेट का सवाल है। वह पेट और दिमाग के सवालों को जुड़ा हुआ मानते थे। उनके अंग्रेजी विरोध का मूल कारण है, भारतीय संदर्भ में अंग्रेजी का सामंती भाषा होना।

दक्षिण के हिंदी–विरोधी उग्र आंदोलनों के दौर में लोहिया पूरे दक्षिण भारत में अंग्रेजी के खिलाफ तथा हिंदी व अन्य भारतीय भाषाओं के पक्ष में आंदोलन कर रहे थे। अंग्रेजी हटाने के संदर्भ में वह तमिल आदि हिंदी से इतर भाषाओं को लाने की बात अवश्य करते हैं, लेकिन विभिन्न कारणों से उनके लेखन में कहीं–कहीं भारतीय भाषाओं में से हिंदी को ही राजभाषा और राष्ट्रभाषा के पद पर बिठाने की इच्छा अनायास ही प्रकट हो जाती है। हिंदी के प्रति झुकाव की वजह से दक्षिण भारतीयों को लोहिया भारतीयों के प्रतिनिधि के रूप में दिखाई देते थे। दक्षिण भारत में उनके 'अंग्रेजी हटाओ' के नारे का मतलब 'हिंदी लाओ' लिया जाता था। इस वजह से लोहिया को दक्षिण भारत में सभाएं करने में कई बार काफी मुश्किलों का सामना करना पड़ता था। मद्रास ओर कोयम्बटूर में सभाओं के दौरान उन पर पत्थर तक फेंके गए। ऐसी घटनाओं के बीच हैदराबाद लोहिया की गतिविधियों का केन्द्र बना रहा। 'अंग्रेजी हटाओ' आंदोलन की कई महत्वपूर्ण बैठकें हैदराबाद में हुई।

अंग्रेजी हटाने और हिंदी को एकमात्र राजभाषा बनाने के लिए संविधान में प्रावधान किया गया कि 15 साल तक हिंदी का विकास किया जाए और 1965 में अंग्रेजी को हटा दिया जाए। लोहिया इस 15 साल की विकास की अवधि के एकदम खिलाफ थे। हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं की क्षमता और समृद्धि के बारे में यह बार–बार कहते थे कि जैसे बिना पानी में उतरे तैरना सीखना असंभव है, उसी तरह बिना प्रयोग में लाए भारतीय भाषाओं की समृद्धि मुमकिन नहीं। लोहिया की स्पष्ट समझदारी थी कि जब तक अंग्रेजी के साथ रूतबा जुड़ा हुआ है, भारतीय भाषाओं की समृद्धि संदिग्ध है।

जहां तक भाषा और विकास के संबंध की बात है, तो लोहिया अपने लेखन और भाषण में लगातार रेखांकित करते रहे कि विकास का किसी भाषा विशेष से कोई संबंध नहीं होता। वह रूस, चीन, फ्रांस आदि देशों का उदाहरण देकर बताते रहे कि इनत माम दशों ने अपनी प्रगति बिना अंग्रेजी ज्ञान के अपनी भाषाओं के जरिये की है। आज जापान, कोरिया और चीन जैसे उदाहरण हमारे सामने हैं, जिन्होंने अपनी प्रगति अपनी भाषाओं के जरिये की है। आज जापान, कोरिया और चीन जैसे उदाहरण हमारे सामने है, जिन्होंने अपनी प्रगति अपनी भाषाओं में की है। वह कहते थे कि भाषा (अंग्रेजी) ज्ञान के चक्कर में विद्यार्थी विषय ज्ञान में पारंगत नहीं हो पाते, इसलिए वे भाषा ज्ञान की तुलना में विषय ज्ञान को महत्व देते है। लोहिया कहते है कि मौलिक चिंतन अपनी भाषा में ही संभव है, किसी विदेशी भाषा में नही। वह हिंदी को सारी संकीर्णताओं से निकालकर एक उदार भाषा बनाने के पक्षधर थे।

दुर्भाग्य की बात है कि आज भाषा ज्ञान के कुतर्क के खिलाफ विषय ज्ञान की महत्ता के लिए संघर्ष करने वाला कोई राममनोहर लोहिया हमारे बीच नेतृत्व करने के लिए नहीं है इसलिए हम लड़ाई हार रहे हैं। जब तक हमारी मातृभाषाओं पर गहराते संकट के खिलाफ संघर्ष की जरूरत महसूस की जाती रहेगी, तब तक भाषा संबंधी उनके विचार प्रासंगिक रहेंगें।

❋ ❋ ❋ ❋ ❋

युवक और युवतियां अंग्रेजी और दुनिया की दूसरी भाषाएं खूब पढ़ें और जरूर पढ़े। लेकिन उनसे मैं आशा करूंगा कि वे अपने ज्ञान का प्रसाद भारत को और सारे संसार को उसी तरह प्रदान करेंगें जैसे बोस, राय और स्वयं कवि रवीन्द्रनाथ ने प्रदान किया है। मगर मैं हरगिज यह नहीं चाहूंगा कि कोई भी हिन्दुस्तानी अपनी मातृभाषा को भूल जाए या उसकी उपेक्षा करे या उसे देखकर शर्माएं अथवा यह महसूस करें कि अपनी मातृभाषा के जरिए वह ऊँचे से ऊँचा चिन्तन नहीं कर सकता।

–राष्ट्रपिता महात्मा गांधी

देश के सबसे बड़े भूभाग में बोली जाने वाली हिन्दी ही राष्ट्रभाषा की अधिकारिणी है।

सुभाष चन्द्र बोस

किसान

गिरिजेश सिंह मेहरा
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,
वाराणसी (उ. प्र.)

जब तुम सोते हो घरों में तब मैं खेत में जागा करता हूँ,
पूरे देश को अनाज देता पर खुद रोटी माँगा करता हूँ।
पल–पल जीता पल–पल मरता फिर भी देश की शान हूँ,
धरती का भगवान कहलाता मैं एक किसान हूँ।
शहरों के जगमग नगरों से दूर बसा मेरा गाँव है
जहाँ न पंखा, कूलर पर पीपल बरगद की छाँव है।
हाथों में हल है मेरे दिल में मेरे घाव हैं
दोपहरी धूप में पसीने से, फसल में भरता जान हूँ,
धरती का अन्नदाता कहलाता मैं एक किसान हूँ।
बच्चों की पढ़ाई करानी, पत्नी को साड़ी देनी है,
साहूकार का कर्ज छुड़ाना, बेटी की शादी करनी है।
छोटा सा घर बनाना है, दो बैल की जोड़ी लेनी है।
रात को ये सपने देखता पर सुबह फिर अनजान हूँ
मेहनत की मूर्ति कहलाता मैं एक किसान हूँ।
मेरी टूटी छत से सूर्य की एक किरण अंदर आती है,
प्रतिदिन वो मुझसे एक प्रश्न पूछ कर जाती है।
कि हे किसान! इस खेती से तूझको क्या मिलता है?
सूनी आँखें बच्चों की, ताड़–ताड़ साड़ी पत्नी की
ये टूटा छत तुझको नहीं चुभता है?
मैं बस कहता कि खेती मेरी धर्म है और मिट्टी की मैं पहचान हूँ
इसी से जिऊगाँ इसी पर मरूँगा क्योंकि मैं एक किसान हूँ।

❑ ❑ ❑

भैंसों की मुख्य नस्लें

रामप्रसाद भारती
केन्द्रीय बकरी अनुसंधान संस्थान, मथुरा

मुर्रा : मुर्रा के मुंह कान पर, होय सुनहरे बाल
सींग, मुड़ेमा होयंगे देखो छल्ले चार।
देखो छल्लेदार होय यह रंग की कारी
छोटा मुख और कान पिछाई होये भारी।।
कहे भारती सत्य पूंछ को भूरा झुर्रा
उत्तर भारत की नस्ल दुधारू निकले मुर्रा।।

जाफरावादी : भारी ढीला हो बदन उभरो होय ललाट
विकसित पूरे अयन की करे दूध में ठाठ।
करे दूध में ठाठ बहुत ही खाये चारा
मिले कठियावाड़ क्षेत्र गिर जंगल सारा।
बड़े किच्च से सींग भारती रंग की कारी
होय जाफरावादी सीस गरदन हो भारी।

नीली/रावी : धारी चेहरे पर मिले होय निलम्बी कान
मांट मोगर्रा में मिले फाजिल्खां मुल्तान।
फाजिल्खां मुल्तान बीच उत्तल के रेखा
नीचे धसो ललाट भोरी नीली का देखा।
छोटे–मोटे सींग भारती भूरी कारी
मध्यम कद अति दूध मिले पैरों पर धारी।

मेहसाना : पायी मेहसाना गयी पाटन कांठी कैल
भोरी दुधारू पालते बीजापुर के छैल।
बीजापुर के छैल भारती मुहरा चौड़ा
दोनों नथुने खुले सींग हंसिया का जोड़ा।
मध्यम कद की भोरी मिलेगी रंग से काली
लम्बी गरदन होय दूध हिट जाये पाली।

भदावरी : छोटा मुख हो भारती कान खुरदरे संग
घी में निकले श्रेष्ठ ये तांबे जैसा रंग।
तांबे जैसा रंग बाह की भोरी गठीली
लम्बी पतली पूंछ भैंसि की मिले लचीली।
होय कि श्याम से सींग औसतन होवे मोटा
मध्यम कद की भैंसि अयन होता है छोटा।

नागपुरी : छोटी काया भारती काला रंग विचित्र
नागपुरी को देखिये नागपुर में मित्र।
नागपुर में मित्र जाय वरदा में पाली
भूरे धब्बे दार टांग मुख पूंछ निराली।
चपटे लम्बे सींग दूध में पायी खोटी
लम्बा चेहरा गला पूंछ होती है छोटी।

टोडा : पाई ऊटी भारती लम्बा होय शरीर
चेहरा गरदन भाल पर काली मिले लकीर।
काली मिले लकीर होय सिर इसका भारी।
मिलते वीणाकार सींग की महिमा न्यारी।
भूरो धूसर रंग दूध कम लेकर आयी
भूरे रंग की दो फीत गले टोडा के पायी।

❑ ❑ ❑

हिन्दी का श्रृंगार राष्ट्र के सभी भागों के लोगों ने किया है, वह हमारी राष्ट्रभाषा है।

चक्रवर्ती राजगोपालचारी

हरीश चन्द्र जोशी
निदेशक, (राजभाषा)
भा. कृ.अनु.परिषद्, दिल्ली

बिहू

उमंग भरे गीत
पहाड़ों को भेदता संगीत
अंग–प्रत्यंग की कसरत
एक जवां हसरत है बिहू
कुवारियों की छमक
बुवारियों की धमक
वृद्धाओं की कसक है बिहू
अलसुबह से शाम तक
असम के आसमान में
नाचते हैं बादल
ताल देते पेड़
कुलबुलाते अरमान
थिरकती है प्रकृति और
गमक उठता है ढोल
बिहू–बिहू लागिसे

❑ ❑ ❑

फसल

एक फसल बरबाद हो गई
गलत खाद और पानी से
सारा खेत खराब हो गया
छोटी सी एक खामी से
इतनी उर्वर मिट्‌टी में
हे राम! ये हमने क्या बोया
नई फसल बीमार हो गई
अपनी भरी जवानी में
चुनचुनकर जिस घासफूस को
हमको दूर भगाना था
आज लता बन चूम रहीं हैं
घर–घर की दीवारों को
छावानल सी ना जाने ये
फैली क्या मजहबी बयार
झुलस उठीं है फसलें सारी
गंगा जमुनी घाटी में

❑ ❑ ❑

राष्ट्रभाषा की जगह हिंदी ही ले सकती है कोई दूसरी भाषा नहीं।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी

राजभाषा कार्यकलाप

राजभाषा कार्यकलाप
(2010–11)

★ संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति की तिमाही बैठकें नियमित रूप से आयोजित की जाती हैं। इस वर्ष में भी चार तिमाही बैठकें आयोजित की गई तथा बैठकों में लिए गए निर्णयों पर अनुवर्ती कार्रवाई सुनिश्चित की गई।

★ संस्थान द्वारा विगत कई वर्षो से चलाई जा रही प्रोत्साहन योजनाओं के अन्तर्गत मूल हिन्दी वैज्ञानिक/तकनीकी आलेख लेखन पुरस्कार योजना वर्ष 2008–09 के अर्न्गत 32 वैज्ञानिकों/तकनीकी कार्मिकों को पुरस्कृत किया गया।

★ मूल रूप से हिन्दी में टिप्पण/मसौदा लेखन प्रोत्साहन योजना के अन्तर्गत वर्ष 2008–09 के लिए संस्थान के प्रशासनिक/तकनीशियन तथा चतुर्थ श्रेणी स्टाफ के 10 कार्मिकों को पुरस्कृत किया गया।

★ संस्थान में गत वर्षो की भांति इस वर्ष भी 14 सितम्बर से 30 अक्तूबर 2010 तक राजभाषा मास का आयोजन किया गया। जिसमें विभिन्न एवं तकनीकी वर्ग के कार्मिकों तथा शोध छात्रों हेतु 'शोधपत्र/पोस्टर प्रदर्शन प्रतियोगिता आयोजित की गई। नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्य कार्यालयों हेतु 'राजभाषा ज्ञान प्रतियोगिता' आयोजित की गई। 19/10/2010 को मुख्य राजभाषा समारोह एवं पुरस्कार वितरण समारोह संपन्न हुआ जिसमें विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेता प्रतिभागियों को नकद पुरस्कार एवं प्रमाणपत्र प्रदान किए गए।

★ संस्थान में राजभाषा क्रियान्वयन को गति देने के उद्देश्य से संस्थान के सहायकों हेतु दिनांक 28/9/2010 को एक पशासनिक कार्यशाला का आयोजन किया गया जिसमें 35 सहायकों ने भाग लिया। इस अवसर पर तीन अतिथि वक्ताओं के विशेष व्याख्यान कराने के साथ–साथ प्रतिभागियों को हिन्दी में सरकारी काम–काज करने का अभ्यास भी कराया गया।

★ नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, करनाल की छःमाही बैठकों में संस्थानों के अधिकारियों द्वारा नियमित रूप से भाग लिया जाता है। जून, 2010 तथा नवम्बर 2010 में आयोजित दोनों छःमाही बैठकों में संस्थान की ओर से श्री जे.के.केवलरमानी, संयुक्त निदेशक (प्रशासन) एवं कुलसचिव, श्री रामशंकर गौतम उपनिदशक (राजभाषा) एवं श्रीमती कंचन चौधरी, तकनीकी अधिकारी ने भाग लिया।

★ संस्थान के वैज्ञानिकों के वैज्ञानिक एवं लोकप्रिय लेख, छात्रों के शोध सारांश, संस्थान की आडिट रिपोर्ट, वार्षिक प्रतिवेदन, प्रशासनिक कार्य, विभिन्न समारोहों की प्रेस विज्ञप्तियां, भाषण, अभिभाषण एवं अनेक प्रकार का अनुवाद कार्य इस एकक द्वारा किया जाता है।

★ कृषि अनुसंधान तथा शिक्षा विभाग (डेयर) कृषि मंत्रालय, भारत सरकार की श्रीमती उर्मिल हरित सहा० निदशक राजभाषा द्वारा दिनांक 17/2/2011 को संस्थान में किए जा रहें राजभाषा कार्यकलापों का निरीक्षण तथा समीक्षा कार्य किया गया। उन्होंने संस्थान के प्रशासनिक अधिकारी एवं अनुभाग अधि

ाकारियों की बैठक कर परिषद एवं डेयर की राजभाषा नीति के संबध में चर्चा कर सभी से सरकारी काम–काज राजभाषा हिन्दी में निपटाने का अनुरोध किया।

- ★ दिनांक 14/2/2011 को संस्थान के सरकारी काम–काज राजभाषा (हिन्दी)में करने को सुगम बनाने हेतु अनुवादक सोफ्टवेयर का प्रदर्शन सुपर इन्फोसोफ्ट वेयर प्रा. लिमि. के प्रबन्धन निदेशक द्वारा किया गया। इस कार्यशाला में संस्थान के वैज्ञानिक,तकनीशियन तथा प्रशासनिक अधिकारी स्तर के लगभग 50 कार्मिकों ने बढ़–चढ़ कर भाग लिया। इस सोफ्टवेयर का सफल प्रदर्शन हुआ। कार्यक्रम के अन्त में संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) ने स्टाफ को संबोधित करते हुए कहा कि सरकारी काम–काज राजभाषा (हिन्दी) में करने के लिए यह सोफ्टवेयर अधिक उपयोगी होगा। उपनिदेशक (राजभाषा) ने समस्त अधिकारियों एवं स्टाफ तथा प्रबन्ध निदेशक सुपर इनफोसोफ्ट प्रा. लि., नई दिल्ली का हार्दिक धन्यवाद ज्ञापित किया।
- ★ संस्थान के उपनिदेशक (राजभाषा) द्वारा केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल द्वारा आयोजित राष्ट्रीय कृषि विज्ञान संगोष्ठी (22–24/4/2010) तथा राष्ट्रीय कृषि वांनिकी अनुसंधान संस्थान, झांसी तथा बुलेंदखंड विश्वविद्यालय, झांसी द्वारा आयोजित राष्ट्रीय कृषि विज्ञान संगोष्ठी (21–23/1/2011) में भाग लिया तथा एक आलेख प्रस्तुत करते हुए, संगोष्ठी के दो सत्रों में प्रतिवेदक की भूमिका का निर्वाह किया।

उपलब्धियां/पुरस्कार व सम्मान:–

उच्च विशेषाधिकार प्राप्त संसदीय राजभाषा समिति (कमेटी ऑफ पार्लियामेंट ऑन ओ.एल) के निर्देशानुसार गठित नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, करनाल द्वारा संस्थान में किए जा रहें राजभाषा कार्यान्वयन संबंधी उल्लेखनीय कार्यकलापों हेतु करनाल स्थित लगभग 70 केन्द्रीय कार्यालयों के मध्य प्रथम राजभाषा पुरस्कार, 2009–10 के लिए श्री प्रदीप टम्टा, माननीय सांसद एवं सदस्य, संसदीय राजभाषा समिति के करकमलों द्वारा दिनांक 25/11/2010 को प्रदान किया गया। निदेशक के प्रतिनिधि के रूप में यह पुरस्कार श्री आर.एस. गौतम सहा.निदेशक (राजभाषा) तथा राजभाषा एकक के स्टाफ ने प्राप्त किया। संस्थान को यह प्रतिष्ठित पुरस्कार पहले भी 5 बार प्राप्त हो चुका है। पुरस्कार प्राप्ति पर संस्थान के निदेशक महोदय ने राजभाषा एकक द्वारा किए जा रहे राजभाषा संबंधी प्रयासों की सराहना करते हुए, समस्त स्टाफ को बधाई दी।

विशेष सम्मान:

इस अवसर पर संस्थान के श्री जे.के.केवलरमानी, सयुंक्त निदेशक (प्रशासन)/कुलसचिव द्वारा विगत कई वर्षो से दिए जा रहे अभूतपूर्व सहयोग के लिए उन्हें लाइफ टाइम एचीवमैंट (जीवन पर्यन्त उपलब्धि) स्वरूप विशेष सम्मान प्रदान किया गया। यह सम्मान उन्हें श्री प्रदीप टम्टा, माननीय सांसद एवं सदस्य, संसदीय राजभाषा समिति गृह मंत्रालय, भारत सरकार के करकमलों द्वारा दिनांक 25/11/2010 को प्रदान किया गया। इस अवसर पर उन्हें सम्मान पत्र सहित शाल भेंट की गई।

राजभाषा मास समारोह–2010

प्रतियोगिता परिणाम सूची

शोध–पत्र एवं पोस्टर प्रदर्शन प्रतियोगिता (14.9.2010)

1. शीर्षकः–

भैंस के शुक्राणुओं में हिमीकरण–हिमद्रवन क्रिया द्वारा प्रवृत गुणसूत्रीय विषाक्ता।

प्रथम

श्री राजकुमार, शोध छात्र, पशु जीव रसायन प्रभाग

श्री अरविन्द, '' '' '' '' ''

श्री विवेक सिंह, '' '' '' ''

सुश्री गुनदीप '' '' '' ''

डा. एस.के.अत्रेजा, पशु जीव रसायन प्रभाग

2. शीर्षकः–

जटिल कशेरूका विकृति रोग का करन फ्रीज पशुओं में पहचान और निवारण

द्वितीय

डा. विजय कुमार, शोध छात्र, श्री यतीश एच एम, श्री माहदी मादीपोर, डा. अश्वनी शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, डा. अवतार सिंह, पशु प्रजनन प्रभाग

3. शीर्षकः–

धान की रूपाई के सीधी बुआई पर एक अध्ययन

तृतीय

डा. दलीप गोसाई, प्रभारी, के.वी.के./डी.टी.सी.

श्री मोहर सिंह, तकनीकी अधिकारी '' ''

4. शीर्षक

सूचना प्रौद्योगिकी द्वारा पुस्तकालय का क्रियाकलाप

प्रोत्साहन– I

1. श्री नरेन्द्र सिंह, तकनीशियन, केन्द्रीय पुस्तकालय
2. श्री बी.पी.सिंह, '' '' '' ''
3. डा. बी.आर.यादव, प्रभारी, '' ''

5. शीर्षकः–

व्हे प्रोटीन हाइड्रोलाईज़ेट्स की प्रतिऑक्सीकारक क्षमता एवं उनका आइसक्रीम में उपयोग

प्रोत्साहन–II

1. सुश्री निधि यादव, शोध छात्रा, डेरी रसायन प्रभाग
2. सुश्री प्रेरणा सैनी, '' ''' ''
3. डा. श्रीमती बिमलेश मान, प्रधान वैज्ञानिक, '' ''
4. श्री राजेश कुमार, शोध छात्र, पशु जीव रसायन प्रभाग

वैज्ञानिक एवं तकनीकी मूल हिन्दी लेखन पुरस्कार योजना वर्ष 2008–09

कमांक	पुस्तक/बुलेटिन/फोल्डर तथा आलेख का शीर्षक	लेखकों के नाम	पुरस्कार की स्थिति	धनराशि (₹)
		पुस्तक लेखन		
1	**डेरी पशु पोषण एवं प्रबन्धन**	डा.एस.के.सिरोही, डा.एस.एस.कुण्डू, डा.सोहनवीर सिंह डा.प्रवीण कुमार, डा.पूनम पाण्डेय	**प्रथम** संयुक्त रूप से	5000.00
		बुलेटिन		
2	**पश्चिम बंगाल में भैंस पालन**	डा. महेन्द्र सिंह, डा. डी.के.शर्मा, डा. आर.ए. डे.	**प्रथम** संयुक्त रूप से	4000.00
3	**डेरी पशु पालन**	डा. खजान सिंह श्रीमती ऋतु चक्रवर्ती, डा. डी.एस.सोही, डा.के.एस.कादियान,	**द्वितीय** संयुक्त रूप से	2500.00
4	**मधु–मक्खी पालन**	डा. सी.जे.जुनेजा,	**तृतीय**	**1500.00**
		आलेख/शोधपत्र		
5	**आधुनिक मिश्रित मत्स्य पालन**	डा. सी.जे.जुनेजा,	**प्रथम**	**3000.00**
6	**भारत में जैविक दूध उत्पादन संभावनाएं एवं जैविक डेरी फार्म प्रबन्धन पद्धत्तियां**	डा.एम. एल. कम्बोज डा.शिवप्रसाद, डा.वी.एस.रैना, डा.सरोज राय	**द्वितीय** संयुक्त रूप से	2000.00
7	**गर्भाधान के लिए समकालिक तकनीक**	डा. आनन्द लक्ष्मी डा. जैन्सी गुप्ता	**तृतीय** संयुक्त रूप से	1500.00
8	**सूक्ष्म जीवों की अद्भूत दुनिया**	डा. ए.के.पुनियां डा. किशन सिंह डा. संजय कुमार	**तृतीय**	1500.00
		फोल्डर आदि के लिए		
9	**लवारे/नवजात पशुओं की देखभाल**	डा. खजान सिंह श्रीमती ऋतु चक्रवर्ती, डा. डी.एस.बरार, डा. एस.के. तोमर	**प्रथम संयुक्त रूप से**	**1500.00**

टिप्पण मसौदा लेखन प्रतियोगिता (20.09.2010)

क्रं०	नाम/पदनाम	प्रभाग/अनुभाग	पुरस्कार की स्थिति	धनराशि (₹)
1.	श्री रामधारी, सहायक	एस आर सी	प्रथम	1100/–
2.	श्री मुकेश कुमार दुआ सहायक	स्था०–2	द्वितीय	800/–
3.	श्री रविकांत सैनी, तक०अधिकारी	पशु जीव रसायन	तृतीय	500/–
4.	श्री बृज किशोर, तक०अधिकारी	एस आर सी	प्रोत्साहन	300/–

राजभाषा ज्ञान प्रतियोगिता (24.09.2010)

क्रं०	नाम/पदनाम	पुरस्कार की स्थिति	धनराशि (₹)
1.	डा. उत्तम कुमार, वरि. तक. अधिकारी, फार्म अनुभाग	प्रथम	1100/–
2.	श्री प्रदीप मुंडेजा, प्रबन्धक, पी एन बी, मण्डल कार्यालय, करनाल	द्वितीय	800/–
3.	श्री ओमप्रकाश गुप्ता, सहा. महाप्रबन्धक (प्रचालन) कार्यालय, महाप्रबन्धक दूरसंचार, करनाल	तृतीय	500/–
4.	श्री अनिल कुमार शर्मा, तक. अधिकारी, के. मृदा लव. अनु. संस्थान, करनाल	प्रोत्साहन	300/–

नकद पुरस्कार योजना (2008–09)

क्रं0	नाम/पदनाम	प्रभाग/अनुभाग	पुरस्कार की स्थिति	धनराशि (₹)
1.	श्री सुरेश कुमार	श्रम कल्याण अनुभाग	प्रथम	800/–
2.	श्री शेर सिंह	नकदी देयक	प्रथम	800/–
3.	श्री संजय कुमार	नकदी देयक	द्वितीय	400/–
4.	श्री मेहर लाल	पुस्तकालय	द्वितीय	400/–
5.	श्री सतीश मीणा	क्रय अनुभाग	द्वितीय	400/–
6.	श्री ओ.पी.मुहाल	फार्म अनुभाग	तृतीय	300/–
7.	डा० उत्तम कुमार	फार्म अनुभाग	तृतीय	300/–
8.	श्री ओमीचंद	डी.सी.एन.	तृतीय	300/–
9.	श्री जगपाल सिंह	फार्म अनुभाग	तृतीय	300/–
10.	श्री शीश पाल गुप्ता	स्वास्थ्य परिसर	तृतीय	300/–

विश्व हिन्दी दिवस (14/9/010) के अवसर पर आयोजित शोध पत्र पोस्टर प्रदर्शन प्रतियोगिता का शुभारम्भ करते हुए डा, आर.एस.शर्मा, प्राचार्य, राजकीय पी.जी. कालेज, करनाल तथा डा. एस.एल.गोस्वामी, संयुक्त निदशक (अनुसंधान)

प्रतियोगिता के अवसर पर विशिष्ट अतिथि डा. आर. एस. शर्मा तथा डा. एस.एल. गोस्वामी, संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) लगाए गए पोस्टरों का अवलोकन करते हुए।

विश्व हिन्दी दिवस समारोह के अवसर पर डा. आर.एस. शर्मा, प्राचार्य, राजकीय पी.जी. कॉलेज, करनाल संस्थान के कार्मिकों को सम्बोधित करते हुए।

संस्थान द्वारा आयोजित विश्व हिन्दी दिवस 14 सितम्बर, 2010 के अवसर पर आयोजित शोध–पत्र पोस्टर प्रदर्शन प्रतियोगिता में संस्थान के कार्मिकों को सम्बोधित करते हुए डा. एस.एल.गोस्वामी, संयुक्त निदेशक अनुसंधान तथा मंच पर बैठे हुए डा. खजान सिंह प्रभारी, राजभाषा एकक व श्री गौतम सहा. निदेशक (रा.भा.)

प्रशासनिक कार्यशाला आयोजन के अवसर पर डा. चन्द्र प्रकाश आर्य, डा. जी.आर. पाटिल, सयुक्त निदेशक (शैक्षिक) तथा डा. खजान सिंह प्रभारी राजभाषा लेखक दीप प्रज्जवलित कर उद्घाटन करते हुए।

संस्थान में राजभाषा मास के अन्तर्गत आयोजित प्रशासनिक कार्यशाला (28/9/2010) के अवसर पर अतिथियों का स्वागत् करते हुए डा. खजान सिंह, प्रभारी, राजभाषा एकक तथा मंच पर आसीन डा. जी.आर पाटिल संयुक्त निदेशक (शैक्षिक), प्रोफे. चन्द्र प्रकाश आर्य, श्री बृजेश यादव, सचिव, नराकास, करनाल व श्री गौतम सहा. निदेशक (राजभाषा)

प्रशासनिक कार्यशाला आयोजन (28.09.2010) के अवसर पर मुख्य व्याख्यान देते हुए डा. चन्द्र प्रकाश आर्य, पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, दयाल सिंह कॉलेज, करनाल तथा मंचासीन संस्थान के अधिकारीगण।

प्रशासनिक कार्यशाला आयोजन के अवसर पर अध्यक्षीय उदबोधन देते हुए डा. जी.आर. पाटिल, संयुक्त निदेशक (शैक्षिक), मंचासीन श्री बृजेश यादव, सचिव, नराकास, करनाल अन्य अधिकारीगण।

संस्थान द्वारा आयोजित मुख्य राजभाषा समारोह 19 अक्टूबर, 2010 के अवसर पर संस्थान के डा. एस.एस. कुण्डू, अध्यक्ष डी.सी.एन. को पुरस्कृत करते हुए डा. ए.के.श्रीवास्तव, निदेशक, डा. रणधीर सिंह, मुख्य वक्ता, डा. एस.एल.गोस्वामी संयुक्त निदेशक (अनु.), डा. जी.आर. पाटिल, संयुक्त निदेशक (शैक्षिक) श्री जे.के. केवलरमानी, संयुक्त निदेशक (प्रशासन)

संस्थान द्वारा आयोजित मुख्य राजभाषा समारोह 19 अक्टूबर, 2010 के अवसर पर श्रीमती ऋतु चक्रवर्ती को पुरस्कृत करते हुए डा. ए.के. श्रीवास्तव, निदेशक, डा. रणधीर सिंह, मुख्य वक्ता, डा. एस.एल.गोस्वामी, डा. जी.आर.पाटिल, (संयुक्त निदेशक) श्री जे.के. केवलरमानी, संयुक्त निदेशक (प्रशासन)

मुख्य राजभाषा समारोह 19 अक्टूबर, 2010 के अवसर पर संस्थान के डा. सी.जे. जुनेजा वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी, के.वी.के. को पुरस्कृत करते हुए डा. ए.के.श्रीवास्तव, निदेशक, डा. रणधीर सिंह, मुख्य वक्ता, डा. एस.एल.गोस्वामी, डा. जी. आर. पाटिल, (संयुक्त निदेशक) श्री जे.के.केवलरमानी, संयुक्त निदेशक (प्रशासन)

मुख्य राजभाषा समारोह 19 अक्टूबर, 2010 के अवसर पर संस्थान के डा. उत्तम कुमार वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी, फार्म अनुभाग को पुरस्कृत करते हुए डा. ए.के. श्रीवास्तव, निदेशक, डा. रणधीर सिंह, मुख्य वक्ता, डा. एस.एल. गोस्वामी, डा. जी.आर.पाटिल, (संयुक्त निदेशक) श्री जे.के. केवलरमानी, संयुक्त निदेशक (प्रशासन)

मुख्य राजभाषा समारोह 19 अक्टूबर, 2010 के अवसर पर संस्थान के शोध छात्रों को पुरस्कृत करते हुए डा. ए.के.श्रीवास्तव, निदेशक, डा. रणधीर सिंह, मुख्य वक्ता, डा. एस.एल.गोस्वामी, डा. जी.आर.पाटिल, (संयुक्त निदेशक) श्री जे.के.केवलरमानी, संयुक्त निदेशक (प्रशासन)

मुख्य राजभाषा समारोह आयोजन के अवसर पर डा. रणधीर सिंह, अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, दयाल सिंह कॉलेज, करनाल मुख्य व्याख्यान देते हुए।

डा. ऐ.के. श्रीवास्तव, निदेशक महोदय, डा. रणधीर सिंह मुख्य वक्ता को स्मृति चिन्ह प्रदान करते हुए।

मुख्य राजभाषा समारोह के अवसर पर डा. ए.के. श्रीवास्तव, निदेशक महोदय, संस्थान स्टाफ को सम्बोधित करते हुए।

मुख्य राजभाषा समारोह के अवसर पर पुरस्कृत वैज्ञानिकों व कार्मिकों तथा निदेशक महोदय, मुख्य वक्ता एवं स्टाफ के साथ।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, करनाल की 52वीं छःमाही बैठक (25.11.2010) के अवसर पर राजभाषा कार्यान्वयन के क्षेत्र में संस्थान का प्रथम पुरस्कार श्री प्रदीप टम्टा, सांसद (लोक सभा) एवं सदस्य, संसदीय राजभाषा समिति, नई दिल्ली से प्राप्त करते हुए श्री जे.के. केवलरमानी, संयुक्त निदेशक (प्रशासन) एंव कुल सचिव तथा स्टाफ, राजभाषा एकक।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, करनाल की छःमाही बैठक आयोजन (25.11.2010) के अवसर पर श्री प्रदीप टम्टा, सांसद एवं सदस्य संसदीय राजभाषा समिति, नई दिल्ली संस्थान के श्री जे.के. केवलरमानी मुख्य प्रशासनिक अधिकारी को जीवन पर्यन्त राजभाषा उपलब्धि का सम्मान प्रदान करते हुए।

संस्थान के राजभाषा निरीक्षण /समीक्षा (17.2.2011) के अवसर पर संस्थान के अधिकारियों एवं कार्मिकों को सरकारी कामकाज राजभाषा हिन्दी में करने का आग्रह करते हुए श्री पुष्प नायक, मुख्य प्रशा. अधिकारी तथा साथ में बैठे हुए श्री गौतम, उपनिदेशक (रा.भा.) सचिव, नराकास करनाल एवं श्रीमती उर्मिला हरित, सहा. निदेशक (रा.भा.) डेयर, भारत सरकार।

पाठकों की प्रतिक्रिया

नमस्कार। आशा है कि आप सपरिवार सानन्द एवं कुशल हैं। आपने कृपापूर्वक मुझे अपने संस्थान की प्रतिष्ठित पत्रिका ''दुग्ध–गंगा'' का अद्यतन अंक भेंट किया। इसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। मैंने इसे आद्योपांत देखा। यह पत्रिका उत्तम स्तर की है। इसका मुद्रण तथा साज–सज्जा आकर्षक तथा सुरूचिपूर्ण है और संकलित सामग्री भी रोचक तथा ज्ञानवर्धक है। दिए गए चित्रों आदि से संस्थान की गतिविधियों का परिचय मिला। शुरू में ही दिए गए आपके निदशक और प्रभारी राजभाषा एकक के संदेश प्रेरणाप्रद लगे। आपका सम्पादकीय भी प्रभावित करता है। सभी लेख आदि बहुत अच्छे लगे। आपका लेख ''शब्द–क्षेत्रे'' विशेष रूप से इस पत्रिका के लिए आपके पास सामग्री और लेखकों की कमी नहीं होगी। कृपया इसे त्रैमासिक अथा अर्धवार्षिक बनाने पर विचार करें।

कृष्ण कुमार ग्रोवर
पूर्व सचिव
संसदीय राजभाषा समिति, नई दिल्ली

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान करनाल की गृह पत्रिका 'दुग्ध–गंगा' का प्रथम अंक हमें प्राप्त हुआ। इसके लिए हार्दिक धन्यवाद। परिषद के विभिन्न संस्थानों में इस तरह की पत्रिकाओं का भारत सरकार की राजभाषा नीति को लागू करने के क्रम में महत्वपूर्ण योगदान है। आपकी यह दुग्ध–गंगा सर्वथा कृषि विज्ञान संदर्भ साहित्य को कृषक समुदाय तक पहुंचाने में पूर्ण रूप से उपयोगी है। मैं पत्रिका प्रकाशन मंडल के सभी सदस्यों की मुक्तकंठ से प्रशंसा करता हूँ।

हरीश जोशी
निदेशक (राजभाषा),भा.कृ.अनु.प., नई दिल्ली

संस्थान की पत्रिका 'दुग्ध–गंगा' का प्रथम अंक प्राप्त हुआ। मैंने इस पत्रिका के सभी आलेख व अन्य सामग्री का पूरी तरह से अध्ययन किया। पत्रिका का स्तर प्रशंसनीय है, इसमें संकलित वैज्ञानिक व तकनीकी जानकारी ज्ञानवर्धक, रोचक व पठनीय है। इसी प्रकार संस्थान के राजभाषा कार्यकलापों के बारे में भी पूरी सूचना दी गई है। यह पत्रिका हर प्रकार से वैज्ञानिकों, संस्थान के अन्य कार्मिकों तथा कृषक समुदाय के लिए उपयोगी है।

डा० ऊषा मौजा
प्रधान वैज्ञानिक, (मात्स्यिकी प्रभाग)
भा.कृ.अनु.प., कृषि अनुसंधान भवन–II नई दिल्ली

दुग्ध–गंगा का प्रथम अंक प्राप्त हुआ हार्दिक धन्यवाद। पत्रिका के माध्यम से सरकारी काम–काज राजभाषा (हिन्दी) में कराने का पुरजोर प्रयास अति प्रशंसनीय है। पत्रिका सर्वथा कृषि विज्ञान संबंधी जानकारी हिन्दी में देने में पूर्णरूप से सक्षम है। संपादक श्री गौतम जी को शत्–शत् साधुवाद।

डा. के.एस.पोसवाल
होम्योपैथी चिकित्सक
मानव स्वास्थ्य परिसर, रा.ड.अनु.स., करनाल

'दुग्ध–गंगा' प्रथम अंक के माध्यम से कृषि की जानकारी को किसानों तक पहुंचाना, वो भी राष्ट्रभाषा हिन्दी में, एक वदंनीय एवं सराहनीय कार्य है। मैं इस प्रयत्न के लिए आपको साधुवाद देता हूँ।

गिरजेश सिंह मेहरा
कृषि प्रसार शिक्षा विभाग (पी.जी.छात्र) काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,वाराणसी

दुग्ध–गंगा का प्रथम अंक प्राप्त हुआ, इस पत्रिका में संकलित आलेख, राजभाषा कार्यकलापों का विवरण तथा फोटोग्राफी व पत्रिका का कलेवर, साज–सज्जा, मुद्रण अन्य सभी प्रकार का कार्य अत्यन्त सराहनीय है। इस पत्रिका में संकलित आलेखों में विश्व की 'द्वितीय क्लोन्ड कटड़ी' गरिमा का जन्म, बेरोजगार युवाओं के लिए स्व–रोजगार हेतु डेरी व्यवसाय, किसान आत्महत्या–उठते सवाल और समाधान सहित अन्य आलेख भी रोचक एवं शोधपरक व ज्ञान वर्धक भी है। इस पत्रिका के माध्यम से संस्थान का सरकारी काम–काज निश्चित रूप से राजभाषा हिन्दी में बढ़ेगा। संपादक मंडल को हार्दिक बधाई।

बृजेश यादव
सहा. निदेशक (धातु अभिसांखिकी)
एम.एस.एम.ई.,विकास संस्थान, भारत सरकार आगरा
एवं पूर्व सचिव, नराकास, करनाल

आपके संस्थान की पत्रिका **दुग्ध–गंगा** का प्रथम अंक प्राप्त हुआ। एतदर्थ हार्थिक धन्यवाद इस पत्रिका को मैंने समग्र रुप से पढ़ा। सभी विषयों की वैज्ञानिक व तकनीकी जानकारियां अति उत्तम एवं बोधयुक्त है। ''भारत की प्रथम क्लोन्ड़ कटड़ी'' आलेख अति रुचिकर लगा। सुन्दर साज–सज्जा से परिपूर्ण पत्रिका सर्वथा उपयोगी एवं संग्रहणीय है। संपादक मंडल के सदस्यों को बधाई तथा अगले अंक की शुभकामना सहित।

केशव देव
सहा. निदेशक (राजभाषा)
भारतीय चरागाह तथा चारा अनुसंधान संस्थान, झांसी

आपके संस्थान द्वारा प्रकाशित दुग्ध–गंगाः 2009–10 पत्रिका प्राप्त हुई। उक्त पत्रिका का प्रत्येक लेख रोचक एवं जानकारी बढ़ाने वाले, विशेषतः ''जनन की कहानी भैंस की जुबानी''–डा० प्रेम सिंह यादव का लेख आत्मविभोर करने वाला था। साथ ही बढ़ते अग्रेंजी प्रचलन के दौर में हिंदी भाषा में प्रत्रिका निकालकर भारत की राष्ट्रभाषा (हिन्दी) का गौरव बढ़ाने, नवोदित लेखकों हेतु सुनहरा मंच प्रदान करने जैसा कार्य किया है, जिसके लिए आप सभी को धन्यवाद। अगले अंक के लिए अनेक शुभकामनाएं।

आलोक कुमार सिंह
कृषि विज्ञान संस्थान, प्रसार शिक्षा विभाग
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

रा०डे०अनु०सं० करलाल के राजभाषा एकक द्वारा प्रकाशित पिछले दुग्ध–गंगा के दोनों अंक मैंने पूरी तरह से पढ़े हैं। इस पत्रिका में प्रकाशित डेरी विज्ञान एवं कृषि से संबन्धित सभी लेख बहुत अच्छे लगे। विशेष रुप से '**विश्व की द्वितीय क्लोन्ड कटड़ी गरिमा** का जन्म किसान आत्महत्या–उठते सवाल और समाधान,शब्द–क्षेत्रे, कोश–क्षेत्रे तथा राजभाषा कार्यकलापों का विवरण की सामग्री विशेष प्रशंसा लायक है। इस पत्रिका से प्रभावित होकर, मैंने भी इस पत्रिका मैं एक लेख आगामी अकं में प्रकाशित कराने का साहस जुटाया है। समग्र रुप से सम्पादक श्री गौतम जी को इस पुनीत कार्य के लिए शत्–शत् धन्यवाद।

महावीर सिंह, प्रगतिशील किसान
ग्राम/पोस्ट–ढ़ाढरथ, जीन्द (हरियाणा)

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान करनाल से प्रकाशित पत्रिका दुग्ध–गंगा का प्रथम अंक 2009–10 देखने को मिला। डेरी अनुसंधान के परिणाम पशुपालकों तक हिन्दी भाषा के माध्यम से पहुँचाने में यह पत्रिका काफी उपयोगी सिद्ध हो सकती है। पत्रिका में प्रकाशित आलेख पशुपालन एवं डेरी व्यवसाय की नवीनतम तकनीकों की जानकारी प्रदान करने में सक्षम हैं। बेरोजगार ग्रामीण युवाओं के लिये भी पत्रिका में मार्गदर्शन दिया गया हैं। डेरी व्यवसाय के समक्ष उठने वाली चुनौतियों से लेकर किसान की आत्महत्या तक कई ज्वलन्त प्रश्नों और उनके समाधान भी आलेखों में समाहित किये गये हैं। राजभाषा से संबंधित आलेख एवं कार्यकलाप पत्रिका को रोचक बनाने में काफी सीमा तक सफल हुए हैं। पत्रिका को आकर्षक बनाने में सम्पादक मण्डल के सदस्यों का योगदान प्रशंसनीय है। पत्रिका के प्रकाशन से संबंधित सभी वैज्ञानिकों, अधिकारियों एवं सम्पादक मण्डल के सदस्यों के इस सार्थक प्रयास की मैं सराहना करता हूँ और आगामी अंकों में इससे भी अधिक उपयोगी सामग्री प्रकाशित करने की आशा करता हूँ।

डा. रामशंकर त्रिपाठी
अध्यक्ष, प्रौद्योगिकी मूल्यांकन एवं प्रसार प्रभाग
केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल

राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

द्वारा प्रकाशित पुस्तकें, फोल्डर, बुलेटिन (2010–11)

क्रं०	पुस्तक/बुलेटिन तथा फोल्डर आदि का नाम	लेखकगण	मूल्य (₹)
1.	गाय–भैंस के शावकों का वैज्ञानिक ढंग से पोषण एवं प्रबंधन	डा. चन्द्र दत्त एवं डा. एस.एस.कुण्डु	100.00
2.	पशु पोषण व प्रबन्धन द्वारा स्वच्छ दूध उत्पादन	डा. (श्रीमती) वीना मणि, डा. (श्रीमती) बिमलेश मान, डा. (श्रीमती) अंजलि अग्रवाल व डा. एस.एस.कुण्डु	75.00
3.	दुग्ध–गंगा	संपादक: उपनिदेशक(राजभाषा)	निशुल्क
4.	कार्य योजना–2010	कृषि विज्ञान केन्द्र/डी.टी.सी.	निशुल्क
बुलेटिन/फोल्डर आदि			
5.	शुष्क काल में प्रतिऑक्सीकारक विरल तत्व संपूर्ण द्वारा गायों की रोग प्रतिरोधक क्षमता कैसे बढ़ाएं	डा. (श्रीमती)अंजलि अगवाल डा. (श्रीमती) हरजीत कौर डा. (श्रीमती) वीना मणि डा. प्रवीन कुमार डा. आशुतोष	निशुल्क
6.	मत्स्य पालन – फोल्डर	डा. सी.जे.जुनेजा	निशुल्क
7.	डेरी पशुओं में मदसमकालीन करने की विभिन्न तकनीकियां	डा. जैन्सी गुप्ता, डा. आनन्द लक्ष्मी, डा. ओ०वी०एस० खोखर	निशुल्क
8.	पशुओं के मद संबंधी जानकारी	डा. जैन्सी गुप्ता, डा. आनन्द लक्ष्मी, डा. ओ०वी०एस० खोखर	निशुल्क
9.	आधुनिक डेरी पशु प्रबन्धन	डा. जैन्सी गुप्ता, डा. ऋतु चक्रवर्ती, डा. आई०डी०गुप्ता, डा. एस.के.झा श्रीमती मृदला उपाध्याय	निशुल्क
10.	दुधारू पशुओं के प्रजनन तंत्र एवं गर्भाशय संबंधी समस्यायें उनके कारण और निवारण	डा० आनन्द लक्ष्मी, डा० अंजलि अग्रवाल डा० जे.पी.सहगल डा० शिव प्रसाद डा० एम.एल.कम्बोज	निशुल्क
11.	भैंसों में जननक्षमता सुधार के लिए ओवसिन्च प्रोटोकॉल का प्रयोगात्मक अनुप्रयोग	डा० बी.एस.प्रकाश डा० डी.के.गोसांई डा० सत्यपाल डा० टी.के.मोहन्ती डा० जे.सी.मार्कण्डेय श्री बृज किशोर	निशुल्क

इजराइल के राष्ट्र बनते ही हिब्रू का प्रयोग

चन्द्र प्रकाश आर्य
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, दयाल सिंह कालेज, करनाल

भारत के स्वतंत्र होने के नौ महीने उपरान्त 14 मई, 1948 का फिलस्तीन के विभाजन स्वरूप इजरायल राज्य की पुनर्स्थापना पश्चात, वहाँ राष्ट्रभाषा का प्रश्न आया। 1800 वर्षो के निर्वासन काल में यहूदियों की प्राचीन भाषा हिब्रू का प्रयोग पत्र–व्यवहार एवं धार्मिक कर्मकाण्ड तक सीमित रह गया था। इजराइल की स्थापना के पश्चात् लाखों की संख्या में 80 देशों के यहूदियों को अपने पुरखों के देश में लाकर बसाया गया। जिन देशो में ये समुदाय रह रहे थे, वहाँ की भाषा बोलते थे। उदाहरणार्थ पोलैण्ड एवं रूस के आने वाले 'थिडीश', फ्रेंच', भारत से आने वाले 'मराठी' एवं 'हिन्दी' आदि। इजराइल में बसने वाले यहूदियों में इस प्रकार एक संवाद हीनता की स्थिति थी। राष्ट्रीय एकता स्थापित करने में भाषा का सर्वोपरि महत्व एवं योगदान होता है।

इजराइल राज्य की स्थापना के तुरन्त पश्चात् हिब्रू को देश की राजभाषा घोषित कर दिया गया तथा चार मास की अवधि की त्वरित कक्षाएं आरम्भ कर दी गयी जिनके द्वारा निवासियों को हिब्रू बोलने एवं लिखने का पूर्ण ज्ञान हो सके। तब वहाँ हिब्रू में सम्पूर्ण कार्य होने लगा। वहाँ विभिन्न देशों की विभिन्न भाषाओं के प्रसिद्ध ग्रन्थ जैसे : दर्शनशास्त्र, समाजशास्त्र, इतिहास, इन्जीनियरिंग, चिकित्सा, धर्म आदि महत्वपूर्ण विषयों की पुस्तकों का हिब्रू में अनुवाद करा लिया गया है। वहाँ विदेशी छात्रों को भी हिब्रू सीखनी पड़ती है क्योंकि उच्च स्तर तक शिक्षण एवं अन्वेषण का माध्यम हिब्रू है। विगत 48 वर्षो में हिब्रू पूर्णतया सम्पन्न भाषा बन गई है जिसमें उच्च कोटि की फिल्में, कविताएं, नाटक एवं साहित्य का सृजन हो रहा है। यहूदियों को अपनी मातृभाषा लिखने एवं बोलने में गर्व की अनुभूति होती है। इजराइल में राष्ट्रीय एकता स्थापित करने में हिब्रू भाषा का विशेष योगदान रहा है।

आजादी के बाद सैकड़ों वर्षो की दासता के चिह्नों को इजराइल ने मिटा दिया है। सड़कों, नगरों, गाँवों यहाँ तक कि वहाँ के निवासियों तक ने अपने नाम हिब्रू भाषा में रख लिए जिससे एक भाषा एवं एक राष्ट्र का बोध होता है।

हम भारतवासी भी स्वतन्त्रता 64वें वर्ष में राष्ट्र भाषा के संदर्भ में गम्भीरता से सोचें। सभी मंत्री, सांसद, विधायक, वैज्ञानिक, उच्च अधिकारी, कर्मचारी, प्रोफेंसर, अध्यापक, वकील, डॉक्टर, इंजीनियर, उद्योगपति और व्यापारी आदि राष्ट्र भाषा के व्यवहार पक्ष को सबल बनाने में जुट जांए। इस प्रकार स्वतन्त्र राष्ट्र के स्वाभिमानी नागरिक होने का सबूत दें। इसके लिए एक–दूसरे की पहल की प्रतीक्षा न करके स्वयं पहल करें। अकेले चलें। सह–यात्री उपने आप मिलते जाएंगे।

❋ ❋ ❋ ❋ ❋

विश्व का सबसे बड़ा भाषाई सर्वेक्षण

देश की विलुप्त प्राय भाषाओं के बारे में जानकारी हासिल करने के लिए मैसूर के केन्द्रीय भारतीय भाषा संस्थान ने भाषाई सर्वेक्षण कराने का फैसला लिया है। संभवतः यह विश्व में सबसे बड़ा भाषाई सर्वे होगा। योजना आयोग की ओर से इस सर्वे को स्वीकृति मिल गई है और इस प्रोजेक्ट के लिए 588 करोड़ रुपये भी स्वीकृत हो चुके हैं। सीआईआईएल के निदेशक, डा. उदय नारायण सिंह ने बताया कि इस सर्वेक्षण में 400 रिसर्चस्कालर और 170 भाषा विशेषज्ञ शामिल होंगे और इन्हें सीआईआईएल के परिसर में 21 मई से 30 जून, 2010 तक प्रशिक्षण दिया गया है। इस परियोजना पर जुलाई के बाद काम शुरु हो गया है, उन्होंने बताया कि यूनेस्को के दबाव बनाने के बाद इस पर काम शुरु किया गया। यूनेस्को ने बायो–मैथेमेटिकल तरीके से गणना करके अनुमान निकाला था कि दुनिया में बोली जाने वाली छह हजार भाषाओं में से लगभग 4,400 भाषाएं आगामी पचास सालों में नष्ट हो जाएगी। डा. सिंह ने कहा कि भारत में पहला भाषाई सर्वे सर जार्ज अब्राहम गिर्यसन के नेतृत्व में वर्ष 1898 से1927 के बीच कराया गया था, इसमें कुछ त्रुटियां होने के नाते दूसरा सर्वेक्षण कराया जाना जरुरी है। पहला सर्वेक्षण गैर–प्रशिक्षित व्यक्तियों द्वारा कराया गया था, इसीलिए इस बार अनुसंधान में शामिल विशेषज्ञों को विशेष प्रशिक्षण देने की योजना बनाई गई है। डा. सिंह ने कहा कि इस नए सर्वेक्षण में हम इस बात का भी अध्ययन करेंगे कि समय के साथ भाषाओं में क्या बदलाव आया है?

संदर्भः अमर उजाला मई, 2010